मेरी यात्रा
(वीतरागता की ओर)
मुनि ताराचन्द

संपादक
मुनि सुमतिकुमार

जैन विश्व भारती प्रकाशन

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

प्रकाशक :
आदर्श साहित्य विभाग
जैन विश्व भारती
पोस्ट : लाडनूं-341306
जिला : नागौर (राजस्थान)
फोन : 01581-226080/224671
E-mail: books@jvbharati.org

Books are available Online at
https://books.jvbharati.org

© जैन विश्व भारती

पंचम् संस्करण : मार्च, 2021 ई. (प्रतियां : 500)

मूल्य : दो सौ रुपये मात्र

मुद्रक : सांखला प्रिंटर्स, विनायक शिखर
शिवबाड़ी रोड, बीकानेर 334003

MERI YATRA VITRAGTA KI AUR By Muni Tarachand ₹ 200

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अर्हम्

जन्म लेना एक सामान्य बात है। कलापूर्ण जीवन जीना विशेष बात होती है। जो आदमी संयम और परोपकार से युक्त जीवन जीता है, वह स्वयं धन्य बन जाता है।

शासन गौरव मुनिश्री ताराचन्दजी स्वामी हमारे धर्मसंघ के एक असाधारण संत हैं। उनकी साधना, स्वावलम्बिता, शासननिष्ठा और व्यवहारकुशलता वैशिष्ट्य लिए प्रतीत हुई। परम पूज्य गुरुदेवश्री तुलसी, आचार्यश्री महाप्रज्ञजी का उन पर कृपाभाव था और मेरे लिए तो वे विशेष सम्मान्य हैं। उनकी आत्मकथा से पाठकों को साधना की संप्रेरणा प्राप्त हो, शुभाशंसा।

2 दिसम्बर, 2016, उमलिंग (मेघालय) **आचार्य महाश्रमण**

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

संपादक की कलम से

शिष्य ताराचन्द! तुम्हारी साधना में मुझे अधिक आकर्षण इसलिए है कि तुम एकांगी बनकर नहीं, अन्यान्य संघीय साधनाओं के साथ- साथ ध्यान रसिक भी हो। **आचार्य तुलसी**

मुनि ताराचन्दजी ने साधना का कंबल नहीं ओढ़ा है,किन्तु उसका जीवन जीया है। उनकी प्रकृति और प्रवृत्ति को आरम्भ से मैं जानता रहा। प्रकृति में सहज विनम्रता और प्रवृत्ति में सहज जागरूकता दोनों उन्हें उपलब्ध हैं। दूर रहते हुए भी वे सदा हमारे निकट हैं। **आचार्य महाप्रज्ञ**

'शासन गौरव' मुनिश्री ताराचन्दजी स्वामी, हमारे धर्मसंघ के एक असाधारण संत है। उनकी साधना, संघनिष्ठा और व्यवहार कौशल ने धर्मसंघ के आचार्यों को भी आकृष्ट किया है। **आचार्य महाश्रमण**

मुनिश्री ताराचन्दजी! आपने अपने समर्पण भाव के बल पर गुरु का अगाध विश्वास अर्जित किया है।

साध्वीप्रमुखा कनकप्रभा

इन संदेशों को पढ़कर यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि ऐसे संदेशों को प्राप्त करने वाला शिष्य कितना भाग्यशाली होता है।

शासन गौरव मुनिश्री ताराचन्दजी स्वामी तेरापंथ धर्मसंघ का जाना-पहचाना नाम है। आपकी जीवनशैली जहां एक और आचार्यों की प्रशंसा का विषय बनीं, वहीं दूसरी और चतुर्विध धर्मसंघ के लिए प्रेरणास्रोत भी बनी रही। मुनिश्री की जीवनी प्रकाशित होनी चाहिए, यह सुझाव अनेकों लोगों ने मुझे दिया। श्रद्धेया साध्वीप्रमुखाश्रीजी ने भी मुझे फरमाया–'क्या मुनिश्री की जीवनी लिख रहे हो?' तत्पश्चात् मैंने मुनिश्री को निवेदन किया। मुनिश्री ने कृपा करवाई। स्वयं अपनी जीवनी लिखी।

'रहे भीतर, जीएं बाहर' आचार्य महाप्रज्ञ द्वारा प्रदत्त इस सूत्र के आधार पर मुनिश्री ने अपना जीवन जीया। मुनिश्री का जीवन निश्चय व व्यवहार नय का संगम स्थल रहा। अपने जीवन के आठवें दशक में भी वे सुदूर प्रांतों की यात्रा पर यात्रायित रहे। इस यायावर जीवन में उनका संघीय पक्ष तो मुखर रहा ही है, पर साथ-साथ वे अपने व्यक्तिगत साधना के संदर्भ में भी सदैव जागरूक रहे। जीवन की उत्तरार्ध अवस्था में उन्होंने अपने निवृत्ति प्रधान जीवन को और गति प्रदान की।

मुनिश्री की जीवनी एक अंतर्मुखी साधक की जीवनी है। यह जीवनी मुनिश्री ने स्वयं लिखी है। स्वयं की लिखी हुई जीवनी में प्राण होते हैं। लेखन के पश्चात् कुछ लोगों ने इस जीवनी को पढ़ा। प्रायः सभी की यह टिप्पणी रही कि जीवनी बड़ी सरस है। लेखक के लिए यह एक बहुत बड़ी चुनौती होती है कि वह अपने आपको एक खुली पुस्तक की तरह प्रस्तुत करे। अतः आत्मकथा लिखना एक कठिन कार्य माना जाता है। अपनी इस जीवनी में मुनिश्री ने इसी कसौटी पर खरा उतरने का प्रयास किया है। अतः यह जीवनी प्राणवान् प्रतीत हो रही है।

मुनिश्री के व्यक्तित्व का एक आकर्षक पहलू है- आपका स्वास्थ्य। जीवन के नौवें दशक में भी आप युवकों की तरह ऊर्जस्वल है। इसका मूल कारण है–आपकी प्रेक्षा-प्रयोगों के प्रति निष्ठा। पाठक मुनिश्री की आत्मकथा पढ़कर प्रेक्षाध्यान के प्रयोगों को अपने जीवन में स्थान दें, यह अभीप्सित है।

मुनिश्री के साधनामय जीवन का उत्तर साधक बनने का अवसर मुझे मिला-इसे मैं अपना सौभाग्य मानता हूं। जीवनी संपादन का कार्य भी उसी के अंतर्गत है। इस जीवनी के लिए परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर ने अपना संदेश प्रदान किया–इसके लिए मैं उनके प्रति श्रद्धानत हूं। मेरे निवेदन पर श्रद्धेय मंत्रीमुनिश्री ने जीवनी की भूमिका लिखी, तदर्थ कृतज्ञ हूं। इसमें मुनिश्री उदितकुमारजी की सक्रिय भूमिका रही, तदर्थ उनके प्रति भी कृतज्ञता। संपादन के इस कार्य में मुझे अपने दोनों सहयोगी संतों, मुनि देवार्यकुमारजी एवं मुनि आदित्यकुमारजी का सर्वाधिक सहयोग मिला। इस क्रम में शासनश्री मुनिश्री सुखलालजी स्वामी, मुनिश्री मोहजीतकुमारजी, मुनिश्री धनंजयकुमारजी, मुमुक्षु डॉ. शांता जैन ने जीवनी को आद्योपान्त पढ़कर अपने अमूल्य सुझाव दिए, तदर्थ यथायोग्य कृतज्ञता व अहोभाव! इस जीवनी के कंपोजिंग में महाप्रज्ञ अध्यात्म एण्ड एज्यूकेशनल फाउण्डेशन, सरदारशहर के संयुक्त सचिव श्री प्रमोदजी आंचलिया, श्री राजकुमारजी श्यामसुखा व भाई विनीत पींचा का सक्रिय सहयोग प्राप्त हुआ। जीवनी प्रकाशन हेतु श्री दिलीपजी सरावगी (मुम्बई) की भावना साकार हुई। इन सभी के प्रति आध्यात्मिक मंगलकामना!

21 अक्टूबर, 2016, तेरापंथ भवन, सरदारशहर। **मुनि सुमतिकुमार**

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

❖ इष्टेभ्यो नमः ❖

जैन साधना का लक्ष्य ईश्वर से मिलना या ईश्वर में विलीन होना नहीं, ईश्वर बनना है। भगवान से मिलना नहीं, भगवान बनना है। राग-द्वेषयुक्त चेतना आत्मा है तथा राग-द्वेषमुक्त चेतना परमात्मा है।

साधक की साधना-उपासना का लक्ष्य है–स्वयं को राग-द्वेष से मुक्त बनाना। जब तक आवरण से चेतना आच्छन्न है, तब तक राग-द्वेष का उस पर प्रभाव रहता है। उसके अंकन के प्रकार भी समूह में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में अहं को उभारने वाले ही होते हैं।

साधना से चेतना का ऊर्ध्वारोहण होता है, तब ये अंकन के मानक बच्चों के खिलौने प्रतीत होने लग जाते हैं।

❖ ऊर्ध्वारोहण की पहली स्टेज है–अप्रमत्तता, जागरूकता।

❖ दूसरी स्टेज है–कषायमुक्तता, वीतरागता।

❖ तीसरी स्टेज है–सर्वज्ञता।

❖ चौथी स्टेज है–योगमुक्तता-अक्रियता।

वीतराग बनने के बाद आगे की भूमिकाएं सहज ही प्राप्त हो जाती हैं। अवरोध वीतराग बनने से पहले ही आते हैं, बाद में नहीं, इसलिए साधना का लक्ष्य वीतराग बनना होता है।

'शासन गौरव' मुनि ताराचंदजी का जीवन इस बात का साक्षी है कि वे किस प्रकार वीतरागता की ओर पुरुषार्थ कर रहे हैं। बचपन से आज तक का प्रयास अविराम, अविश्राम व अनवरत लक्ष्य की ओर गतिमान है।

करणी माता के धाम देशनोक व सुंदर बसावट के लिए प्रसिद्ध नोखा मंडी के मध्य एक कस्बा है–रासीसर। वहां ओसवाल जैन कुल चोरड़िया परिवार में आज से 87 वर्ष पूर्व आपका जन्म हुआ। ग्रामीण बच्चों के साथ बचपन बीता। पिताजी की मृत्यु ने आपको झकझोरा। प्रारंभ में साध्वियों के द्वारा आपमें वैराग्य का बीजारोपण हुआ। फिर संतों का योग मिला, विरक्ति को विशेष अभिसिंचन मिला। पारिवारिकजनों की कसौटी पर खरे उतरने पर आपको दीक्षा की अनुमति मिली। वि. सं. 2000, भाद्रपद मास में गुरुदेव आचार्यश्री तुलसी के मुखारविंद व करकमलों से दीक्षा संपन्न हुई।

उतार-चढ़ाव जीवन का अविनाभावी क्रम है। आप भी उसमें अपवाद नहीं बने। आत्मपुरुषार्थ से आगे बढ़ते रहे, जीवन के किसी भी मोड़ पर रुके नहीं। नए उन्मेष उभरते रहे, आध्यात्मिक अनुभवों से खजाना भरते रहे। धर्मसंघ में आज भी वीतराग साधना को समर्पित व समृद्ध साधक के रूप में उनकी पहचान बनी हुई है।

साधना जगत में एकाकी साधना और संघबद्ध साधना प्रचलित है। आपने संघीय साधना को अपनाया। संघीय दायित्व वहन करते हुए विशिष्ट साधना में अपना पुरुषार्थ नियोजित किया और आगे बढ़ते रहे। आपने आचार्यों के चिंतन को सदैव प्राधान्य दिया।

आचार्यश्री महाश्रमण युग में विशिष्ट साधना करने वालों में मेरी दृष्टि में आप प्रथम पंक्ति में हैं। आपके सौम्य व सहज व्यवहार ने आचार्यों को प्रभावित किया। आचार्यत्रय की एक समान कृपा आपको प्राप्त रही है। ऐसा किसी-किसी को ही सौभाग्य से मिलता है।

'शासन गौरव' मुनिश्री ताराचंदजी ने अपनी आत्मकथा 'मेरी यात्रा (वीतरागता की ओर)' का आलेखन किया है। सहज, सरल भाषा में अपने जीवनगत अनुभवों को संजोया है। आत्मकथा को पढ़कर यह स्पष्ट अनुभव होता है कि मुनिश्री प्रयोगधर्मी, आत्ममुखी, व्यवहारकुशल, प्रमोदभाव व दृढ़ संकल्प के धनी हैं। आपने अपने जीवन में साधना के अनेकानेक प्रयोग किए हैं। अभी भी आप अपनी साधना में निरत हैं। हमने सरदारशहर में 'शासन गौरव' तथा मुनि सुमतिकुमारजी के साथ सन् 2014 की महावीर जयंती के अवसर पर सहप्रवास किया। उस समय महावीर जन्म कल्याणक पर प्रारंभ हुई आपकी विशिष्ट साधना सुव्यवस्थित चल रही है।

मुनि ताराचन्दजी को संतों का समीचीन सुयोग मिला है। दीक्षा लेने के पश्चात् कुछ ही महीनों के भीतर मुनि सुमतिकुमारजी गुरुकृपा से आपकी छत्रछाया में आए। सामान्य सहवर्ती, व्यवस्थाकुशल सहवर्ती, सह-अग्रणी व अभी अग्रणी हैं। इसके बावजूद

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

एक विनम्र पुत्र की भांति मुनिश्री की हर प्रकार की सेवा और व्यवस्था में पूर्ण सजग हैं। अध्ययनशील मुनि देवार्यकुमारजी भी लंबे समय से सेवारत हैं। आपके ही करकमलों से दीक्षित मुनि आदित्यकुमारजी को भी आपकी सन्निधि संप्राप्त है।

वीतरागता की ओर सलक्ष्य गतिमान 'शासन गौरव' मुनिश्री ताराचंदजी की साधना के प्रति अहोभाव प्रकट करता हूं। आचार्यश्री महाश्रमण के शासनकाल में आप अपनी साधना का आलोक फैलाते रहें।

अनुभवों से समृद्ध '**मेरी यात्रा : वीतरागता की ओर**' आत्मकथा से मुनिश्री के जीवन से प्रेरणा प्राप्त होगी और वीतरागता की दिशा में प्रस्थित होने का संकल्प जगेगा, ऐसा विश्वास है।

18 अक्टूबर, 2016, **मंत्री मुनि सुमेरमल (लाडनूं)**
तेरापंथ भवन, रोहिणी, दिल्ली।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

प्रथम खंड

जन्म और परिचय

मेरा जन्म वि.सं. 1987, माघ शुक्ला एकम, 19 जनवरी 1931 को बीकानेर जिले के अन्तर्गत रासीसर गांव में हुआ। पिताश्री का नाम रुघलालजी चोरड़िया और मातुश्री का नाम मोतीदेवी चोरड़िया था। संसारपक्षीय 6 भाई तथा तीन बहिनें थीं। छह भाइयों में मेरा चौथा नंबर था। व्यवसाय की दृष्टि से पिताजी और तीन बड़े भाई बंगाल, असम रहते थे। वे समय-समय पर देश (राजस्थान) आते-जाते रहते थे।

संस्कार

प्रसिद्ध उक्ति है 'जिस घर के बच्चे संस्कारी, वह घर नारी का आभारी।' माताजी के कारण घर का वातावरण धर्म से आप्लावित था। इसलिए सहज ही हम सभी भाई-बहिनों में धर्म के संस्कार अंकुरित होते गए। समय-समय पर साधु-साध्वियों का गांव में आना-जाना तथा कुछ दिनों का प्रवास भी होता ही था, जिससे संस्कारों को पुष्ट होने का अवसर मिल जाता।

आत्मजागृति का प्रथम क्षण

मैं लगभग नौ वर्ष का था। पिताजी गांव आये हुए थे। गर्मी का मौसम था। अचानक उनकी तबीयत बिगड़ गई। उस समय गांवों में चिकित्सा उपलब्ध कहां थी? माताजी अपने अनुभवों के आधार पर कुछ उपचार कर रही थीं। सायंकाल का समय था। किसी के घर शादी के प्रसंग में हम परिवारवाले निमंत्रित थे। उस दिन बड़ी बहिन भी देशनोक-ससुराल से आई हुई थीं। भाभीजी घर पर ही थीं। पिताजी की अस्वास्थ्य की स्थिति को देख हमको खाने के लिए जाना अच्छा नहीं लगा। उस घर से फिर बुलावा आया, तब मां ने कहा–'तुम जाओ, खाना खाकर जल्दी आ जाना।' हम गए, वापस आए तब तक तो पिताजी स्वास्थ्य के नाजुक दौर से गुजर रहे थे। संभवत: मां ने नवकार मंत्र आदि जरूर सुनाए होंगे। गांवों में नाड़ी के ज्ञाता कुछ वृद्ध व्यक्ति मिल जाते थे। कोई व्यक्ति आया और अपना निर्णय दे दिया कि अब सेठजी नहीं रहे। घर में कोहराम-हाहाकार मच गया। सूर्य अस्तांचल की ओर चला गया था। वह रात क्या? हमारे लिए भयंकर डरावनी काली-पीली रात ही बन गई थी। शव यात्रा की सारी तैयारियां गांव वाले कर चुके थे। लोग इकट्ठे हो गये थे।

मैं चिल्लाता हुआ बाहर चला गया

सूर्योदय हुआ। मुझे कहा गया कि यहां पर भाइयों में तुम ही बड़े हो इसलिए मुखाग्नि तुमको ही देनी है, साथ चलो। मैं अपने हाथों से पिताजी को नहीं जलाऊंगा, यह कहता हुआ, रोता-चिल्लाता हुआ घर से बाहर निकल गया। श्मशान ही नहीं गया। मृत्यु के बाद जो भी उस समय करने का समाज में प्रचलन था, वह सब किया गया। बड़े भाई श्री तेजकरणजी चोरड़िया आदि पारिवारिकजन पहुंच चुके थे। मां की स्थिति बड़ी विचित्र बन रही थी। उनका दु:ख हमसे देखा नहीं जा रहा था। बार-बार घर से बाहर चले जाते। कुछ दिनों तक मां का स्नेह-प्यार नहीं मिलने पर हम छोटे भाइयों का जीवन नीरस जैसा बन गया था।

वैराग्य के अंकुर

मां की सहज स्थिति बनने में लगभग एक वर्ष तो लग ही गया होगा। वर्षों तक पिताजी की मृत्यु की वह रात मेरे दिल-दिमाग में छाई रही। मैं मन ही मन पूछता कि यह मृत्यु क्या है? पिताजी कहां चले गए? क्या अब कभी आयेंगे ही नहीं? उनको जलाया गया, उस समय क्या उनको पीड़ा नहीं हुई? आदि। जब मां की सहज स्थिति बनी, तब मैं ये सारे प्रश्न उनसे पूछता और मां उनका निराकरण करती। कहना चाहिए कि पिताजी की मृत्यु ने मेरी मुनि दीक्षा की अव्यक्त भूमिका तैयार कर दी।

आचार्यश्री तुलसी ने कृपा कर वि.सं. 1999 का रासीसर गांव में प्रथम चतुर्मास साध्वीश्री वृद्धांजी (बोरज) आदि छह साध्वियों का फरमाया। प्रथम चतुर्मास की प्रसन्नता में सभी आबालवृद्ध तीनों समय व्याख्यान आदि से तथा त्याग-तप द्वारा लाभान्वित हो रहे थे। उनमें मैं भी एक था। कहानियों के माध्यम से होने वाले व्याख्यान हम बच्चों को रुचिकर लगते थे। इसके अतिरिक्त अग्रगण्या साध्वीजी स्वयं हम बच्चों-किशोरों को बातचीत के माध्यम से विशेष प्रेरणाएं देती। उनका भी असर मेरे पर पड़ा। मैं कहने लगा–'मुझे साधु बनना है। आचार्यश्री के पास दीक्षा लेनी है।'

इसी चतुर्मास से पूर्व ग्रीष्मकाल में बीकानेर चतुर्मास करने वाले तीन संतों का प्रवास रासीसर में हुआ। उन्होंने भी कहानियों, चित्रों आदि के माध्यम से संसार की असारता बतलाई। पिताजी की मृत्यु का दृश्य मेरे दिमाग में पहले से था ही। ये सब वैराग्य के ऐसे निमित्त बने कि भावना उत्तरोत्तर वर्धमान होती गई।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

प्रथम बार गुरुदर्शन

साध्वीश्री की विशेष प्रेरणा से उसी चतुर्मास में मामाजी श्री हनुमानमलजी सेठिया (गंगाशहर), मां और मैं तीनों चूरू पहुंचे। वहां गुरुदेव श्री तुलसी चातुर्मासिक प्रवास कर रहे थे। जीवन में पहली बार गुरुदर्शन कर मन बहुत प्रफुल्लित हुआ। वहां पर छोटे-छोटे संतों को देखकर मन-मयूर नाच उठा। दीक्षा का भाव भी पुष्ट बना।

वैराग्य की परीक्षा

उस समय यह क्रम था कि हर वैरागी पहले मंत्री मुनिश्री मगनलालजी के पास पहुंचता। वे परीक्षा लेते, फिर जैसा लगता वैसा गुरुदेव को निवेदन करते। हम तीनों ने मंत्री मुनिश्री मगनलालजी के दर्शन किए। उन्होंने पारिवारिक परिचय के बाद मुझे पूछा–'पढ़ाई कितनी की? दीक्षा क्यों लेना चाहते हो?' साधु जीवन के परीषह से व तेरापंथ के अनुशासन से अवगत कराते हुए उन्होंने पूछा–'क्या तुम यह सभी सहन कर लोगे?' मैंने अपने ढ़ंग से प्रश्नों के उत्तर दिए और अन्य बातों को स्वीकार किया। अन्त में उन्होंने कहा–'कल प्रात: प्रवचन के समय आचार्यश्री को अपना निवेदन कर देना। मैं भी वहीं रहता हूं।'

बेटे की भिक्षा स्वीकार करें

निश्चित कार्यक्रमानुसार हम प्रवचन सभा में पहुंचे। मैंने और मामाजी ने गुरुदेव के सामने उपस्थित होकर मुनि दीक्षा की प्रार्थना की। मां अपने स्थान पर खड़ी होकर बोली–'गुरुदेव! मैं अपने छह बेटों में से एक बेटे को बहराना चाहती हूं। आप कृपा कर बेटे की भिक्षा स्वीकार करें।' मां इस प्रकार निर्भयता से बोली कि सारी सभा का ध्यान उनकी ओर आकर्षित हो गया। मैं आचार्यश्री के चरणों में नत था। उन्होंने वैराग्य के बारे में कुछ पूछा। मैंने एक ग्रामीण बालक की भाषा में उत्तर दिया। मंत्री मुनिश्री ने भी खड़े होकर आचार्यश्री को कुछ निवेदन किया।

भिक्षा स्वीकार हो गई

आचार्यप्रवर ने अपने प्रवचन के मध्य कहा–'ऐसी कोई मां है, जो अपने पुत्र की भिक्षा दे? भोजन-पानी, वस्त्र-पात्र, औषध आदि की भिक्षा देने वाले बहुत मिलते हैं, किंतु पुत्र की भिक्षा देने वाली माताएं कितनी हैं? देखिए–इस मां का मनोबल, धर्मबल कितना प्रबल है। मैं आज ही इस मां की भिक्षा स्वीकार करता हुआ इस किशोर-बालक ताराचन्द को साधु प्रतिक्रमण सीखने का आदेश देता हूं।' इसके साथ ही प्रवचन पंडाल जय-जयकारों से गूंज उठा। उस समय के शब्द थे–खम्माघणी-खम्माघणी, अन्नदाताधिराज ने घणी-घणी खम्मा, घणी-घणी खम्मा। मेरी खुशी का पार नहीं था। आचार्यश्री के श्रीचरणों में सिर रखकर वंदना की। मंत्री मुनिश्री आदि संतों को वंदन किया। कुछ दिन उपासना कर गांव आ गए। साध्वीश्री आदि साध्वियों के दर्शन किए और वहां का सारा घटनाक्रम बताया। साध्वियां भी बहुत प्रसन्न हुई। उनके पास साधु प्रतिक्रमण सीखना प्रारंभ कर दिया।

मैं दीक्षा देखने गया

चूरू, कार्तिक माह में 28 मुनि दीक्षाएं होने वाली थी। उनमें गंगाशहर के भी दीक्षार्थी थे। मैं भी उनके साथ दीक्षा देखने चला गया। भाईजी तेजकरणजी असम में थे। उनको किसी ने सूचना भेज दी कि ताराचन्द की दीक्षा चूरू में होने जा रही है। तत्काल वे चूरू पहुंचे। मुझसे मिले, पूछा–'क्या तुम्हारी दीक्षा हो रही है?' मैंने कहा–'नहीं, आपकी स्वीकृति के बिना मेरी दीक्षा कैसे हो सकती है? मैं तो यहां दीक्षा देखने के लिए ही आया हूं।' दीक्षा होने के बाद वे मुझे रासीसर ले गए।

मां को उपालंभ

मां के सामने अपनी नाराजगी व्यक्त करते हुए बोले–'हमने बालकों को यहां इसलिए रखा है क्या? आप सबको दीक्षा के लिए तैयार कर दो। अभी ये दीक्षा के बारे में क्या समझते हैं? आदि।' मां ने बहुत ही शांत भाव से कहा–'तेजकरण! मैंने किसी को तैयार नहीं किया है। साधु-साध्वियों के सम्पर्क से यह हुआ है। अपने परिवार से कोई मुनि बनना चाहता है तो हमें तो खुश होना चाहिए। दूसरी बात–केवल मेरी आज्ञा से ही दीक्षा नहीं हो सकती। पिता के स्थान पर अब तुम हो। तुम्हारी आज्ञा की भी आवश्यकता रहेगी।' उसी मुद्रा में वे बोले–'मुझे दीक्षा नहीं देना है। इसको अभी मेरे साथ ही परदेश (असम) ले जाऊंगा।' भाईजी ने मुझे परदेश ले जाने के लिए अनेक प्रकार से समझाया, कुछ प्रलोभन भी दिए, पर साध्वियों ने मुझे इतना दृढ़ बना दिया कि उनके बार-बार कहने पर भी मैं जाने के लिए तैयार नहीं हुआ और भाईजी मुझे दीक्षा की आज्ञा देने के लिए तैयार नहीं हुए।

प्रथम बार पैदल यात्रा

साध्वियों के सान्निध्य में प्रतिक्रमण आदि कंठस्थ करने का मेरा क्रम सुचारू रूप से चल रहा था। स्कूल जाना पहले से ही बन्द था। चतुर्मास की संपन्नता के साथ ही साध्वियों का गुरु दर्शनार्थ विहार हो गया। आचार्यश्री चूरू से सरदारशहर पधारे। साध्वियों ने भी अपना लक्ष्य सरदारशहर में दर्शन कर लेने का बनाया। रास्ते की सेवा की दृष्टि से रासीसर श्रावक समाज ने व्यवस्था की। रास्ते की सेवा में मैं भी संभागी बना। जीवन में एक नया अनुभव हो रहा था। सकुशल सरदारशहर पहुंच गए। गुरुदर्शन के साथ (लगभग पांच-सौ)

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

साधु-साध्वियों के दर्शनों का लाभ मिला। रासीसर वाले और तो सभी रवाना हो गए। मैं गुरुदेव की सेवा-उपासना में रह गया, क्योंकि मेरी संसारपक्षीया मौसीजी का डेरा वहां था।

गुरुदेव के साथ पैदल यात्रा

सरदारशहर से मोमासर, आड़सर होते हुए आचार्यश्री मर्यादा महोत्सव के लिए श्रीडूंगरगढ़ पधारे। मैं भी साथ में पैदल चला। गुरुदेव कभी-कभी पूछ लेते–'थकान तो नहीं आई? सर्दी लगती है क्या?' गुरुदेव के पूछने मात्र से मैं तो बाग-बाग हो जाता। उस अवसर पर मेरी संसारपक्षीया मां भी आचार्यश्री की सेवा-दर्शन करने आ गई। जब मैंने आचार्यश्री के साथ की पैदल यात्रा के अनुभव सुनाए तो मां बहुत प्रसन्न हुई। मर्यादा महोत्सव तक गुरुदेव की उपासना कर मां के साथ मैं पुन: रासीसर आ गया।

ननिहाल में रहने लगा

आचार्यश्री का वि.सं. 2000 (सन् 1943) का चतुर्मास गंगाशहर में घोषित था। मेरा ननिहाल गंगाशहर में था। धार्मिक अध्ययन के लिए मैं अधिकांशत: गंगाशहर, ननिहाल में रहने लगा, क्योंकि वहां साधु-साध्वियों का प्रवास प्राय: रहता था। आचार्यश्री के गंगाशहर चातुर्मासिक प्रवेश के बाद पूरा चोखला लाभान्वित हो रहा था। वहां पर लगभग 10-12 वैरागियों का संगम हो जाने से एक नया ही वातावरण निर्मित हो गया। हमारा एक साथ गुरुदर्शन करना, प्रवचन सुनना, दीक्षा की अर्ज करना आदि लोगों के लिए एक नया आकर्षण का विषय बन गया। आचार्यश्री ने भाद्रपद शुक्ला 13 को दीक्षा महोत्सव की घोषणा की। दीक्षा का विशिष्ट वातावरण बन गया। दीक्षार्थी भाई-बहिनों की प्रार्थना शुरू हो गई। अनेक भाई-बहिनों को दीक्षा का आदेश हो गया।

भाईजी की आज्ञा मुश्किल से मिली

मैंने भी आचार्यश्री एवं मंत्रीमुनि को दीक्षा के लिए प्रार्थना की। मेरे निवेदन करने पर मंत्री मुनिश्री मगनलालजी ने कहा–'देखो, तुम्हारी दीक्षा हो सकती है, किंतु पिता के स्थान पर बड़े भाई होते हैं, इसलिए उनकी आज्ञा भी जरूरी है। तुम्हारी मां की ओर से तो कोई दिक्कत है ही नहीं। इस पर तुम ध्यान दो।' मैं उसी दिन रासीसर गया। मां को सारी बातें बतलाईं। मां ने कहा–'तेजकरण आने वाला तो है, उसको आने दो, फिर बात करेंगे। यदि दीक्षा की बात करेंगे तो वह आयेगा ही नहीं।' मैंने धैर्य रखा। संवत्सरी से पहले ही भाईजी आ गए। उस वर्ष रासीसर में तपस्वी मुनिश्री उगमराजजी आदि तीन संतों का चतुर्मास था। उन्होंने समझाया, मां ने भी कहा। मेरे कहने से भाभीजी ने भी भाईजी को समझाने का प्रयत्न किया, किन्तु वे आज्ञा देने के लिए तैयार नहीं हुए। संवत्सरी के दिन सब के उपवास था। दूसरे दिन मैं संतों के पास रहा, घर नहीं गया। सब पारणे के लिए मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे। भाईजी स्वयं आए और कहा–'चलो पारणा कर लो।' मैंने कहा–'आप दीक्षा की आज्ञा देंगे, तभी पारणा करूंगा।' परिवारवाले और भी कई व्यक्ति आ गए। आखिर संतों और परिवारवालों के अधिक कहने पर उन्होंने कहा–'मैं लिखित आज्ञा दे दूंगा, किंतु वहां सभा के बीच जाकर अर्ज नही करूंगा।' मैंने कहा–'आप तो अभी आज्ञा पत्र लिखकर दे दीजिए। इतने में मेरा काम हो जाएगा।' उन्होंने तत्काल आज्ञा पत्र लिखकर दिया, फिर मैंने उपवास का पारणा किया। मैं मां के साथ गंगाशहर गया। मंत्री मुनिश्री मगनलालजी के दर्शन कर भाईजी का लिखा हुआ आज्ञा पत्र निवेदित किया। उन्होंने पढ़कर कहा–'इतने से तो काम हो जाएगा।' तत्काल मंत्री मुनिश्री के साथ मैंने तथा मां ने आचार्यश्री के दर्शन किए। मंत्री मुनिश्री के निवेदन करने पर आचार्यप्रवर ने मेरी दीक्षा भाद्रपद शुक्ला 13 को घोषित कर दी। इस प्रकार नौ भाई और चार बहिनों की दीक्षाएं स्वीकृत हो गईं।

दीक्षा की तैयारियां और दीक्षा

दीक्षा की घोषणा होते ही भाईजी तेजकरणजी चोरड़िया पूरे मनोयोग से मेरी दीक्षा की तैयारी में जुट गए। मुझे बीकानेर ले गए। नई पोशाक बनवाई, नया साफा खरीदा, नाना वस्तुएं खिलाईं और गंगा थियेटर (सिनेमा हॉल) भी दिखाया। समय कम था, अत: एक दिन में तीन-चार बन्दोले शुरू हुए। बहुत सारे जैनेतर घरों में भी जाना हुआ। वहां वैरागी का स्वागत हुआ लोगों ने अहोभाव से मेरे वैराग्य भाव का वर्धापन किया। त्याग-प्रत्याख्यान भी बहुत किए। मुझे पारिवारिक संबंधों के कारण नोखा, नोखा मंडी, देशनोक, भीनासर, उदासर ले गए। सर्वत्र स्वागत हुआ, वर्धापना गीत गाये गये, पूरा माहौल वैराग्य रंग से सरोबार हो गया।

जहां तक मुझे याद है, चार-पांच बेलगाड़ियों में रवाना होकर दीक्षा से दो दिन पहले गंगाशहर पहुंचे। वहां पर भी एक वैरागियों का वरघोड़ा श्री मानमलजी छाजेड़ (निवासी रासीसर, प्रवासी सेंथिया) ने निकाला, जो भीनासर तक पहुंचा। दीक्षा के जुलूस में कई तरह के बैंड-बाजे, रथ, ऊंट, घोड़े, हाथी आदि की साज-सज्जा के साथ हजारों लोग जुलूस के साथ व्यवस्थित रूप से चलकर चोरड़ियों के चौक में पहुंचे। वहां आचार्यश्री धर्मसंघ के साथ एक विशाल पट्ट पर विराजमान थे। विशाल जनता के मध्य शुभ मुहूर्त्त, घड़ी-पल में आर्षवाणी के उच्चारण के साथ आचार्यश्री तुलसी ने तेरह वैरागियों को जैन दीक्षा प्रदान की।

इस प्रकार मेरी दीक्षा विक्रम संवत् 2000, (सन् 1943) भाद्रपद शुक्ला तेरस के दिन गंगाशहर (बीकानेर) के चोरड़ियों के चौक में आचार्यश्री तुलसी के करकमलों से सानन्द संपन्न हुई।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

मेरे संस्कार निर्माता

दीक्षा संस्कार की संपन्नता के साथ आचार्यश्री ने मुझे मुनिश्री चम्पालालजी (लाडनूं) आचार्यश्री के ज्येष्ठ बन्धु (जो भाईजी महाराज के नाम से पुकारे जाते थे) के संरक्षण में रहने का आदेश दिया। लगभग चार वर्ष तक उनका संरक्षण प्राप्त हुआ। साधुचर्या से संबंधित मेरी सारी दिनचर्या उनकी देख-रेख में चलती। उनको पूछे बिना कोई भी कार्य नहीं कर सकता था। उनका कठोर अनुशासन मेरे लिए वरदान बन गया। कठोरता के साथ उनमें कोमलता-करुणा भी बहुत थी। किसी गलती पर जितने नाराज होते तो गलती स्वीकारने पर राजी भी उतने ही जल्दी हो जाते।

एक प्रसंग आज भी मेरे स्मृति पटल पर अंकित है। चतुर्मास की संपन्नता के बाद आचार्यश्री बीकानेर पधारे। सायंकालीन आहार के पश्चात् हम बाल मुनि रेत में मुखशोधन (कुल्ला) कर रहे थे और आपस में बातें भी कर रहे थे। मैं बार-बार ऊपर देखता कि कहीं भाईजी महाराज देख न लें, क्योंकि जिन बाल संतों के साथ मैं बतिया रहा था, उनके साथ सम्पर्क रखने का भाईजी महाराज ने निषेध किया था। योग की बात, भाईजी महाराज ने मुझे बात करते हुए ऊपर से देख लिया। प्रतिदिन का वात्सल्यपूर्ण शुभाशीर्वाद मुझे नहीं मिला, तब मैं समझ गया कि वे नाराज हैं। मैंने मुनिश्री जसकरणजी स्वामी (सुजानगढ़) से पूछा तो उन्होंने नाराजगी का कारण बता दिया। फिर मैं उनके मार्गदर्शन के अनुसार भाईजी महाराज के पास गया, नम्रता से वंदना की और निवेदन किया–'आप कृपा कर मुझे क्षमा करें, मेरे से गलती हो गई, भविष्य में विशेष ध्यान रखूंगा।'

उन्होंने तत्काल वत्सलतापूर्ण हाथ मेरे सिर पर रखते हुए कहा–'तुम्हारे हित के लिए मैंने उनसे बातें करने की मनाही की थी, क्योंकि वे बातें अधिक करते हैं, इधर-उधर घूमते रहते हैं और अध्ययन आदि में रुचि कम रखते हैं। तुम इस वाक्य को सदा याद रखना–'बिगड़े बातेड़ी की' अधिक बातें करने वाला अपना नुकसान करता है। यह अवस्था विशेष रूप से संस्कार निर्माण और अध्ययन करने की होती है।' मैंने बद्धांजलिपूर्वक वंदना करते हुए उनकी शिक्षा को 'तहत्' कहकर स्वीकार किया। मुनिश्री के जागरुक अनुशासन का ही प्रभाव मानता हूं कि मैं प्रारम्भ से ही प्रमादयुक्त स्थानों से बचा रहा। परिणामत: मैं आचार्यवर की कृपादृष्टि का अधिकारी बना। भाईजी महाराज ने हमें स्पष्ट कह रखा था कि यहां अथवा वहां के सिवाय कहीं नहीं बैठना। सीखना, चितारना, अध्ययन आदि जो भी करना हो, इन दो स्थानों में ही करना है। उनका एकमात्र लक्ष्य था कि छोटे संत जितने अनुशासन में रहेंगे, उतना ही वे अपना सर्वांगीण विकास कर सकेंगे।

सेवा में कौन बैठता है?

आचार्यप्रवर चूरू विराज रहे थे। एक प्रसंग चला कि छोटे संतों में सबसे ज्यादा मेरी (आचार्यश्री की) उपासना–सेवा में कौन बैठता है? घंटों की गणना में मेरा नंबर प्रथम पंक्ति में आया। आचार्यप्रवर ने प्रसन्नता के साथ कहा–'औरों की अपेक्षा ताराचन्द की स्थिरता अच्छी है।' इस घटना के अनेकों वर्षों बाद जब मैं असम की यात्रा पर था उस समय मुनि मधुकरजी द्वारा प्रेषित समाचार प्राप्त हुए, जिसे उन्हीं की भाषा में पढ़ें। मुनि मधुकरजी ने बताया कि पश्चिम रात्रि में विनय और उपासना की चर्चा चल रही थी। उसी संदर्भ में मुनि ताराचन्दजी (रासीसर) का उल्लेख करते हुए पूज्यश्री गुरुदेव ने फरमाया–'वह प्रारम्भ से ही गुरु दृष्टि का ध्यान रखता था। अधिक समय तक गुरु-उपासना में बैठता था। बाल साधुओं में यह क्रम उसने ही प्रारंभ किया।' लगभग 50 वर्षों के बाद भी मुझ जैसे साधु की साधारण सेवा को याद रखना गुरुदेव की अद्‌भुत स्मरण-शक्ति का द्योतक है।

मेरी दिनचर्या

दीक्षित होने के बाद मुझे सबसे पहले दशवैकालिक ग्रंथ कंठस्थ करवाया गया। दशवैकालिक सूत्र में मुनि के आचार–गोचर का सुन्दर विवेचन है। मुनि के लिए वह अनुशीलन योग्य ग्रंथ है। कंठस्थ से पूर्व शुद्ध उच्चारण के लिए मुनिश्री नथमलजी (टमकोर) व मुनिश्री धनराजजी (लाडनूं) निर्दिष्ट थे। रात्रि में भाईजी महाराज की सन्निधि में पुनरावर्तन होता। पश्चिम रात्रि में हम बाल मुनियों को स्वयं आचार्यवर समय दिराते। तत्त्वज्ञान के लिए मुनि हीरालालजी (बीदासर) नियुक्त थे। इस तरह स्वाध्याय व ध्यान से युक्त मेरी दिनचर्या, मेरी साधुचर्या मुझे परमानंद की अनुभूति करवा रही थी।

जन्मभूमि में आचार्यश्री

गंगाशहर का चतुर्मास और मर्यादा महोत्सव सानन्द संपन्न कर आचार्यश्री देशनोक से रासीसर पधारे। दीक्षा के लगभग पांच महीने बाद ही श्री गुरुदेव के साथ मेरा जन्मभूमि में आना हो गया। श्री गुरुदेव के दर्शनार्थ एवं गांव के साधु ताराचन्द को देखने सारा गांव ही उमड़ पड़ा। दोपहर में आचार्यश्री ने चित्रों एवं कहानियों के माध्यम से अनावश्यक हिंसा छोड़ने, व्यसनमुक्त रहने आदि की प्रेरणाएं प्रदान कीं। बहुत सारे लोगों ने नियम ग्रहण किए। लोगों की उत्सुकता देख आचार्यश्री ने मुझे सभा के मध्य खड़ा किया और कहा–'देख लो, यह है तुम्हारे गांव का संत मुनि ताराचन्द।' ग्रामीण बहिनों ने घूंघट खोलकर मुझे देखा और हाथ जोड़कर वंदन किया। मैं भी दिनभर बच्चों एवं लोगों से घिरा रहा। प्रश्नों के उत्तर देता रहा। मुनि अवस्था में प्रथम बार जन्मभूमि में जाने का अनुभव बहुत सुखद रहा। बचपन की अनेक स्मृतियां सजीव बन गईं।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अनावश्यक मौन का परिणाम

विक्रम संवत् 2001, सन् 1944 का चतुर्मास आचार्यप्रवर का सुजानगढ़ था। रात्रि प्रतिक्रमण के बाद आचार्यश्री ने हम बाल संतों से एक प्रश्न पूछा–'दीक्षा क्यों ली? इसका उत्तर अपने-अपने शब्दों में दो।' कुछ संतों ने उत्तर देने प्रारंभ किए। मेरा नंबर आया, मैं कुछ नहीं बोल सका। दो-तीन बार कहने पर भी जब मैं नहीं बोला तो आचार्यश्री की दृष्टि कठोर हो गई। उत्तर देने का क्रम संपन्न हुआ। सब अपने-अपने स्थान की ओर जाने लगे। मैं भी अपना उदास चेहरा लिये जब भाईजी महाराज के पास पहुंचा, उससे पहले ही मेरे उत्तर नहीं देने की बात उनके पास पहुंच गई। उन्होंने मुझे देखते ही कहा–'ताराचन्द! गुरुदेव के पूछने पर तू क्यों नहीं बोला?' मैंने सकुचाते हुए कहा–'भाईजी महाराज! मैं क्यों नहीं बोल सका, इसका मुझे भी पता नहीं। अब अनुताप हो रहा है कि यदि मैं एक वाक्य ही बोल देता तो गुरुदेव नाराज नहीं होते।' भाईजी महाराज ने मेरे सिर पर हाथ रखते हुए कहा–'भविष्य में ध्यान रखना। मैं आचार्यश्री से बात कर लूंगा। सब ठीक हो जाएगा।'

एक बार आचार्यश्री रामगढ़ विराज रहे थे। सायं प्रतिक्रमण के बाद जो संत वहां उपस्थित थे, उनके नाम से संस्कृत श्लोक का एक-एक पद्य बनाया। उसमें मेरे नाम का पद्य बनाया–'ताराचन्द्रस्तु तूष्णीक:' ताराचन्द तो मौनी है। मुझे लगा कि उस दिन की मौन की निष्पत्ति इस पद्य में गुम्फित हुई है। सुजानगढ़ चतुर्मास के बाद भाईजी महाराज ने हम नवदीक्षित संतों को तीन आगमों–आवश्यक, दशवैकालिक और उत्तराध्ययन की अर्थ सहित वाचना दी।

आचार्यश्री स्वयं क्लास लेते

हम शैक्ष संतों के लिए प्राय: प्रतिदिन का यह क्रम था–पश्चिम रात्रि में प्रतिक्रमण से पहले आचार्यश्री के उपपात में चितारना (सीखा हुआ दोहराना) करना और सायं प्रतिक्रमण के बाद आचार्यश्री कभी-कभी जीवनोपयोगी व विकासमूलक विभिन्न विषयों का प्रशिक्षण देते। सही उत्तर देने वालों को पुरस्कृत करते। इसी क्रम में वे यदा-कदा बौद्धिक व्यायाम की दृष्टि से पहेलियां भी पूछते। बीदासर का एक प्रसंग है।

बीदासर में मुनि हीरालालजी (बीदासर) की दीक्षा का प्रसंग, सर्दी का मौसम, प्रतिक्रमण के बाद हम बहुत सारे संत गुरुदेव की उपासना में ऊनी कपड़े ओढ़े बैठे थे। आचार्यश्री ने पहला प्रश्न किया–'कं बलवंतं न बाधते शीतं'–'किस बलवान पुरुष को सर्दी नहीं सताती?' सब मौन। गुरुदेव ने कहा–'इस प्रश्न का उत्तर इसी पद्य में है', फिर भी कोई नहीं बता सका। तीसरी बार कहा–'अभी तुम्हारे पास में भी है।' कोई उत्तर नहीं दे सका, तब गुरुदेव ने इसका रहस्य उद्घाटित किया। 'कंबलवंतं न बाधते शीतं' यानि 'जिसके कम्बल ओढ़ा हुआ है, उसको सर्दी नहीं सताती।' रहस्य जानकर हम सब संत मुस्कुराने लगे। इस श्लोक में इसी प्रकार के चार प्रश्न और उनके उत्तर भी हैं। प्रश्न और उत्तर दोनों उसी में समाहित है। पूरा श्लोक हमको याद करवाया और अर्थ समझाया। वह श्लोक है–

'**का काली, का मधुरा? का शीतलवाहिनी गंगा? कं संजघान कृष्ण:? कं बलवंतं न बाधते शीतं?**'

काला-काला कांटा है

विक्रम संवत् 2002 (सन् 1945) में आचार्यश्री का चतुर्मास श्रीडूंगरगढ़ था। उस समय हॉल में हम 8-10 शैक्ष संतों को इस प्रकार पंक्तिबद्ध बिठाया जाता कि व्याख्यान में विराजित भाईजी महाराज की दृष्टि हम सब पर रहती। कोई आपस में बातचीत नहीं कर सकता। मैं और मुनि मधुकरजी आगे-पीछे ही बैठे हुए थे। मैंने अपनी हथेली दिखाते हुए कहा–'इसमें काला-काला क्या है?' उन्होंने तत्काल कहा–'यह तो कांटा है। अभी मैं शूल ले आता हूं, निकाल दूंगा।' शूल को निकालने के लिए एक वृक्ष विशेष की शूलों का प्रयोग होता है। वे शूलें निरापद होती हैं। शूल से शूल निकालने की पद्धति तेरापंथ धर्मसंघ में प्रचलित रही है। मुनि मधुकरजी अन्दर से शूलों का घर ले आए और उसमें से एक शूल निकाल कर वहां कुरेदने लगे। कांटा तो निकला नहीं, वहां खून जरूर निकल गया। खून के कारण काला-काला दिखना भी बंद हो गया। उन्होंने पट्टी बांध दी और कहा–'कांटा निकल गया।' अब समस्या थी कि भाईजी महाराज को कैसे बताएंगे। प्रवचन संपन्न होते ही वे अन्दर कमरे में पधारे। मेरी हथेली पर बंधी पट्टी को देखते ही पूछा–'यह पट्टी क्यों?' मैंने कहा–'हथेली में कांटा था। मुनि मधुकरजी ने निकाल तो दिया, किंतु खून आ जाने से पट्टी बांध दी।' वे बोले–'हाथ में कांटा कैसे गड़ा?' तत्काल पट्टी खोली। पानी से खून साफकर ध्यान से देखा और कहा–'यहां तो कोई तिल था। कांटा समझकर कुरेदने से खून निकल गया।' कठोर स्वर में बोले–'कहां है वह? उसको बुलाओ।' वे पास में खड़े सब देख-सुन रहे थे। उन्होंने पास में आकर वंदना की। भाईजी महाराज ने कहा–'पहली बात–मुझे पूछे बिना यह कैसे किया? दूसरी बात–पैरों में कांटा चुभ सकता है, किंतु हथेली में कैसे चुभेगा?' उन्होंने अपनी गलती स्वीकार करते हुए पैरों में सिर रखकर वंदना की। दो-तीन दिन मरहम पट्टी करने से घाव ठीक हो गया।

अक्षर जमाने का अभ्यास

उस युग में लिपि कला का विकास अपेक्षित माना जाता था। प्राय: हर साधु को लिपि कौशल सिखाया जाता था। मैंने भी लिपि कला का विकास किया। पहले मुनिश्री दुलीचन्दजी 'दिनकर' बालू रेत में बड़े-बड़े अक्षर लिख देते। उसके नीचे उसी के अनुरूप अक्षर लिखने का हम अभ्यास करते। फिर पाटी पर एवं श्रीडूंगरगढ़ में पन्नों पर लिखने का अभ्यास शुरू किया।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

'काफी' शब्द मुस्कान का कारण

विक्रम संवत् 2002 के आस-पास गुरुदेव पड़िहारा विराज रहे थे। भयंकर गर्मी का मौसम था। मकान पश्चिमाभिमुख होने से बाहर के बरामदे का फर्श तथा खम्भे आदि भट्टी की भांति गर्म हो जाते। अत: आचार्यश्री सायंकालीन प्रतिक्रमण अन्दर हॉल में करवाते फिर बाहर विराजते। एक दिन प्रतिक्रमण के बाद मुझे कहा–'जाओ, देखकर आओ कि बाहर के खम्भे आदि कैसे हैं?' मैं गया। दो-तीन बार हाथ से स्पर्श करके देखा और निवेदन किया–'अभी तक तो काफी गर्म है।' मुस्कान के साथ बोले-'अच्छा काफी गर्म है?' मैं मुस्कान का रहस्य समझा नहीं तब संतों ने बताया कि तुमने 'काफी' शब्द का प्रयोग किया। यह उर्दू भाषा का शब्द है, इसलिए आचार्यश्री मुस्कुराए।

मैं विभागों में आ गया

विक्रम संवत् 2003 (सन् 1946) का चतुर्मास आचार्यश्री का राजगढ़ था। वहां भाईजी महाराज के साझ-वर्ग में मेरी पांति (आहार का विभाग) हो गई। उनके वर्ग में प्राय: 10-15 संत रहते थे। उनमें परस्पर चित्त समाधि की व्यवस्था थी। दो या तीन संतों की चित्त समाधि एक साथ रहती। मेरी चित्त समाधि मुनिश्री नथमलजी के साथ रखी गई। वे पहले दो संत थे, अब तीन हो गए। दीक्षा क्रम से जो भी सामूहिक कार्य आते, उनको चित्त समाधि वाले साथ में करते। बारी के सामूहिक कार्य करने का मेरा यह पहला अवसर था। इस चतुर्मास से पूर्व मेरे कई साथी संतों को आचार्यश्री ने बहिर्विहारी बना दिया।

एक पद ही भूल गया

राजगढ़ चतुर्मास के बाद आचार्यश्री फतेहपुर के आजाद भवन में विराज रहे थे। उन्होंने बाल संतों को फरमाया कि कल से क्रमश: सभी को दोपहर का उपदेश देना है। उस समय मुनिश्री दुलीचन्दजी 'दिनकर' का मध्याह्न का व्याख्यान होता था। आदेशानुसार उपदेश देने का क्रम चालू हो गया। मेरा नंबर आया। मैं गया और नवकार मंत्र का उच्चारण किया तो 'णमो उवज्झायाणं' बोलना ही भूल गया, तत्काल कवि श्रावक श्री दौलतसिंह ने इस भूल को संभाला। मैंने उपदेश की एक गीतिका से बोलना शुरू किया। मैंने 15 मिनट बोलने की तैयारी की थी, किंतु 5 मिनट में ही उपदेश पूरा हो गया। समस्या आई की मैं अब क्या बोलूं? योग अच्छा था कि मुनिश्री जल्दी पधार गए। मेरा काम बन गया। संकोच का सबसे बड़ा कारण बना–अनेक साथी संत ऊपर खड़े-खड़े देख रहे थे, मुस्कुरा रहे थे। आंखें ऊपर करते ही मुझे मन ही मन में हंसी आने लगी। इस प्रकार मेरा पहले दिन का उपदेश देना संपन्न हुआ। अब हम मुनिश्री को निवेदन करके ही जाते कि आप कृपा कर जल्दी पधारना। सबने महसूस किया कि मंच पर आकर बोलना कितना कठिन होता है।

विक्रम संवत् 2004 (सन् 1947) के रतनगढ़ चतुर्मास के दौरान आचार्यप्रवर ने भाईजी महाराज को समुच्चय में रखकर दो नए साझ बना दिए। एक मुनिश्री नथमलजी (टमकोर) का और एक मुनिश्री दुलीचन्दजी 'दिनकर' का। सहवर्ती संतों को दोनों साझों में विभाजित कर दिया। मेरा नंबर आया मुनिश्री नथमलजी के साझ में। श्रीगुरुदेव की कृपा से लगभग चार वर्ष भाईजी महाराज का संरक्षण प्राप्त हुआ। अब नए साझ-वर्ग अधिकारी मुनिश्री नथमलजी के नेतृत्व में मेरे अध्ययन आदि के सारे कार्य होने लगे।

विक्रम संवत् 2005 (सन् 1948) का आचार्यश्री का चतुर्मास था पूज्यश्री कालूगणीराज की जन्मभूमि ताल छापर में। वहां हम कई संतों ने पंडित घनश्यामदासजी के पास लघु व्याकरण–कालू कौमुदी की साधनिका शुरू की। उनकी समझाने की शैली सरल थी। शब्दरूपावली, धातुरूपावली भी कंठस्थ कर ली। संस्कृत में वाक्य बनाना एवं कुछ बोलने का भी अभ्यास चालू हो गया।

बहिर्विहार का प्रथम अनुभव

दीक्षा के बाद 5 वर्षों तक (छापर चतुर्मास तक) गुरुकुलवास में रहकर ही गुरुकृपा से अभिस्नात होता रहा। छापर चतुर्मास के उत्तरार्द्ध में कार्तिक में यह निश्चित हो गया कि चिकित्सा के लिए मंत्री मुनिश्री मगनलालजी बीदासर पधारेंगे। मार्गशीर्ष दूज को आचार्यवर चाड़वास पधार गए। वहां से आचार्यश्री को लाडनूं पधारना था एवं मंत्री मुनिश्री को बीदासर। उनको बहिर्विहार में नौ संतों की बख्शीस थी। वहां संतों में यह चर्चा थी कि छ: संत तो मंत्री मुनिश्री अभी हैं ही। अब तीन संतों में किस-किस का नंबर आता है?

प्रात: प्रतिक्रमण के बाद प्रतिदिन की भांति अनुपूर्वी की लघु पुस्तिका मैं गुरुदेव के हाथों में थमाकर वापस जाने लगा, तब उन्होंने कहा–'मुनि हीरालाल को बुला लाओ।' मैं ऊपर गया और मुस्कुराता हुआ बोला–'चलो, तुमको आचार्यश्री ने याद किया है।' मेरे मन में आया कि एक तो इनका नंबर आयेगा। मैं भी उनके साथ चला गया और आचार्यश्री के पीछे खड़ा हो गया। वे गुरुदेव को वंदना कर रहे थे। गुरुदेव ने मुड़कर मेरी ओर देखते हुए कहा–'तुम भी इधर आ जाओ।' मैंने सामने जाकर वंदना की। मुनि मोहनलालजी (आमेट), जो वहीं प्रतिलेखन कर रहे थे, आचार्यश्री ने संकेत कर उनको भी पास में बुला लिया। उत्सुकतावश और संत इकट्ठे हो गए। आचार्यश्री ने फरमाया–'अभी तुम तीनों मंत्री मुनिश्री के साथ बीदासर चले जाओ।' मेरे तो कुछ बाकी नहीं रहा। आंखें डब-डबा गईं, ऊपर जाना कठिन हो गया, क्योंकि मेरे मन में दृढ़ विश्वास था कि गुरुदेव की मेरे पर इतनी कृपा है, मुझे गुरुकुलवास से अलग नहीं भेजेंगे। मेरा अहं चूर-चूर हो गया। यह एक दिन होना ही था।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

मंत्री मुनिश्री का पत्र

इस प्रवास के दौरान आचार्यश्री व मंत्री मुनि दोनों की ओर से संदेशों का-पत्रों का परस्पर आदान-प्रदान हुआ। मैं मेरा सौभाग्य मानता हूं कि मंत्री मुनि की तरफ से एक बार मुझे भी पत्र संवाहक बनने का अवसर प्राप्त हुआ। मैं मंत्री मुनिश्री का पत्र लेकर बीदासर से सुजानगढ़ गया ओर सुजानगढ़ से आचार्यप्रवर का पत्र लेकर बीदासर।

कुछ नया करना

विक्रम संवत् 2005 का जयपुर चतुर्मास संपन्न कर भाईजी महाराज आचार्यश्री के दर्शनार्थ आज सुजानगढ़ पधारने वाले थे। उनकी अगवानी के लिए संत जाने की तैयारी कर रहे थे। अचानक आचार्यश्री का आदेश हुआ कि कोई भी संत स्थान से बाहर भाईजी महाराज के सामने नहीं जाएगा। क्यों? क्या? ऐसे कैसे? इन प्रश्नों से एक बार के लिए संत मानस आंदोलित हुआ। इस आदेश ने एक धमाका पैदा कर दिया।

प्रात:कालीन प्रतिक्रमण के बाद जब मैं गुरुदेव को वंदना कर रहा था, तब संकेत से मुझे निकट बुलाकर कहा–'अभी सूर्योदय के बाद तुम पंचमी समिति के लिए हमारे साथ ही आ जाना।' मैंने तहत् कहकर निर्देश को स्वीकृत किया। प्रतिलेखन आदि कार्यों से निवृत्त होकर सूर्योदय के बाद आचार्यश्री के साथ हो गया। आचार्यश्री कुछ संतों के साथ जयपुर के रास्ते से आगे बढ़ने लगे। गांव के बाहर शौच आदि से निवृत्त होकर फिर आगे बढ़े। एक किलोमीटर के बाद देखा, भाईजी महाराज संतों के साथ द्रुतगति से चलते हुए आ रहे हैं। ज्यों ही बन्धु युगल का मिलन हुआ, वह दृश्य बड़ा आकर्षक तथा आल्हादकारी था।

आचार्यश्री अपने ज्येष्ठ बन्धु को साथ लेकर बाजार में से होते हुए प्रवास स्थान पर पधारे। चतुर्विध धर्मसंघ से प्रवचन पंडाल खचाखच भर गया। आचार्यश्री पट्टासीन हुए और कार्यक्रम चालू हो गया। सर्वप्रथम भाईजी महाराज आदि संतों ने अपनी भावनाओं के साथ गुरुदर्शन की प्रसन्नता व्यक्त की। सबके प्रश्नायित चेहरों को पढ़कर आचार्यश्री ने अपने मार्मिक प्रवचन के मध्य उस आदेश का रहस्योद्घाटन किया–'मेरी प्रकृति में कुछ न कुछ नया करने का भाव बना रहता है। मैंने सोचा कि संत भाईजी महाराज की अगवानी में जाएं, उस स्थान में मैं स्वयं उनकी अगवानी में दूर तक जाऊं और यहां तक लाऊं, क्योंकि वे प्रथम बार बहिर्विहार में जयपुर का सफल चतुर्मास संपन्न कर आ रहे हैं।' इस प्रसंग में आचार्यप्रवर ने मुझे साथ लिया, यह उनकी विशेष कृपा दृष्टि थी।

राजलदेसर से दिल्ली

विक्रम संवत् 2005 के मर्यादा महोत्सव के अवसर पर आचार्यश्री ने मुझे भाईजी महाराज के साथ दिल्ली जाने का निर्देश दिया। मैंने जब गुरुकुलवास में रखने का निवेदन किया तो उन्होंने फरमाया–'भाईजी महाराज के साथ रहना, मेरे साथ ही रहना है।' मुनि दीक्षा के पांच वर्ष गुरुकुलवास में संपन्न कर भाईजी महाराज के साथ में दिल्ली चतुर्मास के लिए प्रस्थान किया। आचार्यश्री से विदा लेकर भाईजी महाराज ने सात संतों के साथ हरियाणा होते हुए दिल्ली की ओर विहार किया। कई संत एक मंजिल तक पहुंचाने आए। भाईजी महाराज मेरे विकास के प्रति शायद मुझसे भी ज्यादा जागरूक थे। यात्रा के दौरान उनके निर्देश से मैं भी जनसभा को भजन व उपदेश के माध्यम से उत्प्रेरित करता।

कहीं निंदा-कहीं भक्ति

इस यात्रा के प्रथम वर्ष मुझे अनेक अनुभव प्राप्त हुए। उनमें से एक अनुभव प्रस्तुत करना चाहूंगा। भाईजी महाराज के निर्देश से मैं छोगजीस्वामी के साथ पानी की गोचरी के लिए एक जाट के घर में गया। छोगजीस्वामी ने पूछा–'बहिन! रोटी-पानी की भिक्षा मिलेगी क्या?' बहिन रसोईघर से बाहर आकर हरियाणवी लहजे में गुस्से में बोली–'घर-घर में क्यों हांड (घूम) रहे हो। कमाकर नही खाते? मुंह तो बांध लिया, पेट नहीं बांधा?' मैं तो यह दृश्य देख-सुनकर बाहर आ गया। छोगजीस्वामी उसको समझाने के लिए कुछ देर खड़े रहे, किंतु बहिन समझने वाली नहीं थी। मैंने कहा–'मुनिश्री! कुछ मिलता तो है नहीं, क्यों नहीं वापस प्रवास स्थल पर चलें।' उन्होंने कहा–'दो-चार घरों में और चलते हैं, फिर ठिकाने तो जाना ही है।' दूसरी बात कही–'कोई बाई नटे, कोई बाई पटे।' ऐसा ही हुआ। एक घर आंगण में गए, छोगजीस्वामी ने पूछा–'बहिन! रोटी-पानी मिलेगी क्या?' सामने खड़ी बहिन (जाटनी) तत्काल हाथ जोड़कर बोली–'महाराज! घर में सब कुछ मिलता हैं। मेरा भाग्य है कि त्यागी संत मेरे घर-आंगण आए हैं।' बहिन ने इतनी भक्ति-भावना से वस्तुएं बहराई कि मैं तो देखकर आश्चर्यचकित रह गया। मेरा पात्र भी पानी से भर गया।

ठिकाने जाने के बाद जब भाईजी महाराज आदि संतों को दोनों घटनाएं सुनाई तब उन्होंने कहा–'साधु जीवन की यही तो कसौटी है। 'कहीं घी घणा, कहीं मुट्ठी चणा' मिले तो अच्छा, नहीं मिले तो भी अच्छा। यही समभाव-समता की साधना है।' क्रमश: विहार करते हुए विक्रम संवत् 2006 का चातुर्मासिक प्रवास करने हेतु हम दिल्ली पहुंचे। दिल्ली भारत की राजधानी है। तेरापंथ धर्मसंघ को राष्ट्रीय पहचान प्राप्त हो, इस बिंदु की ओर भाईजी महाराज न केवल जागरूक थे, अपितु अहर्निश प्रयत्नरत भी थे। आचार्यवर की दिल्ली यात्रा की भूमिका का बनना इसी चतुर्मास की निष्पत्ति थी। वहां व्यापक जनसंपर्क हुआ। प्रबुद्ध वर्ग से विचार विमर्श हुआ, जिससे मेरे चिंतन के नए क्षितिज खुले।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

योग्य के प्रथम वर्ष की परीक्षा

चतुर्मास के बाद भाईजी महाराज के साथ हम जयपुर पहुंचे, क्योंकि मर्यादा महोत्सव वहां था। इस अवसर पर शिक्षा की दृष्टि से विद्यार्थी साधु-साध्वियों के लिए एक सप्तवर्षीय नया कोर्स बना। उसके आधार पर साधु-साध्वियों की परीक्षाएं हुई। मैंने भी योग्य के प्रथम वर्ष की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसी क्रम में आगे मैं योग्य के दूसरे व तीसरे वर्ष की परीक्षा दे पाया।

प्रथम बार एकान्तर तप

विक्रम संवत् 2007 (सन् 1950) का भाईजी महाराज के साथ मेरा भिवानी चतुर्मास हुआ। मैंने प्रथम बार सावन मास में एकान्तर तप किया। यहां पर बच्चों को धार्मिक अध्ययन करवाने की जिम्मेदारी मुझे सौंपी गई।

दो महान आत्माओं का मिलन : अद्भुत दृश्य

चतुर्मास के बाद आचार्यप्रवर के दर्शन किए। आचार्यश्री ने भाईजी महाराज को मंत्री मुनिश्री मगनलालजी के लिए विशेष संदेश के साथ सरदारशहर जाने का आदेश दिया। विहार करते हुए तारानगर पहुंचे। वहां मंत्री मुनिश्री के भेजे हुए दो संत-मुनिश्री नगराजजी और मुनिश्री सुमेरमलजी 'सुमन' भाईजी महाराज की अगवानी करने के लिए पहुंच गए। मानना चाहिए वहीं से मंत्री मुनिश्री की भक्ति शुरू हुई। तारानगर से सरदारशहर तक हम संत गोचरी-पानी, विहार में बोझ उठाना आदि कार्यों से मुक्त रहे। धर्मसंघ के दो वरिष्ठतम संतों का मिलन न केवल दर्शनीय था, अपितु प्रेरणादायी भी था। भाईजी महाराज आदि हम संतों ने गीतिका के एक-एक पद्य के साथ गुरु द्वारा प्रदत्त एलवान आदि विभिन्न उपकरण उपहृत किये। गुरु द्वारा प्रदत्त संदेश वाचन के बाद संदेश अर्पण के समय मंत्री मुनि मानों गुरु भक्ति के साक्षात् मूर्तिमान प्रतीक बन गये थे। इस प्रवास के दौरान मंत्री मुनिश्री व उनके सहवर्ती संतों का जो आतिथ्य प्राप्त हुआ, वह आज भी स्मृति पटल पर अंकित है। वस्तुत: यह प्रवास मेरे संघीय संस्कारों को वृद्धिंगत करने में मील का पत्थर साबित हुआ।

एक नया प्रयोग

विक्रम संवत् 2008 (सन् 1951) का चतुर्मास आचार्यश्री का, भाईजी महाराज आदि संतों के साथ दिल्ली (नया बाजार) में हुआ। प्रारम्भ होते ही अणुव्रत के प्रचार-प्रसार की दृष्टि से अनेक कार्यक्रमों के साथ एक नया उपक्रम चालू हुआ, जिसमें आचार्यश्री ने दो-दो संतों के पांच-सात ग्रुप तैयार किये और उनको निर्देश दिया कि प्रात: एक घंटा से दो घंटा तक अणुव्रतों के नियम, सप्तव्यसन मुक्त जीवन आदि के माध्यम से जनप्रतिबोध का कार्य किया जाए। लगभग दो मास तक यह अभियान चला। हजारों लोगों ने नियम स्वीकार किए, जिसकी प्रतिक्रिया आम जनता में अच्छी हुई। इन दो-दो के ग्रुपों में मुझे भी जाने का, कार्य करने का मौका मिला। आचार्यश्री दिल्ली का प्रथम ऐतिहासिक चतुर्मास संपन्न कर संवत् 2008 के मर्यादा महोत्सव के लिए सरदारशहर पधारे।

बहिर्विहार की वंदना

मर्यादा महोत्सव के अवसर पर आचार्यश्री ने मुझे सर्वप्रथम बहिर्विहार के लिए मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) के साथ रहने की वंदना करवाई। वे हमारे अग्रगण्य बने और उनके सहयोगी-अनुगामी के रूप में मुनिश्री सुमेरमलजी 'सुदर्शन' और मैं दो संत हो गए। मुनिश्री का संवत् 2009 का चतुर्मास आचार्यश्री ने राजनगर (मेवाड़) फरमाया। विहार की पूर्व रात्रि में हम तीनों आचार्यश्री के सान्निध्य में उपस्थित हुए। उन्होंने शिक्षा फरमाई–'बहिर्विहार में किस प्रकार रहना, अग्रणी का पूरा मान-सम्मान रखना, उनको बिना पूछे कोई कार्य नहीं करना, गोचरी, व्याख्यान, तपस्या तथा श्रावक समाज को संभालने में अग्रणी का पूरा सहयोग करना, अनुशासन में रहना, विनम्रता का व्यवहार रखना आदि।' हमने 'तहत्' कहकर गुरु शिक्षा को शिरोधार्य किया। आचार्यश्री ने मुनिश्री मीठालालजी को फरमाया–'तुम भी इनके अध्ययन, स्वास्थ्य के बारे में सजग रहना और अपने स्वास्थ्य का भी ध्यान रखना। जाओ, सुखसातापूर्वक विहार करो और जनकल्याण के साथ धर्मसंघ की प्रभावना बढ़ाओ।'

मंत्री मुनि की रहस्यमयी शिक्षा

हम तीनों मंत्री मुनिश्री मगनलालजी की सेवा में उपस्थित हुए। उन्होंने कहा–'देखो, मुनि मीठालाल तो मेवाड़ का ही है। तुम दोनों पहली बार मेवाड़ जा रहे हो। वहां तुमको 'मोखमसिंह' और 'जोखमसिंह' से युद्ध करना होगा।' यह सुनकर मुनिश्री तो मुस्कुराते रहे और हम दोनों कुछ समझे नहीं, पूछा–'मोखमसिंह', 'जोखमसिंह' का मतलब हम समझे नहीं,' तब मंत्री मुनिश्री ने इनका रहस्य बताते हुए कहा–'मोखमसिंह'-मक्की और 'जोखमसिंह'-जौ। मेवाड़ में मक्की एवं जौ की रोटियां तथा मक्की की राब का खाना आम है। यह घर-घर में मिलेगी। तुम दोनों का यहां भोजन रहा है–बाजरे एवं मिस्सी की रोटियां तथा बाजरे की राब। इसलिए तुमको धीर-धीरे इनके खाने का अभ्यास करना है। दाल-बाटी, चूरमा का भोजन मेवाड़ का सार्वजनिक तथा प्रिय भोजन है। मुनि मीठालाल तुमको सब सिखा देगा।'

मंत्री मुनिश्री ने मुनि मीठालालजी को कहा–'तुम जैसे पढ़-लिखकर तैयार हुए हो, प्रबुद्ध बने हो, वैसे इनको भी तैयार करना, चित्त समाधि रखना।'

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

क्रमश: विहार करते हुए हम फुलाद स्टेशन पहुंचे। प्रात: सूर्योदय के साथ ही विहार कर सीधे रास्ते अरावली के पहाड़ों की दुरूह चढ़ाई पार करते हुए उत्साह के साथ मेवाड़ के प्रथम गांव पीपली में पहुंचे। सबसे ऊंचा पहाड़ गोरमघाट भी सामने दिखाई दे रहा था। मुनि जीवन में पहली बार मक्की और जौ की रोटी का आहार किया। उस समय मंत्री मुनिश्री की स्मृति हो गई। जौ की रोटी चबाने से जीभ छिल गई। मुनिश्री ने कहा–'जौ की रोटी कुछ दिन स्थगित कर दो।' मक्की की रोटी, राब का अभ्यास धीरे-धीरे चालू कर दिया। एक बार सायं मक्की की राब का प्रयोग किया तो रात्रि में पेट दर्द हो गया। मुनिश्री ने कहा–'राब का ऊपर-ऊपर का पानी-छाछ लेकर देखो।' यह प्रयोग अजमाया। अनुकूल रहा।

विक्रम संवत् 2009, सन् 1952 के चतुर्मास के लिए राजनगर में प्रवेश किया। राजनगर बौद्धिक श्रावकों का क्षेत्र कहलाता है। मुनिश्री की प्रबुद्धता से यहां के लोग पहले ही परिचित एवं आकर्षित थे। इस चतुर्मास के दौरान अनेक क्षेत्रीय विभिन्न जिम्मेदारियों का निर्वहन करते हुए मुनिश्री के सान्निध्य में श्रीभिक्षुशब्दानुशासन (कुछ अंश) व रघुवंश काव्य के दो सर्गों का वाचन किया। बहिर्विहार के कारण परीक्षा तो नहीं हुई, पर कुछ अध्ययन अवश्य हो गया। सरदारशहर से विदा लेकर चले और सरदारशहर में ही गुरुदर्शन कर धन्य-धन्य हो गए।

सौराष्ट्र-काठियावाड़ की यात्रा

विक्रम संवत् 2010 का चतुर्मास आचार्यप्रवर ने मीठालालजी स्वामी का ध्रांगध्रा-सौराष्ट्र घोषित किया। यह हमारे लिए सुदीर्घ यात्रा थी। यात्रा के बारे में पथदर्शन प्रदान करते हुए पूज्यश्री ने कहा–'यात्रा अनुभवों का खजाना होती है, जिसके माध्यम से जीवन नए-नए अनुभवों से संपन्न बनता है। जिस देश, प्रान्त में जाओ, उसकी भाषा और वहां के खान-पान को आत्मसात् करने से कठिनाई बहुत कम हो जाती है। अपने आचार-विचार एवं मर्यादाओं के पालन में जागरूक रहकर संघ की प्रभावना बढ़ाते रहना। जनकल्याण करना हमारी यात्रा का लक्ष्य रहना चाहिए।' गुरु की शिक्षा और आशीर्वाद शिष्यों के लिए परम आलंबन होता है। यात्रा में सहज ही दो ग्रुपस्-सिंघाड़ों का साथ हो गया। मुनिश्री नेमीचन्दजी आदि तीन संतों को सौराष्ट्र होकर अहमदाबाद चतुर्मास के लिए जाना था। इस प्रकार छ: संतों का यात्रा में साथ हो जाना बहुत अच्छा रहा।

विहार स्थगित करना पड़ा

एक दिन सायं विहार कर खिंवाड़ा जा रहे थे। गांव के नजदीक अचानक मेरे पैर में एक सुई जितनी बड़ी बंबूल की शूल गड़ गई। केवल ऊपर का हिस्सा पकड़ में आए उतना बाहर था। मैं बैठ गया। संतों ने सावधानीपूर्वक निकालने की चेष्टा की ताकि बीच में टूट न जाए। अलग-अलग संतों के दो-तीन बार प्रयत्न करने पर वे निकालने में सफल हुए। शूल के साथ ही खून की धारा बाहर निकली। गांव में मुश्किल से पहुंचा। संतों ने सफाई कर पट्टी बांध दी। इस वेदना के कारण रात्रि में बुखार हो गया। अगले दिन का विहार स्थगित करना पड़ा। तीसरे दिन विहार हुआ। हम सिरोही होते हुए आगे बढ़ रहे थे। एक गांव आया। वहां से पिछले रास्ते माउन्ट आबू बहुत नजदीक था। संतों का मानस बना, ऊपर गए, दर्शनीय स्थान आदि देखे। रात्रि प्रवास कर सुबह वापस आकर आगे प्रस्थित हो गए।

बुखार का परीषह

हमारे विहार का क्रम बाव (गुजरात) होकर काठियावाड़ जाने का था। बाव पहुंचने से तीन दिन पहले मुझे बुखार हो गया। रात को प्यास का भयंकर परीषह रहा। दिन में संतों के सहारे चलता। अगली मंजिल पहुंचते-पहुंचते शरीर निढ़ाल हो जाता। बीच के गावों में रुकने की अनुकूलता नहीं थी। अत: जैसे-तैसे रास्ते को पार कर बाव पहुंचे। वह श्रद्धा का क्षेत्र होने से दवा, पथ्य आदि की अनुकूलता थी। कुछ दिन रुककर स्वास्थ्य लाभ प्राप्त किया, फिर आगे बढ़े।

संतों का आध्यात्मिक मिलन

विहार प्राय: दोनों समय होते। उस समय सौराष्ट्र में मुनिश्री कानमलजी, मुनिश्री चन्दनमलजी आदि कई साधु-साध्वियों के सिंघाड़े थे। संत मिलन का कार्यक्रम बढ़वाण में रखा गया था। समागत संतों की अगवानी में संत पहुंच गए। इस स्वागत कार्यक्रम में आचार्यश्री का संदेश महत्त्वपूर्ण था। समागत लोगों पर तेरापंथ की एकता का व्यापक प्रभाव पड़ा। अनेक क्षेत्रों के लोगों की उपस्थिति, उनमें ध्रांगध्रा के प्रभु भाई आदि आये थे। उनसे मुनिश्री मीठालालजी ने चातुर्मासिक स्थान आदि के बारे में जानकारी प्राप्त की।

कुछ दिन संतों के साथ रहकर सभी अपने-अपने क्षेत्रों में विचरण के लिए प्रस्थित हो गए। हमारा कुछ दिन मुनिश्री कानमलजी के साथ बांकानेर में तथा कुछ दिन मुनिश्री चन्दनमलजी के साथ मोरवी में रहना हुआ। उनके अनुभवों से बहुत सारी जानकारियां प्राप्त हुईं।

स्वामीजी के युग की स्मृति

विक्रम संवत् 2010, सन् 1953 का चातुर्मासिक प्रवेश ध्रांगध्रा (सौराष्ट्र) में हुआ। स्थान विशाल था। गोदामों के रूप में काम लिया जाता था, किंतु हमें बहुत सीमित स्थान प्राप्त हुआ। सुबह तथा रात्रि में व्याख्यान नीचे डेहले में होता और हमारे रहने, सोने, आहार-पानी के लिए ऊपर एक कमरा मिला। उसमें भी आधे कमरे में सामान भरा रहता और आधा हमारे काम आता। प्राय: प्रतिदिन

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

सामान ले जाने और रखने के लिए कर्मचारियों का आवागमन चलता। इसलिए आहार करने में भी कठिनाई आ जाती। स्वामीजी के युग की स्मृति हो जाती, जिससे स्थान संबंधी संवेदना नहीं होती। कमरे के बाहर बरामदा होने से रात्रि में उसका उपयोग अच्छा हो जाता।

भोजन के समय में कितना अंतर

उस समय हमारे धर्मसंघ में गोचरी एक ही समय होती। प्रहर आने के बाद व्याख्यान संपन्न होता और गोचरी का समय हो जाता। यहां सौराष्ट्र में दो प्रहर आने के बाद भोजन का समय होता है। इतने लम्बे समय में हमारा अध्ययन हो जाता, व्याख्यान हो जाता, विश्राम भी कर लेते, फिर भी गोचरी का समय नहीं आता। निरन्तर लम्बे समय तक भूख के कारण शरीर पर विपरीत असर होना सहज था। आहार भी दाल-भात प्रधान होने से हमारे अनुकूल इतना नहीं था। स्वास्थ्य की दृष्टि से निवेदन करवाने पर आचार्यश्री ने फरमाया–'शहरों में जहां दूर-दूर घर होते है, वहां दूसरे प्रहर में जाने से कठिनाई होती है तो प्रथम प्रहर में गोचरी की जा सकती है।' इस आदेश के बाद काफी अनुकूलता हो गई। ध्रांगध्रा में जैनेतर लोगों का सम्पर्क अधिक होने से गोचरी-पानी अधिकांश उन्हीं परिवारों में होती। प्रातः व्याख्यान में आने वालों की संख्या सीमित थी, किंतु रात्रि में संख्या बढ़ जाती। चतुर्मास से पूर्व वस्त्र के लिए दुकानों में गए तो जैन, जैनेतर सभी ने आग्रहपूर्वक वस्त्र का दान दिया।

प्रकृति की लीला

भाद्रपद माह की एक रात्रि में मूसलाधार बारिश हुई। 3 घंटों में 7 इंच वर्षा अंकित की गई। चारों ओर पानी ही पानी भर गया। हम जिस डेहले में थे वह भी पानी से भर गया जो कि धीरे-धीरे निकला। प्रातः पंचमी समिति के लिए गांव के बाहर गए तो देखा जो नदी पहले शांत भाव से बहा करती थी, उसमें बांसों ऊपर तक पानी बह रहा था, फिर भी वह अपनी सीमा में थी। हम संतों ने पहली बार यह दृश्य आश्चर्यचकित होकर देखा। प्रकृति की लीला बड़ी विचित्र होती है।

एक नई बीमारी

चतुर्मास संपन्न कर अनेक गांवों, नगरों में विचरण किया। हमने देखा–बैंगन की मौसम में प्राय: घरों में बैंगन की सब्जी मिलती ही है। एक गांव में गोचरी में वह सब्जी ज्यादा आ गई। उसका उपयोग सायं किया। उससे मेरे पेट में रात्रि के समय गैस बनकर भयंकर वेदना उत्पन्न हो गई। चार-पांच घंटे तक शरीर तड़फता रहा। फिर उल्टी, दस्तें होने लगीं, हाथों-पैरों में बाइन्टे आने लगे। दोनों संतों ने शरीर को पूरा संभाल रखा था और करे भी तो क्या? रात्रि का समय जो था। प्रातःकाल डॉक्टर को दिखाया, उपचार किया। उस समय की वेदना तो मिट गई, किंतु स्थाई लाभ नहीं हुआ। 15-20 दिनों बाद ज्यादा-कम रूप में यह उभर जाती।

जहां समस्या है, वहां समाधान भी है

हम तीनों संत राजकोट से 15 किलोमीटर का विहार कर एक छोटे गांव में पहुंचे। समय पर गोचरी के लिए गए तो घर-घर भोजन तैयार, देने की भी भावना, किंतु पानी नहीं मिला। उसके अभाव में भोजन ले लें तो कठिनाई। तब अग्रणी मुनिश्री ने कहा–'एक काम करो। ये भरवाड़ लोग शहर में दूध बेचकर आ रहे हैं। उनको समझाओ कि ये दूध के ड्रम पानी से धोएंगे, वह पानी हमारे काम आ सकता है।' वैसा किया। इस प्रकार से पानी की समस्या हल हो गई। वहां गांवों में ऐसा भी क्रम चलता है कि रसोई हो जाने के बाद चूल्हे को खाली नहीं रखते, पानी का बर्तन रख देते है। वह पानी भी काम में आ जाता।

विक्रम संवत् 2011, सन् 1954 के चतुर्मास के लिए जामनगर (सौराष्ट्र) में प्रवेश हुआ। वहां सुजानगढ़ के सेठियों का वर्षों से व्यवसाय का कार्य चल रहा था। शहर के मध्य बाजार में मकान था। हमें उपर की मंजिल में एक हॉल, कमरा, बाहर का बरामदा रहने के लिए मिल गया।

मुनिश्री प्रातः व्याख्यान में जैन सिद्धान्त दीपिका का सुन्दर, सरल विवेचन करते। वह लोगों को बहुत अच्छा लगता। जामनगर में जैन परिवार बहुत निवास करते हैं। सुबह की गोचरी दूर घरों की और दूसरे प्रहर की गोचरी नजदीक के घरों की हो जाती। उस समय के दैनिक गुजराती पत्र में 'बन्धन टूट्या' नामक एक धार्मिक उपन्यास धारावाहिक रूप में प्रकाशित होता था। वह हमारे लिए प्रतिदिन का पठनीय विषय हो गया। संख्या की दृष्टि से नहीं, किंतु गुणवत्ता की दृष्टि से चतुर्मास सरसता के साथ संपन्न हुआ।

मुम्बई की ओर प्रस्थान

आचार्यश्री का आदेश आने से मुनिश्री कानमलजी तथा मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) दोनों सिंघाड़ों का साथ में विहार हुआ और मुम्बई मर्यादा महोत्सव के अवसर पर आचार्यश्री की सन्निधि में पहुंच गए। महोत्सव की संपन्नता के बाद आचार्यप्रवर पूना (महाराष्ट्र) पधारे, तब मुनिश्री मीठालालजी को पूना चतुर्मास का आदेश दिया।

विक्रम संवत् 2012, सन् 1955 का चातुर्मासिक प्रवेश मुनिश्री आदि संतों का पूना शहर की एक धर्मशाला में हुआ। लगभग चार ही मास खिड़की का एक डेरा और नारायणगांव का एक डेरा, दोनों सेवा में रहे। उस समय शहर के श्रावकों में श्रीवेणीरामजी, श्री मोहनलालजी, श्री चम्पालालजी आदि थे। जितने थे, उन्होंने अच्छा लाभ लिया। खिड़की के मुख्य कार्यकर्ता श्री फूलचन्दजी मरलेचा तथा शान्तिलाल मरलेचा के प्रयासों से अणुव्रत आदि के कई सार्वजनिक कार्यक्रम आयोजित हुए। वे कार्यक्रम बहुत प्रभावक रहे।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

आगम कार्य के लिए निर्देश

उज्जैन (मध्यप्रदेश) के चतुर्मास में आचार्यप्रवर के नेतृत्व में आगम संपादन का महत्त्वपूर्ण कार्य प्रारम्भ हुआ। वहां से मुनिश्री को एक आगम का कार्य सम्पादित करने लिए निर्देश प्राप्त हुआ। मुनिश्री ने संतों के सहयोग से वह कार्य अपने ढ़ंग से संपन्न कर गुरु चरणों में प्रेषित किया।

पूना से गुरुदर्शनार्थ प्रस्थान

पूना (महाराष्ट्र) चतुर्मास सानन्द संपन्न कर भीलवाड़ा (राजस्थान) की ओर विहार किया, क्योंकि वहां आचार्यश्री के सान्निध्य में मर्यादा महोत्सव का आयोजन था। आचार्यश्री उज्जैन से भीलवाड़ा मर्यादा महोत्सव से पूर्व गंगापुर पधारे। हम भी गुरु सन्निधि में पहुंच गए। वहां पर नई-पुरानी धारणाओं को लेकर धर्मसंघ में एक अंतरंग संघर्ष उभरकर सामने आया और धर्मसंघ के कई वरिष्ठ संत संघ से बहिर्भूत हो गए। इससे समाज में एक हलचल हो गई।

भीलवाड़ा महोत्सव के बाद मुनिश्री के सिंघाड़े को यही आदेश मिला कि जब तक ये साधु मेवाड़ में भ्रमण करें, तब तक तुमको भी उन्हीं क्षेत्रों में विचरण करना है और श्रावक समाज को भ्रमित होने से बचाना है।

आचार्यश्री के आदेशानुसार यह क्रम प्रारंभ हो गया। प्राय: सभी क्षेत्रों में नई-पुरानी धारणाओं की चर्चा चलती और मुनिश्री उनका स्पष्टीकरण करते। जब वे लोग मेवाड़ का घाटा उतर गए, तब हमारा वह कार्य संपन्न हो गया। आचार्यश्री ने हमारा चतुर्मास जोधपुर घोषित किया, तब मेवाड़ से मारवाड़ के क्षेत्रों का स्पर्श करते हुए हम जोधपुर के उपनगरों में पहुंच गए।

विक्रम संवत् 2013 (सन् 1956) के चतुर्मास के लिए जोधपुर (जाटावास) में प्रवेश किया। यहां का श्रावक समाज देव, गुरु, धर्म के प्रति आस्थावान है, फिर भी कुछ लोगों में वर्तमान के वातावरण का असर हो ही जाता है। मुनिश्री के इस प्रवास में काफी लोगों की शंकाएं समाहित हुईं। यह वहां के श्रावक समाज की विशेषता माननी चाहिए कि कुछ श्रावक शंकाशील होते हुए भी निरन्तर संपर्क में बने रहे। उन्होंने संतों के पास आना-जाना, दर्शन, व्याख्यान आदि कार्यक्रमों में भाग लेना छोड़ा नहीं। मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) के व्यक्तित्व एवं व्यवहार से श्रावक लोग प्रभावित थे, इसलिए शांत वातावरण में चतुर्मास के तपस्या आदि सारे कार्यक्रम अच्छे ढ़ंग से चले। मुनिश्री को हम दोनों सहयोगी संतों का बराबर सहयोग था। चतुर्मास के बाद मुनिश्री आदि संत विहार कर सरदारशहर मर्यादा महोत्सव पर पधार गए।

विक्रम संवत् 2014, सन् 1957 का चतुर्मास आचार्यश्री का सुजानगढ़ हुआ। आगम कार्य की दृष्टि से मुनिश्री मीठालालजी के सिंघाड़े को गुरुकुलवास में रखा। हमें भी गुरु-उपासना एवं आगम कार्य में सहभागी बनने का मौका मिल गया।

जो हुआ अच्छा हुआ

आचार्यश्री का विक्रम सम्वत् 2015-2016 का चतुर्मास क्रमश: कानपुर एवं कोलकाता घोषित हुआ। इस यात्रा में आचार्यश्री ने कई सिंघाड़ों को साथ में रखा। उनमें मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) का सिंघाड़ा भी था। लाडनूं से यात्रा प्रारम्भ होने वाली थी, उसके तीन दिन पहले अचानक मेरी वही पुरानी गैस की बीमारी पुन: भयंकर रूप में उभरकर सामने आ गई। आचार्यश्री ने सोचा और डीडवाना के वैद्यराजजी से परामर्श कर यही फरमाया कि मुनि ताराचन्द मुनि शुभकरण के पास रहकर वैद्यराज की चिकित्सा करवा ले, क्योंकि वे ठीक करने की जिम्मेदारी ले रहे हैं। इस निर्णय का तात्पर्य हुआ कि आचार्यश्री के साथ की मेरी बंगाल यात्रा स्थगित हो गई।

हम डीडवाना गए और वैद्यराजजी ने अपने उपचार में दो मास तक भोजन के बाद कुमार्यासव का सेवन करवाया, जिससे मैं पेट की बीमारी से मुक्त हो गया। यद्यपि इस बीमारी के कारण मैं गुरु-सेवा व सुदूर प्रांतों की यात्रा से वंचित रहा, परन्तु गुरुकृपा से स्वास्थ्य की दृष्टि से यह प्रवास बहुत सार्थक हो गया।

विक्रम संवत् 2015, सन् 1958 के चतुर्मास के लिए मुनिश्री शुभकरणजी के साथ मेरा भी छोटी खाटू में प्रवेश हुआ। तीसरे संत थे मुनि हर्षवर्धनजी। चतुर्मास के बाद लाडनूं, सुजानगढ़ आदि क्षेत्रों में कुछ दिन रहते हुए नोखामंडी, देशनोक आदि क्षेत्रों में प्रवास किया।

जन्मभूमि में पहला चतुर्मास

विक्रम संवत् 2016 (सन् 1959) का चतुर्मास मुनिश्री शुभकरणजी (सरदारशहर) के साथ जन्मभूमि रासीसर (बीकानेर) में हुआ। इस चतुर्मास के लिए मेरी संसारपक्षीया माताजी ने सैंथिया (बंगाल) मर्यादा महोत्सव पर आचार्यश्री के दर्शन किए और विशेष निवेदन किया, तब यह चतुर्मास रासीसर (बीकानेर) को प्राप्त हुआ। मेरा जन्मभूमि में पहला चतुर्मास था। गांववालों का, विशेषकर परिवारवालों का प्रसन्न होना सहज था। प्रात: व्याख्यान मुनिश्री देते और मध्याह्न में मैं देता। घर खुले कम थे, फिर भी भक्ति-भावना वर्धमान थी। ब्राह्मण, पुरोहित, बिश्नोई आदि जैनेतर परिवारों ने भी सत्संग का अच्छा लाभ उठाया।

सरसता के साथ चतुर्मास संपन्न कर गंगाशहर, कालू, श्रीडूंगरगढ़ रहते हुए सरदारशहर पहुंचे। वहां घोर तपस्वी मुनिश्री सुखलालजी के संथारा चल रहा था। आचार्यश्री भी कोलकाता का चतुर्मास संपन्न कर द्रुतगति से चलते हुए सरदारशहर पधारने वाले थे।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

दो वर्ष बाद गुरुदर्शन

आचार्यप्रवर दो वर्ष की पूर्वांचल की यात्रा सानन्द संपन्न कर राजस्थान पधार गए। पूरा धर्मसंघ प्रसन्नता का अनुभव कर रहा था। हम भी दो वर्ष बाद सरदारशहर में गुरुदर्शन कर धन्यता का अनुभव कर रहे थे।

मुझे गुरुकृपा से पुन: मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) का सान्निध्य प्राप्त हो गया। अस्वस्थता के कारण मेरे ये दो चतुर्मास मुनिश्री शुभकरणजी (सरदारशहर) के साथ हुए। प्रथम वर्ष में ही स्वास्थ्य प्राप्त हो गया। वे मेरे सहदीक्षित ज्येष्ठ मुनि थे। उन्होंने एक अच्छे साथी की भांति मेरे साथ व्यवहार रखा। वह प्रवास सुखद रहा।

आचार्यश्री थली के विभिन्न क्षेत्रों को संभालते हुए मेवाड़ की ओर प्रस्थित हो गए। स्वास्थ्य की दृष्टि से मुनिश्री मीठालालजी का प्रवास कुछ समय के लिए सुजानगढ़ तथा लाडनूं में हुआ। स्वास्थ्य की अनुकूलता होने पर ज्येष्ठ महीने में विहार कर हम तीनों संतों ने मेवाड़ में आचार्यश्री के दर्शन कर लिए। आचार्यश्री की आज्ञानुसार मुनिश्री आदि हम तीनों संत गांधी सेवा सदन, राजनगर, जहां मुनिश्री नथमलजी आदि संत विराजमान थे, वहां उनके साथ रहने पहुंच गए।

मधुमक्खियों का आक्रमण

गांधी सेवा सदन से मैं पहाड़ी एरिया में शौच निवृत्ति हेतु गया। शौच से निवृत्त होकर वापस जल्दी-जल्दी आ रहा था, क्योंकि आचार्यश्री वहां पधारने वाले थे। ज्योंही मैं एक छोटे वृक्ष के पास से निकला कि अचानक मधुमक्खियों ने मेरे पर आक्रमण कर दिया। मैंने रजोहरण और पात्र को वहीं छोड़ा और पछेवड़ी (चद्दर) से उनको हटाता हुआ पीछे लौटने लगा, फिर भी चेहरे पर दो-तीन डंक तो लगा ही दिए। जब वे चली गईं, तब मैं धीरे-धीरे वापस आकर रजोहरण व पात्र को लेकर स्थान पर पहुंचा और सीधा वैद्यजी के रूम में गया, तब तक चेहरे पर सूजन आ गई। उन्होंने तत्काल चिकित्सा शुरू कर दी। आचार्यश्री वापस पधार गए, तब संत मेरे पास इकट्ठे हो गए। प्रथम दृष्ट्या मेरा चेहरा संतों के लिए हास्य का पात्र बन गया। मुनिश्री नथमलजी (टमकोर), मुनिश्री कानमलजी, मुनिश्री मीठालालजी आदि सभी ने पूछा–'यह कहां? कैसे हुआ?' तब मैंने सारा घटनाक्रम सुनाया। सारी घटना जान लेने के बाद वे अपेक्षित सेवा में तत्पर हो गए।

ऐतिहासिक चतुर्मास

विक्रम संवत् 2017, सन् 1960 का यह तेरापंथ द्विशताब्दी वर्ष का चतुर्मास था। इस वर्ष आचार्यश्री ने मेवाड़ में प्रवासित प्राय: सभी सिंघाड़ों को गुरुकुलवास में रहने का अवसर प्रदान किया। मुनिश्री मीठालालजी का सिंघाड़ा भी उसमें आ गया। सन् 1961 का मुनिश्री मीठालालजी का चतुर्मास गोगुन्दा फरमाया। गोगुन्दा मंत्री मुनिश्री मगनलालजी एवं घोर तपस्वी मुनिश्री सुखलालजी की जन्मभूमि है।

सायरा चतुर्मास में विराजित मुनिश्री सोहनलालजी (राजगढ़) दो संत ही थे। उनकी अधिक अस्वस्थता के कारण मुनि विजयराजजी (राजगढ़) को आचार्यश्री ने गोगुन्दा से सायरा जाने का आदेश दिया। उनके जाने से यहां दो संत रहे, किंतु चतुर्मास में होने वाले सारे कार्यक्रम वैसे ही व्यवस्थित ढ़ंग से चले। मुनिश्री के चतुर्मास से गोगुन्दावासी विशेष रूप से प्रसन्न थे। शेषकाल में चतुर्मास से पूर्व आस-पास के क्षेत्रों के विद्यार्थियों का एक ग्रीष्मकालीन शिविर गोगुन्दा में ही मुनिश्री मीठालालजी तथा मुनिश्री सुमेरमलजी (लाडनूं) के सान्निध्य में आयोजित हुआ, जो अच्छी उपस्थिति में अच्छे ढ़ंग से संपन्न हुआ।

चतुर्मास के बाद मेवाड़ से विहार कर भीनासर मर्यादा महोत्सव से पूर्व ही हम श्री गुरुदेव की सन्निधि में पहुंच गए। इस अवसर पर आचार्यश्री ने मुनिश्री के साथ तीसरे संत मुनि रवीन्द्रकुमारजी को वंदना करवाई, जो गोगुन्दा के एवं मंत्री मुनिश्री के परिवार से संबंधित थे।

विक्रम संवत् 2019 (सन् 1962) का चतुर्मास मुनिश्री आदि हम तीनों संतों का आचार्यश्री के सान्निध्य में उदयपुर में (मेवाड़) में हुआ। स्थान था–ओसवाल पंचायत भवन।

विक्रम संवत् 2020 (सन् 1963) का चातुर्मासिक प्रवेश सेठिया बिल्डिंग (अहमदाबाद शहर) में किया। शहर के मध्य होने के कारण लोगों का दर्शनार्थ आवागमन बहुत रहा।

विद्यार्थियों के लिए दो सप्ताह

'विद्यार्थी उद्बोधन' का पाक्षिक कार्यक्रम अणुव्रत के अनेक कार्यक्रमों में से एक था। चतुर्मास समाप्त होने पर मुनिश्री दिल्ली दरवाजे के पास एक श्रावक के मकान में पधार गए। वहां प्रतिदिन कभी एक, कभी दो विद्यालयों में हम संतों के प्रवचन होते। उसके बाद कार्यकर्ता लोग विद्यार्थी अणुव्रत तथा शिक्षक अणुव्रत के फॉर्म भरवाते। कभी-कभी जिज्ञासाओं का समाधान भी मुनिश्री करवाते। दैनिक पत्रों में कार्यक्रम की न्यूज प्रतिदिन आने से अच्छा वातावरण निर्मित हुआ।

अणुव्रती कार्यकर्ता श्री गणेशमलजी दूगड़ तथा श्री शुभकरण जी सुराणा की सूझ-बूझ तथा अन्य युवकों के श्रम से विद्यालयों का पाक्षिक कार्यक्रम संपन्न हुआ।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

आसक्ति का प्रायश्चित्त

इस कार्यक्रम के बाद हमें साबरमती नदी के उस पार कॉलोनियों आदि में विचरण करना था। इन दो सप्ताह में आहार, स्थान आदि की सुविधा कम रही, क्योंकि इधर आस-पास श्रावकों के परिवार कम थे और कार्यक्रमों की व्यस्तता के कारण गोचरी के लिए अन्य स्थानों में जाना भी कठिन था। रात्रि में एक अवांछित विचार आया कि कल हम अमुक कॉलोनी में अमुक श्रावक के घर जा रहे हैं, जो अर्थ और भक्ति भावना से भी संपन्न है। उस परिवार में सभी प्रकार के पथ्य आहार की इतनी बहुलता है कि तीन ही संतों का कल्पनीय आहार आदि उपलब्ध हो सकता है। अब 15 दिन की क्षतिपूर्ति वहां हो जाएगी। तत्काल भीतर से आवाज आई–'अरे! क्या खाने के लिए मुनि बने हो?' उसी समय मैं संकल्पित हो गया कि जब तक उस कॉलोनी में रहेंगे, तब तक मुझे साधारण दो वस्तुओं के अतिरिक्त उस परिवार की और कोई वस्तु नहीं खानी है। वहां के प्रवास में मुनिश्री ने दो-तीन बार मुझे पूछा–'यह खाद्य-संयम क्यों? किस कारण से चल रहा है?' तब मैंने मुस्कुराते हुए कहा–'मुनिश्री! समय आने पर निवेदन करने का भाव है।' जब वहां से विहार कर दूसरी कॉलोनी में चले गए, तब संतों के सामने अपने मन की बात प्रस्तुत की। दोनों संतों ने सुनकर सात्त्विक प्रसन्नता की अनुभूति की।

विक्रम संवत् 2021 (सन् 1964) का चतुर्मास मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) आदि हम संतों का अहमदाबाद-शाहीबाग में सागरमल शुभकरण दूगड़ के बंगले के पास में हुआ। वहां तेरापंथी परिवार कम थे, किंतु जो थे वे दोनों दृष्टियों से संपन्न थे। आस-पास कस्तूरभाई लालभाई आदि कई जैन परिवार भी रहते थे। उस समय भगवतीभाई पटेल, मोटीबहिन, दोनों पति-पत्नी समझपूर्वक नए ही तेरापंथी बने थे। उनका बंगला भी पास में था। स्वरूपचन्दजी, शुभकरणजी, गणेशमलजी दूगड़ (सरदारशहर-अहमदाबाद) तीनों भाइयों का संयुक्त परिवार, माताजी के नेतृत्व में चल रहा था। शाहीबाग चतुर्मास का मूल निमित्त उनका धार्मिक परिवार ही था।

सार्वजनिक प्रवचन

अहमदाबाद में श्री गणेशमलजी दूगड़ तथा श्री शुभकरणजी सुराणा दोनों ही प्रबुद्ध एवं चिन्तनशील व्यक्ति थे। उन्होंने मुनिश्री से परामर्श कर प्राय: प्रति रविवार को एक प्रसिद्ध हॉल में मुनिश्री के एक निश्चित विषय पर प्रवचन प्रारम्भ किए। उसमें उस विषय से संबंधित उसी प्रकार के एक प्रबुद्ध व्यक्ति को मुख्य वक्ता के रूप में आमंत्रित करते। संयोजन भी दोनों में से कोई एक करता। यह क्रम इतना अच्छा जमा कि इसकी सुन्दर प्रतिक्रिया सुनकर अन्य कई प्रबुद्ध लोग आने लगे। दैनिक पत्रों में भी इस कार्य की विशेष न्यूज प्रकाशित होती थी।

बालोतरा में निवेदन

सन् 1965 का मर्यादा महोत्सव बालोतरा में आयोजित हुआ। उस समय आचार्यप्रवर को मुनिश्री मीठालालजी ने निवेदन किया–'गुरुदेव! मेरी उत्कट भावना है कि अब मैं आत्म-साधना के विशेष प्रयोगों का जीवन जीऊं।' आचार्यश्री ने बहुत ही वात्सल्यपूर्ण शब्दों में मुनिश्री की भावना की अनुमोदना की। मुनिश्री का राजनगर (मेवाड़) में चतुर्मास घोषित हुआ। एक दिन मुनिश्री ने हम दोनों संतों (मुनि ताराचन्द, मुनि रवीन्द्रकुमार) को कहा–'अब जनसम्पर्क और व्याख्यान आदि से मुक्त होकर मैं साधना में अपना अधिक समय लगाना चाहता हूं, अत: तुम दोनों को मेरे इस कार्य में सहयोग करना है।' कुछ चर्चा-परिचर्चा करने के बाद हमने निवेदन किया–'चतुर्मास से पूर्व जिस दिन गांव में जाएं, उसी समय का एक संक्षिप्त प्रवचन आप देने की कृपा करें। उसके सिवाय जैसा आप कहेंगे, वैसा करने का भाव है।' शेषकाल में ही एक प्रकार से साधना शुरू हो गई।

विक्रम संवत् 2022 (सन् 1965) का चातुर्मासिक प्रवेश राजनगर (मेवाड़) में हो गया। प्रथम दिन ही मुनिश्री ने मुनिश्री मानमलजी, जिनका चतुर्मास कांकरोली था, वे उस दिन वहीं थे और हम दोनों संतों के सामने विस्तार से अपनी भावी साधना की रूपरेखा प्रस्तुत की, फिर अपनी भावना कुछ विशेष अलग-अलग श्रावकों के सामने भी रखी और उनकी जिज्ञासाओं का समाधान भी किया। दो-तीन दिन में ही मुनिश्री अपनी भावना को श्रावक समाज के गले उतारने में सफल हो गए। आचार्यश्री का चतुर्मास दिल्ली था। अणुव्रती कार्यकर्ता श्री देवेन्द्रभाई कर्णावट के माध्यम से आचार्यप्रवर की अनुमति भी प्राप्त हो गई।

आचार्यप्रवर के शब्दों में अपूर्व साधना

चतुर्मास प्रारम्भ होते ही मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) अपने चिन्तन के अनुसार साधना में लीन हो गए। इन्द्रिय प्रतिसंलीनता तथा कषाय प्रतिसंलीनता का यह एक अद्भुत प्रयोग था अर्थात् पांच इन्द्रियों का संयम तथा चार कषाय को उपशम रखने का सतत अभ्यास करना। किसी के सामने दृष्टि उठाकर देखना नहीं। पढ़ना-लिखना बिल्कुल बन्द, बस केवल ध्यान-ध्यान। सजगता-सजगता।

हम संतों के लिए भी आचार्यश्री ने फरमाया–'मुनि ताराचन्द तथा मुनि रवीन्द्रकुमार दोनों मुनि मीठालालजी की इस अपूर्व साधना में सहयोगी बनकर व्याख्यान आदि कार्यक्रमों का जिम्मेदारीपूर्वक संचालन करें।' लगभग साढ़े तीन मास तक यह अभिनव साधना का प्रयोग चला। मुनिश्री की भावना चार मास तक इसी क्रम को गतिमान रखने की थी, किंतु केन्द्र यानि आचार्यश्री का संकेत मिला कि तुम्हारी साधना के अनुभवों से दूसरे लोग भी लाभान्वित हों, इस दृष्टि से चतुर्मास के शेष 15 दिन जिज्ञासुओं के लिए रहे तो अच्छा होगा। इस गुरु इंगित के आधार पर 15 दिन आम जनता के लिए आरक्षित हो गए। इसका सभी लोगों ने लाभ उठाया।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

राजनगर से हिसार

राजनगर से विहार कर मुनिश्री मीठालालजी तथा मुनिश्री मानमलजी आदि हम संतों ने हिसार के पास एक गांव में आचार्यश्री के दर्शन किए तथा मर्यादा महोत्सव तक हिसार (हरियाणा) में गुरुकुलवास में रहे। हमने देखा–मुनिश्री द्वारा की गई साधना के प्रारूप को समझने के लिए संत समुदाय बड़ा ही उत्सुक था। आचार्यश्री ने साधना की सारी स्थितियों की जानकारी प्राप्त कर बहुत-बहुत प्रसन्नता व्यक्त की। मुनिश्री की भविष्य में लम्बे समय तक साधना की भावना को बहुमान देते हुए आचार्यश्री ने सारी व्यवस्थाएं सरदारशहर में निश्चित कीं।

आचार्यश्री का आशीर्वाद तथा संतों की सद्भावना लेकर हम तीनों संत चले और सरदारशहर के श्रीसमवसरण में पहुंच गए। आचार्यश्री ने हम दोनों संतों को फरमाया–'मुनि मीठालालजी की साधना में विशेष जागरूक रहना। पथ्य आदि की अपेक्षित व्यवस्था करना।' एकान्त स्थान की दृष्टि से दूगड़ विद्यालय के सामने श्री स्वरूपचन्दजी दूगड़ का गेस्ट हाउस उपयुक्त लगने से वह स्थान निश्चित किया।

लम्बे समय के प्रयोग

विक्रम संवत् 2023 (सन् 1966) का चातुर्मासिक प्रवेश मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) आदि तीन संतों का दूगड़ गेस्ट हाउस में हो गया और प्रवेश के साथ इन्द्रिय प्रतिसंलीनता आदि ध्यान साधना के अनेक प्रयोग शुरू हो गए। हम संतों के सामने भी नजर उठाकर नहीं देखना आदि। केवल आहार के लिए हमारे रूम में आते और जो निर्धारित भोजन था वह करके वापस अपने रूम में चले जाते। हम जिस गेस्ट हाउस में थे, वह श्री गणेशमलजी दूगड़ का था। दोनों सटे हुए ही थे। सूर्योदय के बाद शौच तथा भ्रमण के लिए जब मुनिश्री बाहर निकलते, तब आने वाले लोग मौन भाव से एवं दूर से ही दर्शन करके चले जाते। यह क्रम प्राय: प्रतिदिन का हो गया।

मुनिश्री के पथ्य आदि की दृष्टि से शहर के दूर घरों में भी जाना होता। गोचरी का जो भाग हमें प्राप्त था, उसकी भी व्यवस्थित गोचरी, संभाल आदि करते। चतुर्मास के अतिरिक्त जब कोई सिंघाड़ा नहीं होता तो हम संत श्रीसमवसरण में व्याख्यान देकर वापस आ जाते। इस प्रकार हमारा भी लम्बा प्रवास सरदारशहर में हो गया।

काले नाग की फुंकारें

दूगड़ गेस्ट हाउस के पीछे की ओर दांई तरफ खंडहर जैसे कई नोहरे हैं। गर्मी में बहुत बार छोटे-बड़े सर्प रात्रि में आते, कभी दिन में भी आते रहते। सुबह बालू रेत में उनके आने की लकीरें साक्षी होतीं। एक रात्रि में एक लम्बा-चौड़ा काला नाग दो बजे के करीब जहां मुनिश्री पट्ट पर सो रहे थे, वहां फन ऊपर-नीचे कर रहा था। मुनिश्री अचानक जागे और देखा एक नाग फन ऊपर किये बैठा है। मुनिश्री ने वहीं से संकेत द्वारा हम दोनों को जगाया और इशारा किया कि बाहर चले जाओ। हम समझ गए कि जरूर कोई सर्प जाति आई है। इस हलचल से नाग वहां से चला। मुनिश्री के पट्ट के नीचे होकर मेरे और रवीन्द्रमुनि के बिस्तर के पास से गुजरता हुआ बरामदे के नीचे उतर गया। वह वहां कुंडली मारकर बैठ गया और फन को ऊपर कर तेज फुंकारने लगा। हमने पहली बार इस प्रकार का दृश्य देखा, जैसे कोई प्राणायाम कर रहा हो। रात्रि में गेट पर सोने वाले दो चौकीदार आ गए और सामने दूगड़ विद्यालय के चौकीदार को बुला लाए। सोचा–क्या करना चाहिए? निर्णय लिया कि इसको संडासे से पकड़कर घड़े में डालकर बन्द कर दें। सुबह दूर जंगल में छोड़ आएंगे। सारी उपयुक्त सामग्री वहां पर रखते थे। दो चौकीदारों ने लाठियों से नाग को दाबे रखा और एक चौकीदार ने बड़े संडासे से उसकी गर्दन को पकड़ लिया। ज्योंही घड़े में डालने लगे, सर्प ने घड़े के आंटे लगा लिए। बहुत मुश्किल से उन आंटों को हटाकर घड़े में डाला और कपड़ा बांध दिया। सुबह प्रकाश होते ही दो चौकीदार उसको लेकर दूर जंगल में छोड़कर आए। इस सारे दृश्य को देखते-देखते हमारे प्रतिक्रमण का समय हो गया।

धूप सेवन के लिए मैं बहुत बार सुबह छत पर जाता। एक दिन काला नाग सूर्य की तरफ फन उठाए बैठा था। मैं देखकर वापस आ गया। मन में प्रश्न उभरा कि क्या हम सर्पों की बांबी पर बैठे हैं?

पुन: गुरुदर्शन

सन् 1967 का मर्यादा महोत्सव बीदासर संपन्न कर आचार्यश्री लाडनूं से दक्षिण भारत की यात्रा प्रारम्भ करने वाले थे। हमारे निवेदन पर आचार्यश्री ने हम दोनों संतों को गुरुदर्शन का आदेश फरमाया। यहां ध्यान साधक मुनिश्री की सेवा के लिए मुनिश्री दुलीचन्दजी (सरदारशहर) आदि तीन संतों को भेजा। उनके आने के बाद हम दोनों संतों ने लंबे-लंबे विहार कर लाडनूं में आचार्यश्री के दर्शन कर लिए और दो दिन उपासना कर वापस सरदारशहर पहुंच गए।

मुनिश्री दुलीचन्दजी (सरदारशहर) ने आचार्यश्री से निवेदन करवाया कि मेरी भी हार्दिक भावना है कि मुनिश्री की तरह मैं भी अपने ढ़ंग से एकान्त साधना करूं। आचार्यश्री की अनुमति प्राप्त हो गई और साथ में यह भी फरमाया–'आज्ञा, आलोयणा तथा व्यवस्था मुनि ताराचन्द की रहेगी।' उन्होंने इस बात को भी स्वीकार किया। अपनी प्रवहमान साधना में ही मुनिश्री मीठालालजी सरदारशहर से चूरू पधार गए।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

विक्रम संवत् 2024 (सन् 1967) का वार्षिक चातुर्मासिक प्रवेश मुनिश्री मीठालालजी, मुनिश्री दुलीचन्दजी आदि छह संतों का चूरू के कोठारी भवन में हो गया। कोठारी भवन बहुत विशाल था। ऊपर की मंजिल में दोनों ध्यान साधकों के लिए अलग-अलग कमरों में व्यवस्था हो गई। हम संतों के लिए नीचे का स्थान ही पर्याप्त था। व्याख्यान देने हम संत शहर के मूल स्थान में (श्री हणूतमलजी सुराणा की हवेली का प्रांगण) चले जाते। इसलिए लोगों के लिए कोई कठिनाई नहीं रही। चतुर्मास आदि के सारे कार्यक्रम लगभग 12 महीने ही व्यवस्थित रूप से संचालित हुए। संतों के श्रम से श्रावक समाज की भक्ति-भावना भी वर्धमान रही और संतों की साधना की दृष्टि से भी चूरू का प्रवास अच्छा रहा। श्री मेघराजजी सुराणा की सेवा विशेष रही। चूरू से दोनों ध्यान साधक मुनिवरों ने अपनी साधना को यथावत् रखते हुए विहार किया।

विक्रम संवत् 2025 (सन् 1968) का चतुर्मास संतों के साथ हंसमहल (सुजानगढ़) के एकान्त वातावरण में हुआ। शहर में मुनिश्री नथमलजी (बागोर) आदि संत वर्षों से विराजमान थे।

मेरी संसारपक्षीया मां के विशेष निवेदन पर आचार्यश्री ने मेरा चतुर्मास रासीसर (बीकानेर) फरमाया। यहां साधक संतों की सेवा के लिए मुनिश्री सुमेरमलजी 'सुमन' के सिंघाड़े को फरमाया, क्योंकि उनकी मां की भावना थी कि मुनिश्री का चतुर्मास मिल जाए तो घर बैठे सेवा हो जाए। दोनों कार्य हो गए।

मां के लिए दूसरा चतुर्मास

विक्रम संवत् 2025 (सन् 1968) का चतुर्मास मुनि ताराचन्द, मुनि रुघलालजी तथा मुनि चिदानंदजी का रासीसर (बीकानेर) में हुआ। जन्मभूमि में मेरा यह दूसरा चतुर्मास था। वह भी माताजी के निवेदन पर आचार्यश्री ने कृपा करवाई। लोगों में उत्साह अच्छा था। इस बार देशनोक चतुर्मास नहीं होने के कारण मुनि रुघलालजी प्रायः संवत्सरी तक व्याख्यान देने देशनोक जाते और सायं वापस आ जाते। मैंने दो मास तक रामचरित्र का वाचन भी किया। बिश्नोई, ब्राह्मण, पुरोहित आदि लोगों ने भी समय-समय पर लाभ लिया।

मां के ऋण से उऋण हो गया

लगभग ढ़ाई मास तक संसारपक्षीया मां ने संतों की सेवा, दर्शन, व्याख्यान, दान आदि का अच्छा लाभ लिया। उसके बाद 5-10 दिन अस्वस्थ रही और सागारी संथारे में आश्विन कृष्णा 11 को अर्धरात्रि के पश्चात् दिवंगत हो गई। गुरुदेव के अनुग्रह से मुझे अनायास मातृ ऋण से उऋण होने का अवसर मिल गया। परिवारजनों को भी बहुत अच्छा लगा। धार्मिक वातावरण में जीते हुए मां ने अपने जीवन की अंतिम सांस ली।

मां की दो अमूल्य शिक्षाएं

मां के स्वर्गवास के पश्चात् उनकी सेवाएं और शिक्षाएं स्मृति पटल पर उभर आईं। मेरी दीक्षा के बाद माताजी परिवार के साथ सेवा, दर्शन करने प्रतिवर्ष एक बार तो अवश्य आती। सेवा करते समय उनको कुछ न कुछ ज्ञान की बातें सुनाना बहुत अच्छा लगता। कम बोलना तो उनकी सहज प्रकृति थी। सेवा कराते समय मैं भी उनको कुछ त्याग, वैराग्य की बातें सुनाने का लक्ष्य रखता। जब सेवा कर वापस जाती तो दो शिक्षा की बातें तो अवश्य कहती। पहली बात–'महाराज! गुरुदेव की आज्ञा में रहना। दूसरी बात–साधुपन का अच्छा पालन करना।' उनकी ये दोनों शिक्षाएं मेरे लिए तो अमूल्य थीं। वे चली गईं, किंतु उनकी शिक्षा का अनुपालन करना मेरी साधना का ही अंग है।

मां का तकदीर तेज था

इस चतुर्मास से पूर्व माताजी ने एक बार मुझे कहा–'महाराज! मेरी अब तीन इच्छाएं-भावनाएं हैं। वे पूरी हो जाएं, बस, और कुछ नहीं चाहिए।' मैंने आदरपूर्वक पूछा–'आपकी तीन इच्छाएं क्या हैं?' उन्होंने स्पष्टता से कहा–'मैं चलती-फिरती चली जाऊं, परतंत्र न बनूं। दूसरी इच्छा है–अंतिम समय में आप मेरे पास रहो। तीसरी इच्छा है–मुझे भी संथारा आए।' मैंने कहा–'आप हलुकर्मी आत्मा हैं इसलिए आपकी दो बातें तो पूरी हो सकती है, किंतु मैं पास में रहूं यह कैसे संभव है? हां, इतना जरूर है कि मैं आस-पास विचरता रहूं और मुझे आपकी अस्वस्थता की सूचना मिले तो मैं आचार्यश्री को निवेदन करके भी आ सकता हूं।' माताजी का तकदीर तेज था, इसलिए सहज ही तीनों इच्छाएं पूरी हो गईं।

मांजी के दिवंगत होने के बाद भाईजी तेजकरणजी आदि सभी भाई सेवा-दर्शन नियम से करते रहे हैं, किंतु भाई फूसराजजी व सिरियादेवी आदि मांजी की सेवा परम्परा का प्रतिवर्ष निर्वाह कर रहे हैं।

रासीसर से सरदारशहर

रासीसर (बीकानेर) के चतुर्मास के बाद मुनिश्री चम्पालालजी के दर्शनार्थ गंगाशहर गए। कुछ दिन ठहरकर वापस रासीसर, नोखा मंडी होते हुए हम लाडनूं पहुंच गए, क्योंकि दोनों साधक मुनिश्री आदि संत सुजानगढ़ से लाडनूं पधार गए थे और वहां घोड़ावत भवन में विराज रहे थे। हमारे आने के बाद आचार्यश्री के आदेशानुसार दोनों साधक मुनिवरों ने अपनी मौन साधना को यथावत् रखते हुए लाडनूं से विहार किया और मार्गवर्ती गांवों में होते हुए सरदारशहर पहुंच गए।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

विक्रम संवत् 2026 (सन् 1969) का वार्षिक प्रवेश दोनों साधक मुनिवरों के साथ हम संतों का शहर में श्री शुभकरणजी दूगड़ की हवेली में हुआ। यह स्थान शहर के मध्य है, फिर भी यहां एकान्तवास की सारी अनुकूलताएं प्राप्त थीं। लगभग 11 महीने का प्रवास यहां हो गया। जब मुनिश्री दुलीचन्दजी के लिए आचार्यश्री का आदेश श्रीडूंगरगढ़ का आ गया, तब वे विहार कर वहां पधार गए।

विक्रम संवत् 2027-28-29 (सन् 1970 से 72) तक तीन वर्ष का प्रवास पुनः मुनिश्री आदि हम संतों का दूगड़ गेस्ट हाउस में हुआ। मौन आदि साधना का क्रम तो चल ही रहा था। इन तीन वर्षों में साधना में और अधिक प्रगति के लिए कुछ नये प्रयोग प्रारम्भ किए, किंतु बार-बार जुकाम तथा सुस्ती के कारण लम्बे समय तक एकासन में बैठने की कठिनाई हो जाती। फिर भी अपने लक्ष्य के प्रति समर्पित होकर मुनिश्री धैर्य के साथ आगे बढ़ रहे थे।

जीवन के अनमोल क्षण

आचार्यश्री दक्षिण भारत की चार वर्ष की यात्रा संपन्न कर सन् 1971 का मर्यादा महोत्सव करने के लिए बीदासर (राजस्थान) पधार रहे थे। मैं, यहां की सारी व्यवस्था मुनि रवीन्द्रकुमारजी को संभलाकर, सरदारशहर से लंबे विहार कर छापर में आचार्यप्रवर के श्रीचरणों में उपस्थित हो गया। रात्रि में अर्हत् वंदना के बाद गुरुदेव ने सेवा का अवसर प्रदान किया और ध्यान साधक मुनिश्री की चर्या तथा साधना के बारे में अवगति प्राप्त की।

इस मर्यादा महोत्सव के शुभ अवसर पर चतुर्विध धर्मसंघ ने आचार्यश्री के विराट् व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व का मूल्यांकन करते हुए 'युगप्रधान' विशेषण से अलंकृत किया। इस आयोजन का एक विशेष अंग था आचार्यश्री को साधु-साध्वी समुदाय द्वारा चद्दर (पछेवड़ी) धारण करवाना। साधुओं की ओर से एक धवल उत्तरीय सेवाभावी मुनिश्री चम्पालालजी ने धारण करवाया और साध्वियों की ओर से साध्वीश्री कमलूजी (जयपुर) ने चद्दर अर्पित की। उसको धारण करवाने के लिए आचार्यप्रवर ने तत्रस्थ साधनारत मुनिश्री दुलीचन्दजी (सरदारशहर) को फरमाया तथा मुनिश्री का स्मरण करते हुए कहा–'ध्यान साधक मुनि मीठालाल (उदयपुर), जो अभी सरदारशहर में साधनारत है, उसका प्रतिनिधि मुनि ताराचन्द यहां उपस्थित है। वह मुनि दुलीचन्दजी के साथ यह कार्य संपन्न करे।' अप्रत्याशित रूप से आचार्यवर के अत्यन्त वात्सल्यपूर्ण निर्देश को प्राप्त कर मैं भावविभोर हो गया। निर्देशित कार्य संपन्न करने के बाद मैंने मुनिश्री की ओर से अभिनन्दन करते हुए पूज्य गुरुदेव को सरदारशहर पधारकर साधक मुनिश्री मीठालालजी को दर्शन देने का नम्र निवेदन किया।

सायं आहार के बाद आचार्यश्री प्रतिदिन की भांति अपनी डायरी का लेखन कर रहे थे। मैंने बद्धांजलिपूर्वक वंदना कर निवेदन किया–'गुरुदेव! आज के इस दुर्लभ अवसर पर आपश्री ने मुझे याद किया और इस विशिष्टतम कार्य में सहभागी बनाया, यह मैं अपना अहोभाग्य मानता हूं।' आचार्यश्री ने अपनी अमृतवर्षी दृष्टि से देखा और मेरे मस्तक पर वरद्हस्त रखते हुए फरमाया–'तुमको कैसे भूल सकते हैं?' जीवन के ये अनमोल सुखद क्षण अनुपम और अविस्मरणीय होते हैं। मैं एक मास गुरुकुलवास में रहकर वापस सरदारशहर मुनिश्री की सेवा में आ गया।

पंचवर्षीय मौन की संपन्नता

सन् 1972 का मर्यादा महोत्सव गंगाशहर संपन्न कर आचार्यश्री 12 मार्च को सरदारशहर पधारे। दूसरे दिन आचार्यश्री ने एकान्त कक्ष में पधारकर ध्यान साधक मुनिश्री को दर्शन दिए। मुनिश्री ने गुरुचरणों में मस्तक रखकर वंदना की और लिखित रूप में वार्तालाप किया। 17 मार्च को आचार्यप्रवर के फरमाने पर मुनिश्री आचार्यवर के साथ ही श्रीसमवसरण में पधार गए। गुरुदेव के सान्निध्य में चतुर्विध धर्मसंघ की उपस्थिति में पंचवर्षीय मौन की संपन्नता की। यह एक अनायोजित कार्यक्रम हो गया। (विस्तृत जानकारी के लिए पढ़ें, विज्ञप्ति सन् 1972 मार्च के बाद की।)

आचार्यप्रवर के इस सरदारशहर प्रवास में कई बार आचार्यश्री, मुनिश्री नथमलजी और मुनिश्री मीठालालजी का एकान्त में वार्तालाप हुआ। उसमें ध्यान साधक मुनिश्री ने अपने अन्तःकरण की एकाकी साधना की भावना प्रस्तुत की। इस लम्बी चर्चा-परिचर्चा के बाद आचार्यश्री को जो करना था, वह अपने मन में निश्चय कर लिया। ऐसा लगता है। (इस संदर्भ में आचार्यश्री तुलसी की आत्मकथा (मेरा जीवन : मेरा दर्शन) भाग-10. पृ. सं. 193 से 196 तक पढ़ें।)

बचपन के संस्कार स्थाई बन जाते हैं

सन् 1969 से 1972 तक सरदारशहर प्रवास में प्रतिवर्ष हमारे सान्निध्य में सप्तदिवसीय ग्रीष्मकालीन संस्कार निर्माण शिविर का आयोजन जब्बरबाबू दूगड़ के गेस्ट हाउस में होता। संख्या भी अच्छी हो जाती और समाज में एक अच्छा वातावरण बनता। इसके सिवाय दूगड़ विद्यालय के सामने हमारा प्रवास होने से विद्यार्थी आते रहते। उनको कुछ न कुछ अच्छी प्रेरणाएं मिलतीं। इस प्रवास के लगभग 20 वर्ष बाद जब हमारी यात्रा बिहार, बंगाल, असम और नेपाल-विराटनगर की हुई, तब बहुत सारे युवक हमारे पास आते और पूछते–'महाराज! मुनिश्री ताराचन्दजी और रवीन्द्रमुनिजी कहां पर हैं? वे हमारे सरदारशहर में बहुत वर्षों तक रहे थे एवं विशेषकर किशोरों का शिविर लगाते थे। हम उस में भाग लेते थे। आसन, अध्ययन, प्रतियोगिताओं के माध्यम से हमें प्रेरणा व प्रशिक्षण देते

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

थे। वे शिक्षाएं आज भी स्मृति में है।' जब मैं मुस्कान के साथ बोलता–'वह ताराचन्द मुनि मैं ही हूं,' तब वे आश्चर्यचकित होकर बोलते–'अच्छा आप ही हैं? हमने पहचाना ही नहीं, कितना परिवर्तन आ गया।' जब हम उनके नाम आदि पूछते तो प्रायः हमारी स्मृति में भी वे आ जाते। फिर मेरा प्रश्न रहता कि शिविर में प्राप्त ज्ञान, सद्संस्कारों आदि का जीवन में कोई प्रभाव है क्या? प्रायः उत्तर मिलता–'मुनिश्री! हम व्यसनमुक्त हैं, महामंत्र का जप प्रतिदिन करते हैं, साधु-साध्वियों का सम्पर्क रखते हैं। माता-पिता के अनुशासन में रहे और अब हम भी हमारे बच्चों को ये संस्कार देने का प्रयास करते हैं।' यह केवल पांच-दस व्यक्तियों की बात नहीं है। ठीक इसी प्रकार दक्षिण भारत की यात्रा में भी हमने इस सन्दर्भ में कई अनुभव प्राप्त किए।

गणमुक्त एकाकी साधना के लिए प्रस्थान

मोमासर में सन् 1973 का मर्यादा महोत्सव संपन्न कर आचार्यश्री सरदारशहर पधारे। मुनिश्री के साथ एकांत वार्तालाप के बाद मुझे याद किया और फरमाया–'मुनि मीठालाल को हमारे साथ ही यहां से विहार करना है, इसलिए तुम सब तैयारी कर लेना।' अचानक विहार की बात सुनकर आश्चर्य तो हुआ, किंतु आदेशानुसार सारी तैयारी कर आचार्यश्री के साथ ही विहार कर दिया। गोलसर तक साथ रहे। इन दिनों में भी एकांत वार्तालाप का क्रम चला। आचार्यश्री की आज्ञानुसार हम रतनगढ़ होकर सीधे लाडनूं पहुंचे और आचार्यप्रवर बीदासर होकर लाडनूं पधार गए।

0 अप्रैल, 0862, विक्रम संवत् 1 18, चैत्र कृष्णा तेरस, रविवार को पारमार्थिक शिक्षण संस्थान के प्रांगण में आचार्यश्री के सान्निध्य में एक अपूर्व कार्यक्रम आयोजित हुआ और उसके तत्काल बाद ध्यान साधक मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) ने आचार्यश्री को वंदना की। अपना भार कंधे पर रखा और विशेष साधना के लिए संघमुक्त होकर एकाकी माउन्ट आबू की ओर प्रस्थित हो गए। इस संबंध में पूज्य गुरुदेव की आत्मकथा मेरा जीवन : मेरा दर्शन भाग–11 पृ. सं. 71 से 80 तक पठनीय है। इसके अतिरिक्त मुनिश्री की अष्टवर्षीय विशेष साधना के संबंध में आचार्यश्री तुलसी ने कब, कहां, क्या, कहा? यह जानने के लिए मेरा जीवन : मेरा दर्शन (आत्मकथा) भाग 7, 10 अवश्य पढ़ें।

आचार्यश्री तुलसी की कृपा से ही मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) की सन्निधि में मैंने 17 चतुर्मास किए। उनके द्वारा बाह्य ज्ञान के साथ आत्म ज्ञान की रश्मियां भी प्रस्फुटित हुईं। उनका उज्ज्वल चरित्र मेरे लिए प्रेरणादायी था। उनके एकाकी साधना के लिए संघमुक्त हो जाने के बाद आचार्यप्रवर ने महती कृपा कर मुझे अपने सान्निध्य में मुनिश्री नथमलजी (आचार्य महाप्रज्ञ) के साझ-वर्ग में रहने का आदेश दिया।

गणमुक्ति की बेला में मुनि मीठालालजी ने मेरी सेवाओं का उल्लेख करते हुए एक भावपूर्ण पत्र लिखा। उस पत्र की भाषा इस प्रकार है–'अतिशय विवेकी व निश्छल चेता बंधुवर मुनि ताराचन्दजी का मेरी साधना में प्रलंब अवधि तक निष्ठापूर्ण सहयोग रहा। उनकी सेवा को मैं अपनी कृतज्ञता की परिधि से बहुत आगे बढ़ी हुई पाता हूं। आज मैं अपने गणमुक्त ध्यान पथ की विचरण बेला में उनके लिए तीव्र मंगल भावना करता हूं कि उनका अग्रिम जीवन योग साधना की प्रतिमूर्ति बने।'

52 दिन का एक प्रयोग

विक्रम संवत् 1 2   (सन् 0862) का चतुर्मास आचार्यश्री का हिसार (हरियाणा) में था। आचार्यश्री की अनुमति प्राप्त कर मैंने एक वैद्यजी की देख-रेख में 52 दिन तक जड़ी-बूटियों से बने एक काढ़े का प्रयोग किया, जिसमें अन्न का सर्वथा वर्जन था। केवल दिन में दो-तीन बार चाय तथा उबली हुई सब्जियां एवं फलों का आहार करना होता। इस काढ़े का कुछ संतों ने भी प्रयोग किया। प्रयोग से पूर्व वैद्यराजजी ने इसका परिणाम बताया कि इससे पेट की बीमारियां नहीं होती तथा भूख पर भी काफी नियन्त्रण पाया जा सकता है।

मेरे मन में आया कि क्यों नहीं? इसका लम्बा प्रयोग कर एक समय के सिवाय अन्न को बंद कर दिया जाए। प्रयोग के बाद तीन महीनों तक ऐसा किया भी, किंतु विहार, मुनिचर्या के कारण इस क्रम को आगे नहीं बढ़ा सका।

थकान में तत्काल ताजगी

गुरुकृपा के ये प्रसंग लगते तो साधारण हैं, किंतु शिष्य के मानस को प्रभावित तथा प्रसन्न करने वाले होते हैं। पहला प्रसंग-लाडनूं से हिसार तक की यात्रा में आचार्यप्रवर ने मुझे अनेक बार पूछा–'विहार में थकान तो नहीं आती? क्योंकि तुम लंबे समय तक एक स्थान (सरदारशहर) में रहे हो।' मैंने निवेदन किया–'गुरुदेव! कभी-कभी अधिक रेत एवं लंबे विहारों के कारण साधारण थकान आती है, किंतु विश्राम के बाद मिट जाती है।' आचार्यश्री की कृपा दृष्टि पड़ने से ही शिष्य धन्य-धन्य हो जाता है तो पूछने मात्र से थकान के स्थान में तत्काल ताजगी आ जाती है।

बात गुरु कृपा की है

दूसरा प्रसंग-हिसार में चातुर्मासिक पक्खी से पहले आचार्यश्री का संतों को आदेश मिला कि जिनको वस्त्र चाहिए, वे यहां आकर ले जाएं। अनेक संतों के साथ मैं भी गया। आचार्यश्री अपने हाथों से जिसको जितनी अपेक्षा थी उतना वस्त्र वितरित कर रहे थे। कुछ

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

समय बाद मेरा भी नम्बर आया। मैं सामने खड़ा हुआ। मुझे देखते ही उन्होंने मेरे वर्ग के संतों से कहा–'तुम ही इसके लिए वस्त्र ले जाया करो। इसका इतना समय क्यों लगाते हो?' मैंने बद्धांजलिपूर्वक निवेदन किया–'गुरुदेव! यह आपश्री की कृपा है, किंतु मैं अपना और भी कार्य करता हूं तो इस कार्य के लिए संतों का उपयोग क्यों करूं?' यह कोई खास उल्लेखनीय बात नहीं है, फिर भी गुरु कृपा की बात तो है ही।

क्या उत्तर तुम्हारे हैं?

इसी चतुर्मास में एक बार मैं आचार्यश्री को वंदना कर रहा था। मुझे संकेत से निकट बुलाकर 8-10 प्रश्नों का एक पन्ना देते हुए फरमाया–'इनके उत्तर लिखकर लाना है।' मैं पन्ना लेकर गया। उसी समय दो-तीन बार पढ़ा। अधिकांश प्रश्न साधना से संबंधित थे। कुछ प्रश्न तो सरल थे और कुछ मेरे लिए कठिन थे। मैं वह प्रश्नों का पन्ना लेकर मुनिश्री नथमलजी (आचार्य महाप्रज्ञजी) के पास गया। वंदना कर वह पन्ना उनको दिया और आचार्यश्री ने जो फरमाया, वह बताया। उन्होंने प्रश्नों को देखकर कहा–'तुम अपने दिमाग से प्रश्नों के उत्तर लिखो और फिर मुझे बताना। मैं आवश्यक संशोधन कर दूंगा।' मेरे मन का भार हल्का हो गया। जब मैंने प्रश्नों के संशोधित उत्तर का पन्ना आचार्यश्री को निवेदित किया, उन्होंने पढ़कर पूछा–'क्या ये उत्तर तुम्हारे है?' मैंने कहा–'नहीं, आचार्यप्रवर! ये मुनिश्री नथमलजी द्वारा संशोधित उत्तर हैं।' आचार्यश्री ने मधुर मुस्कान के साथ वह पन्ना अपने पास रख लिया।

एक नया अनुभव

हिसार (हरियाणा) चतुर्मास के परिपार्श्व में आचार्यश्री टोहाना पधारे। एक भाई ने बताया कि यहां से कुछ दूरी पर भाखड़ा (पंजाब) से बहुत बड़ी नहर आई है। उसमें से दो नहरें निकाली गई हैं। वह स्थान दर्शनीय है। प्रात: शौच से निवृत्त हो हम कई संत वहां गए, देखा , उस विशाल नहर का पानी द्रुतगति से आगे बढ़ रहा है। उसमें से दो नहरें निकली हैं, जो अलग-अलग दिशाओं में प्रवाहित हो रही है। तीव्र गति से गिरते हुए पानी की ध्वनि और उसमें से उठने वाला सफेद झागों का समूह दर्शक को प्रभावित करता है। आस-पास बड़े-बड़े वृक्ष, छोटे-छोटे बगीचे और बैठने के लिए चौकियां आदि हैं। हमने कई दूर तक भ्रमण किया। सबको बहुत अच्छा लगा।

दूसरे दिन आचार्यश्री तथा मेरे साझ के अधिकारी मुनिश्री नथमलजी (आ. महाप्रज्ञ) को निवेदित कर मैं ध्यान करने के लिए वहां प्रतिदिन जाने लगा। भोजन के समय प्रवास स्थल पर पहुंच जाता। एक दिन कुछ विलम्ब हो गया। ध्यान संपन्न कर घड़ी को देखा और तैयार होकर जल्दी-जल्दी चलने लगा। देखा–सामने से एक संत तथा भाई आ रहे हैं। मिलते ही कहा–'संत आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। विलम्ब के कारण सबको चिन्ता हो गई। इसलिए हमको भेजा गया है।' मैंने कहा–'विलम्ब के कारण मेरे मन में भी कष्ट की अनुभूति हो रही है।' स्थान पर पहुंचा। मुनिश्री को वंदना की। उन्होंने कहा–'पहले विश्राम कर आहार कर लो, फिर बात करेंगे।' आहार के बाद मैंने विलम्ब का कारण बताया। मुनिश्री ने पूछा–'ध्यान नहर के बिल्कुल किनारे पर तो नहीं करते?' मैंने कहा–'नहर से कुछ दूरी पर वृक्ष के नीचे ध्यान करता हूं। जहां से बहती हुई नदी का पानी दिखाई देता है और पानी की ध्वनि भी सुनाई देती है। आज ध्यान ऐसा जमा कि उठने का मन ही नहीं हुआ। कल से समय पर आने का भाव है। फिर भी यदि विलम्ब हो जाए तो आप चिन्ता न करें। मैं आकर आहार कर लूंगा।' जितने दिन आचार्यश्री वहां विराजे, मैंने प्रतिदिन उस स्थान का उपयोग किया। वह जीवन का नया अनुभव था।

आचार्यश्री का विक्रम संवत् 2031 (सन् 1974) का भगवान महावीर निर्वाण की 25 वीं शताब्दी का चातुर्मासिक प्रवेश नई दिल्ली (अणुव्रत भवन) में हुआ।

विहार करने में ही लाभ है

व्यवस्था आदि की दृष्टि से आचार्यश्री ने इस चतुर्मास से पूर्व तथा बाद में कई साधु-साध्वियों को दिल्ली के अलग-अलग क्षेत्रों में रहने का निर्देश दिया। उनमें मेरा भी नाम था। चतुर्मास से पहले हम तीन संतों को दिल्ली-नया बाजार और चतुर्मास के बाद में हम चार संतों को सदर-बाजार में रहने का आदेश दिया। तीनों ही संत दीक्षा पर्याय में मेरे से बड़े थे। गुरुदेव ने फरमा दिया–'आज्ञा, आलोयणा मुनि ताराचन्द की रहेगी।' मैंने उसी समय निवेदन किया–'गुरुदेव! कृपा कर आप आज्ञा, आलोयणा बड़े संतों की रखावें।' बार-बार निवेदन करने पर भी आचार्यश्री ने मेरी ओर रूख ही नहीं किया, देखा तक नहीं। विहार भी उसी समय करना था। इस असमंजस की स्थिति में मैं भाईजी महाराज (आचार्यश्री के ज्येष्ठ भ्राता) के पास पहुंचा और सारी स्थिति बताने के बाद कहा–'आप कृपा कर अभी पधारें और इस निर्णय में परिवर्तन करवाएं।' भाईजी महाराज तत्काल पधारे एवं आचार्यश्री को मैंने जो चाहा वह निवेदन किया। उन्होंने उसी कठोर स्वर में ही कहा–'जो निर्णय हो गया उसमें परिवर्तन की गुंजाइश नहीं है।' मैं कुछ दूरी पर ही खड़ा था। भाईजी महाराज वापस आकर बोले–'ताराचन्द! अब तो चुपचाप विहार करने में ही लाभ है। आचार्यश्री अपने निर्णय में अडोल हैं।' मेरे साझप्रमुख मुनिश्री नथमलजी ने भी यही कहा–'आचार्यश्री कुछ दिन बाद सदर बाजार पधारने वाले हैं। आज तो निर्णय के अनुसार ही विहार कर देना ठीक रहेगा।'

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

शिविर में संभागिता और निष्पत्ति

इसी चतुर्मास में अध्यात्म साधना केन्द्र में श्री गोयनकाजी के सान्निध्य में 10 दिन का एक विपश्यना शिविर समायोजित था। उसमें अनेक साधु-साध्वियों एवं भाई-बहिनों के साथ मैंने भी भाग लिया। मैं पहले से ही श्वास दर्शन का प्रयोग करता था, किंतु विपश्यना में 'आनापान सती' के नाम से इसका प्रयोग अच्छे ढ़ंग से करवाया गया। उससे मेरा श्वास दर्शन का प्रयोग और अधिक पुष्ट हो गया। 10 दिन का शिविर मेरे ध्यान अभ्यास की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण एवं उत्साहवर्द्धक रहा।

दूसरे ध्यान शिविर में भी जागरूकता के साथ 'आनापान सती' और 'कायानुपश्यना' का विशेष अभ्यास करवाया गया। इसमें पैर के अंगुठे से लेकर सिर तक के भाग को क्रमशः शरीर के कण-कण को देखा जाता है। नीचे से ऊपर और ऊपर से नीचे। जितनी जागरूकता से अभ्यास किया जाता, उतनी ही प्राणधारा सक्रिय होकर शरीर के कण-कण को तनावमुक्त कर देती। इससे कल्पनातीत शरीर के हल्केपन का अनुभव होता।

10 दिन का दूसरा शिविर संपन्न हो गया। सब साधक जाने लगे। मैंने अपने मन की बात मुनि किशनलालजी से कही कि इस शिविर में ध्यान की जो अच्छी स्थिति बनी है, उसको और अधिक परिपुष्ट करने के लिए कुछ दिन और यहीं रहा जाए, ऐसा मेरा विचार है। वे तत्काल मेरे विचारों से सहमत हो गए। हम एक से दो हो गए। जाने वाले संतों के साथ आचार्यश्री को निवेदित करवा दिया। अब हम निश्चिंत होकर ध्यानाभ्यास करने लगे। वहां के व्यवस्थापक, साधक श्री मोहनलालजी कठोतिया आदि कई साधक वहीं रहते थे। प्रातः कालीन ध्यान की एक बैठक एक कमरे में सामूहिक होती। उसका तीन घंटा का समय रहता। उसके सिवाय सब अपने-अपने कमरे में साधना आदि करते।

ध्यानाभ्यास के समय 'कायानुपश्यना' के अभ्यास को क्रमशः मैं आगे बढ़ाने लगा। तीन दिन बाद ही मेरा अभ्यास इतना हो गया कि एक घंटा नीचे से ऊपर तक की यात्रा और एक घंटा ऊपर से नीचे की यात्रा। फिर तीसरा घंटा नीचे से ऊपर सिर तक पहुंचा तो पूरे मस्तक पर भार महसूस होने लगा, भार भी इतना कि मानों किसी ने पत्थर की बड़ी सिला सिर पर रख दी हो। मैं उस भार को देखने लगा तो देख नहीं सका, सहनशक्ति से बाहर हो गया। मैंने धीरे से आंखें खोली तो चक्कर आने लगा। वहीं लेट गया। जब आंखें खोलता तो वही चक्कर की स्थिति। आखिर मैं उठकर धीरे-धीरे जैसे-तैसे अपने कमरे में चला गया। लेटकर भी उस भारीपन एवं चक्कर को देखता रहा। लगभग आधा घंटा बाद मैं नॉर्मल सहज स्थिति में आया। मैंने किसी को कुछ नहीं कहा। जब तीन दिन तक यही स्थिति बनती रही, तब साधक श्री मोहनलालजी कठोतिया को सारा घटनाक्रम बताया। उन्होंने कहा–'लगता है कि आपका ध्यान क्रम अच्छा जमा है, किन्तु इसमें शरीर एवं विशेषकर मस्तिष्क की दुर्बल कोशिकाएं बाधक बन रही हैं। वे इस वर्धमान पवित्रता को झेल नहीं पा रही हैं, इसलिए मेरी दृष्टि में इससे आगे तब तक नही बढ़ना चाहिए, जब तक कोशिकाएं सक्षम नहीं हो जाएं। दूसरी बात उन्होंने कही–जैन मान्यता के अनुसार वीतराग की पात्रता के लिए 'वज्रऋषभनाराच' संहनन होना जरूरी है। बिना शरीर की मजबूती वीतरागता घटित नहीं हो सकती।' उनकी ये दोनों बातें मेरी समझ में आईं। उसके बाद मैंने मस्तिष्क की कोशिकाओं को शक्तिशाली बनाने के लिए 'सूक्ष्म भस्त्रिका' का प्रयोग भी किया, किन्तु वह स्थिति नहीं बन पाई।

विपश्यना शिविर में प्रशिक्षक श्री गोयनकाजी एक बौद्ध पद्य का बार-बार उच्चारण करते–'क्षीणं पुराणं नव नत्थि संभवम्' (ध्यान के द्वारा पुरातन कर्म क्षीण होते हैं और नए कर्मों का बंध नहीं होता) यह उच्चारण मुझे बहुत अच्छा लगा। मैंने देखा, जैन आगम पद्य की इससे कितनी समानता है–'**धुणंति पावाइं पुरे कडाइं, नवाइं पावाइं न ते करेंति।**' (वे अमोहदर्शी पुराकृत पाप का नाश करते हैं और नए पाप नहीं करते।)

मुझे भी सहभागी बनाया

विक्रम संवत् 2032, सन् 1975 का चतुर्मास आचार्यश्री का सी-स्कीम, ग्रीन हाउस, जयपुर में हुआ। चतुर्मास से पूर्व ग्रीष्मकाल में आचार्यश्री कुछ संतों के साथ एकांत प्रवास के लिए श्री मन्नालालजी सुराणा के फार्म हाउस में विराजे। फार्म बहुत विशाल, हरीतिमा से मंडित, बड़े-बड़े आम के वृक्ष, अंगूर की बेलें और भी नाना प्रकार के वृक्षों, लताओं आदि से सुशोभित था। इनके मध्य में रहने के मकान थे। भाईजी महाराज स्वास्थ्य की दृष्टि से अस्पताल पधार गए। कुछ संतों को शहर में रहने का आदेश था। मैं भी वहीं था। तीन दिन के बाद ही आचार्यश्री का निर्देश मिला कि मुनि ताराचन्द अपने उपकरण लेकर यहां आ जाए। मैं उसी दिन विहार कर गुरु चरणों में पहुंच गया, वंदना कर प्रसन्नता व्यक्त की। आचार्यश्री ने बहुत ही प्रसन्न मुद्रा में फरमाया–'यहां का स्थान तुम्हारे ध्यान के लिए अच्छा लगा, इसलिए बुला लिया।' मैंने गुरु-कृपा के प्रति अपना अहोभाव व्यक्त किया।

प्रातः आचार्यश्री के सान्निध्य में मुनिश्री नथमलजी (आचार्य महाप्रज्ञ), मुनि मधुकरजी, मुनि महेन्द्रकुमारजी (मुम्बई) आदि कुछ संत एवं साध्वीप्रमुखाजी आदि कुछ साध्वियां पहले सामूहिक ध्यान करते, फिर आगम आदि के कार्य प्रारम्भ होते। मैंने भी ध्यान का अभ्यास शुरू कर दिया। प्रातः एक घंटा से दो घंटा आचार्यश्री के परिपार्श्व में और मध्याह्न में कभी आम की छाया में, कभी नीम की छाया में बैठकर ध्यान करता। उस समय रात्रि में मुनिश्री नथमलजी के पास जयपुर का एक भाई आता और अपनी गहरे जंगलों तथा

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

पहाड़ों, गुफाओं की यात्रा के संस्मरण सुनाता। मैं भी मुनिश्री के पास बैठकर सुनता। जानकारी और प्रेरणा की दृष्टि से संस्मरण बड़े महत्त्वपूर्ण और आकर्षक लगे।

उसी एकांत प्रवास में आचार्यश्री के निर्देश से मुनिश्री गुलाबचन्दजी 'निर्मोही' की देख-रेख में विद्यार्थियों का एक 'संस्कार निर्माण शिविर' अच्छे ढ़ंग से चला और संपन्न हुआ। आचार्यश्री के निर्देश से मैंने भी अपना कुछ समय उसमें नियोजित किया।

प्रेक्षाध्यान का उद्भव

इसी जयपुर प्रवास में आचार्यश्री तुलसी के सान्निध्य में उनकी भावनानुसार जैन, जैनेतर ग्रन्थों के गहन अध्ययन एवं अपने ध्यान प्रयोगों के अनुभवों के आधार पर मुनिश्री नथमलजी (आचार्य महाप्रज्ञ) द्वारा 'प्रेक्षाध्यान' नामक ध्यान पद्धति का उद्भव हुआ।

भाईजी महाराज का स्वर्गवास

जयपुर के बाद मर्यादा महोत्सव लाडनूं में था। सालासर और सुजानगढ़ के बीच एक गांव में भाईजी महाराज का स्वर्गवास हो गया। लाडनूं वाले उस पार्थिव शरीर को लाडनूं ले गए। आचार्यश्री भी वहां पधार गए। स्मृति सभा आदि के कार्य संपन्न हुए। महोत्सव के लिए अभी समय शेष था, इसलिए लाडनूं से बीदासर होकर पुनः मर्यादा महोत्सव के लिए लाडनूं पधारना निश्चित हुआ।

तुम्हें ध्यान की कक्षा लेना है

आचार्यश्री ने मुझे फरमाया कि तुमको अभी यहीं रहना है और प्रातःकालीन एक ध्यान की कक्षा जैन विश्व भारती के ग्रन्थागार के हॉल में लेना है। उसमें संस्था की बहिनें तथा अन्य भाई-बहिनें भी भाग लेने वाले हैं। हम दो संतों को आदेश देकर आचार्यश्री बीदासर पधार गए। वहां से दो किशोर विजयकांत खटेड़ और अरविन्द गोलछा प्रतिदिन जैन विश्व भारती मेरे साथ जाते-आते और ध्यान में भी भाग लेते। लगभग एक मास तक सूर्योदय के बाद एक घंटा ध्यान की कक्षा का क्रम चला। मुझे भी कई नए अनुभव प्राप्त हुए। मेरा प्रवास लाडनूं के मूल ठिकाने में था। विक्रम संवत् 2033, सन् 1976 का चतुर्मास आचार्यश्री का सरदारशहर में हुआ।

प्रेक्षाध्यान शिविर

मुनिश्री नथमलजी (आचार्य महाप्रज्ञ) के निर्देशन में दूगड़ विद्यालय में प्रेक्षाध्यान शिविर समायोजित हुआ। संतों के साथ मैंने भी उसमें भाग लिया। उसमें मुनिश्री द्वारा ध्यान से संबंधित कई नई जानकारियां प्राप्त हुई। सभी भाई-बहिनों ने अच्छा रस लिया।

दूगड़ विद्यालय के सामने स्वरूपचन्दजी, गणेशमलजी दोनों भाइयों के गेस्ट हाउस हैं। जहां लम्बे समय तक मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) ने एकांत, मौन, ध्यान आदि की साधना की थीं। दोनों की सटी हुई छतें थीं। एक छत पर मुनिश्री नथमलजी और एक छत पर मैं प्रातःकालीन सूर्य किरणों की प्राण ऊर्जा ग्रहण करते। केवल लंगोट के साथ शरीर के आगे-पीछे तथा दांए-बाएं हिस्से के लगभग 45 मिनट तक सूर्य आतापना लेते। करीब एक मास तक यह क्रम चला। इसकी अच्छी अनुभूति हुई।

अग्रणी की वंदना

सरदारशहर चतुर्मास के बाद आचार्यप्रवर ने पड़िहारा में मर्यादा महोत्सव संपन्न किया। वहां से अष्टमाचार्य श्री कालूगणीराज की जन्म शताब्दी मनाने के लिए छापर (ताल) पधारे। भव्यता के साथ कार्यक्रम समायोजित हुआ।

उसी अवसर पर पश्चिम रात्रि में साधुओं की गोष्ठी में आचार्यश्री ने मुझे अग्रगण्य की वंदना करवाई। ऐसे तो विक्रम संवत् 2022 के चतुर्मास से 2029 के फाल्गुन मास तक मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) की लगभग अष्टवर्षीय विशेष साधना काल में आचार्यश्री के निर्देश से आज्ञा, आलोयणा के कार्य, व्यवस्था व क्षेत्र-संभाल आदि सारी जिम्मेदारी के कार्य मैं और मुनि रवीन्द्रकुमाजी ही संभालते थे, किंतु विधिवत् अग्रणी की नियुक्ति छापर में हुई।

विक्रम संवत् 2029, चैत्र मास से 2033 पड़िहारा मर्यादा महोत्सव और कालू जन्म शताब्दी तक लगभग चार वर्ष गुरुकुलवास में रहने का मुझे सुअवसर प्राप्त हुआ।

आशीर्वाद के साथ विहार

मेरा बहिर्विहार का प्रथम चतुर्मास जोधपुर में घोषित हुआ। सहयोगी संत थे–मुनि मिश्रीलालजी (दिवेर) और मुनि विमलकुमारजी (तारानगर)। विहार से पूर्व आचार्यश्री का सान्निध्य मिला, शिक्षाओं के साथ जोधपुर के बारे में भी कुछ अवगति देने की कृपा की। गुरुदेव का आशीर्वाद और संतों की मंगल भावना के साथ वहां से प्रस्थान किया। शेषकाल में वारणी, पीपाड़ आदि क्षेत्रों में रहते हुए जोधपुर के पावटा, महामंदिर आदि में प्रवास किया।

विक्रम संवत् 2034 (सन् 1977) के चतुर्मास के लिए जोधपुर-जाटावास (पुराना ठिकाना-श्री सोहनलालजी, संपतमलजी की हवेली) में प्रवेश किया। प्रातः उपदेश मुनि विमलकुमारजी देते, फिर व्याख्यान देने मैं जाता। मध्याह्न में मुनि मिश्रीलालजी का व्याख्यान होता। रात्रि में लगभग तीनों ही संतों का उपयोग होता। जोधपुर बौद्धिक शहर है। श्रावकों में भी अनेक वकील (एडवोकेट) और अच्छे-2 पदों पर काम करने वाले हैं।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

इनके बीच में क्या बोलूंगा?

प्रातः व्याख्यान में मैंने एक आगम का वाचन शुरू किया। विश्लेषण इसलिए कम किया कि आगम का स्वाध्याय अधिक हो जाए। जब मैं व्याख्यान में अपने सामने आगम के तथा तेरापंथ दर्शन के विशेष ज्ञाता श्रावकों को देखता तो एक, दो बार मन में आया कि मैं इनके सामने क्या बोलूंगा? मन में कुछ संकोच-सा हुआ, फिर सोचा–'अरे! यह तो हीन भावना आ गई। इससे तो मैं ही नुकसान में रहूंगा और अच्छी तैयारी करके बोलूं ताकि इनको भी कुछ रस आए।' वे श्रावक थे–श्री जब्बरमलसा भंडारी, संपतमलसा, गणपतमलसा भंडारी और केवलराजसा सिंघवी आदि।

मुझे प्रोत्साहन मिला

दो दिन बाद ही श्री जब्बरमलसा ने कहा–'मुनिश्री! आप आगम गाथा का विश्लेषणपूर्वक व्याख्यान करेंगे तो श्रावकों के समझ में अच्छा आयेगा।' मैंने उसी दिन से व्याख्यान में परिवर्तन कर दिया। तीन दिन बाद पुनः आकर बोले–'अब ठीक चल रहा है। श्रावक समाज को भी रस आने लगा है।' उनके ऐसा कहने से मुझे प्रोत्साहन मिला। कुछ दिनों बाद श्री संपतमलसा और गणपतमलसा भंडारी आकर बोले–'क्या आपने दो दिन बाद व्याख्यान के क्रम में परिवर्तन किया?' मैंने कहा–'हां।' उन्होंने कहा–'आपने अच्छा किया। अब हमको भी व्याख्यान में रस आने लगा है।' इससे भी मुझे और अधिक प्रोत्साहन मिला। संतों की प्रेरणा से श्रावक समाज में उपवास की बारियां, उपवास के एकान्तर, अन्य तपस्याएं भी हुईं। मध्याह्न में आचार्य भिक्षु के एक ग्रन्थ का वाचन शुरू किया। उसमें भी श्रावकों की उपस्थिति अच्छी रही। पर्युषण पर्व के नवाह्निक कार्यक्रम अच्छी उपस्थिति में संपन्न हुए।

खमतखामणा करने गए

संतों के साथ श्रावक समाज आस-पास के स्थानकों, उपाश्रयों में स्थित साधु-साध्वियों से खमतखामणा करने गया। इसका अच्छा प्रभाव पड़ा। जब हम खरतरगच्छ के उपाश्रम में गए तो वहां साध्वी मणिप्रभाजी आदि साध्वियों के सान्निध्य में कार्यक्रम चल रहा था। साध्वी मणिप्रभाजी खरतरगच्छ की प्रबुद्ध एवं प्रखर वक्ता साध्वी है। हमारे जाते ही साध्वियों ने खड़े होकर हमें पट्ट पर बैठने का आग्रह किया। मैंने कहा–'हम तो अभी संवत्सरी के उपलक्ष्य में खमतखामणा करने ही आए हैं।' उनके तथा उनके श्रावकों के आग्रह के कारण हम बैठे। साध्वियों ने संतों के स्वागत के साथ कुछ प्रवचन भी किया। मैंने भी क्षमा के बारे में अपने संक्षिप्त विचार प्रस्तुत किए और सबसे क्षमायाचना करके वापस आ गए।

जोधपुर में संवत्सरी के बाद जैन समाज का एक सामूहिक कार्यक्रम आयोजित होता है। उसमें सबको आमंत्रित किया जाता है। हम भी आमंत्रित थे। सबको संक्षिप्त में बोलने का अवसर मिला। मिश्रीमुनि की गीतिका भी प्रभावी रही। जैन शासन की प्रभावना का अच्छा एवं भव्य कार्यक्रम हुआ।

अणुव्रत के कार्यक्रम

आचार्यश्री के निर्देश से चतुर्मास के दो मास बाद हम संतों ने तेरापंथ भवन में प्रवेश किया। वहां पर अणुव्रती कार्यकर्ता श्री कानराजजी सालेचा के प्रयास से अणुव्रत के कई कार्यक्रम आयोजित हुए। उनमें से विद्यालयों में अणुव्रत उद्‌बोधन सप्ताह का कार्यक्रम हुआ, उसमें विद्यार्थियों तथा शिक्षकों ने अणुव्रत के नियमों को अच्छी संख्या में स्वीकार किया।

क्या दक्षिण यात्रा करनी है?

जोधपुर में श्री राणमलजी जीरावला के माध्यम से आचार्यश्री का संवाद मिला कि मुनि ताराचन्द की दक्षिण यात्रा करने की भावना हो तो हम जानना चाहते हैं। मैंने निवेदन करवाया–'आचार्यप्रवर! लम्बी यात्रा करने का अभी मेरा मानस नहीं है। आपश्री ने मुझे याद किया, यह मैं अपना अहोभाग्य मानता हूं। दूसरी बात-मुनि विमलकुमारजी का स्वास्थ्य भी अनुकूल कम रहता है।' कुछ दिनों बाद जीरावलाजी फिर आए और कहा–'आचार्यश्री ने फरमाया है कि संतों का तो परिवर्तन कर देंगे, तुम्हारा मानस हो तो बोलो।' मैंने पुनः निवेदन करवाया–'गुरुदेव! अभी तो मेरी भावना नहीं है।'

चतुर्मास के बाद जब आचार्यश्री के सान्निध्य में पहुंचे तब गुरुदेव ने पूछा-'तुम्हारा मानस दक्षिण यात्रा का क्यों नहीं है? हम यात्रा करके आए हैं। बैंगलोर का वायुमंडल कितना अच्छा और अनुकूल है। तुम जाते तो तुम्हारा मन लग जाता।' मैंने निवेदन किया–'आपश्री मुझे पूछवा रहे हैं, यह विशेष कृपा दृष्टि मानता हूं, किंतु मैं जनसम्पर्क में कम रहना चाहता हूं।'

सुजानगढ़ मर्यादा महोत्सव पर हमारा अगला चतुर्मास अजमेर फरमाया। मुनि विमलकुमारजी की चिकित्सा की दृष्टि से जयपुर, सी-स्कीम, ग्रीन हाउस में लगभग 2 माह प्रवास हुआ। वहां से किशनगढ़ गए। वहां भी रहना हुआ।

विक्रम संवत् 2035, सन् 1978 के चतुर्मास के लिए अजमेर के लोढ़ा धर्मशाला में प्रवेश किया। वहां तेरापंथी परिवार अधिक नहीं थे, जो थे वे दूर-दूर फैले हुए थे। चतुर्मास की जिम्मेदारी वहन कर रही थी–लोढ़ा परिवार की बहू और जयपुर के बांठिया परिवार की बेटी, जो धनीभुवासा के नाम से पुकारी जाती थीं। अजमेर में मास्टरजी का परिवार और अन्य कई परिवार धार्मिक रुचि वाले थे। वहां के

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

कार्यकर्ता श्री मांगीलालजी जैन के प्रयास से अणुव्रत के विशेष कार्यक्रम होते रहते थे। अणुव्रत आंदोलन का अजमेर में व्यापक प्रभाव था। हमने भी उसको आगे बढ़ाने का प्रयास किया। प्रात: तथा रात्रि में उपस्थिति अच्छी हो जाती, क्योंकि उस समय प्राय: दुकानें बंद रखते। रविवार को एक विषय पर प्रवचन होता, जिसमें एक प्रबुद्ध व्यक्ति को मुख्य वक्ता के रूप में आमंत्रित करते। संवत्सरी के उपलक्ष्य में दिगम्बर तथा श्वेताम्बर साधु-साध्वियों के सान्निध्य में मैत्री दिवस के रूप में एक कार्यक्रम अच्छी उपस्थिति में समायोजित हुआ।

शहर के स्थानक में उपाध्याय मूलमुनि आदि कई संत प्रवासित थे। वहां भी दो-तीन बार हमारा सामूहिक प्रवचन हुआ। स्थानक विशाल था और उपस्थिति भी उसके अनुरुप होती। गौशाला आदि और भी कई सार्वजनिक स्थानों में उनके साथ हमारा भी प्रवचन हुआ।

युवाचार्य की नियुक्ति

सन् 1978 के चतुर्मास के बाद सन् 1979 का मर्यादा महोत्सव राजलदेसर था। वहां हम आचार्यश्री के सान्निध्य में रहे। उस ऐतिहासिक महोत्सव पर आचार्यश्री तुलसी ने विशाल जनसमूह के मध्य अपने उत्तराधिकारी के रूप में मुनिश्री नथमलजी (टमकोर) की 'युवाचार्य महाप्रज्ञ' के नाम से नियुक्ति की। वह दृश्य बहुत ही भव्य और नयनाभिराम था।

इस मर्यादा महोत्सव पर आचार्यप्रवर ने नवदीक्षित बालमुनि सुमतिकुमारजी को हमारे साथ रहने की वंदना करवाई और मुनि विमलकुमारजी को गुरुकुलवास में रखा। हमारे लिए फरमाया–'तुम मध्यप्रदेश–मालवा की ओर विहार करो।'

छोटा क्षेत्र कौन-सा हो सकता है?

जब हम विदा लेने श्रीचरणों में पहुंचे, वंदना की, तब आचार्यश्री ने कहा–'तुम्हें चतुर्मास का लक्ष्य इंदौर का रखना है।' मैंने निवेदन किया–'गुरुदेव! साधना की दृष्टि से कोई छोटा क्षेत्र हो तो मेरे लिए उपयुक्त रहेगा।' उन्होंने चिन्तन की मुद्रा में कहा–'छोटा क्षेत्र कौन-सा हो सकता है?' मुनिश्री बालचन्दजी वहीं उपस्थित थे। उन्होंने कहा–'पेटलावद में अभी नया भवन बना है। वह उपयुक्त हो सकता है।' एक क्षण चिंतन कर निर्णय दिया–'अच्छा तो तुम पेटलावद चतुर्मास की वंदना करो।' विक्रम संवत् 2036 (सन् 1979) के चतुर्मास के लिए पेटलावद (मालवा) के तेरापंथ भवन में प्रवेश किया।

बालमुनि का आकर्षण

शैक्ष बाल मुनि सुमतिकुमारजी को देखकर सभी लोग प्रसन्न होते। बच्चे तो उनको घेरे रहते। एक लड़के ने मुझे कहा–'महाराज! छोटे महाराज को मेरे घर गोचरी भेजो।' मैंने पूछा–'मुझे नहीं ले जाओगे?' 'आपको तो और कभी ले जाएंगे। आज तो उनको ही ले जाना है।' 'मैं उनको साथ लेकर आऊं तो?' 'तब तो और ही अच्छा हो जाएगा।' गोचरी करने के बाद मैंने कहा–'अब बोलो, चतुर्मास में तुम क्या करोगे?' वह बोला–'मैं प्रतिदिन दर्शन-सेवा करूंगा और जैन विद्या की परीक्षा की तैयारी करूंगा।' मैंने कहा–'गोचरी लाने का यह तुम्हारा टैक्स हो गया।'

चतुर्मास के बाद आस-पास विचरण किया। विक्रम संवत् 2037 (सन् 1980) के चतुर्मास के लिए रतलाम (मालवा) के तेरापंथ भवन में प्रवेश किया।

सेवा के लिये निर्देश

द्विवर्षीय मालवा यात्रा की संपन्नता के बाद बीदासर में गुरुदर्शन किए। कुछ दिन सेवा करने के बाद भीनासर (सेवाकेन्द्र) में वृद्ध संतों की चाकरी करने का निर्देश प्राप्त हुआ। हम ईस्वी सन् 1981 का अपना वार्षिक प्रवास करने हेतु भीनासर पहुंच गए। उस समय वहां तीन वृद्ध संत थे। इस वार्षिक प्रवास के तीन मुख्य उद्देश्य थे–1. वृद्ध संतों को चित्त समाधि पहुंचाना। 2. व्यक्तिगत स्वाध्याय-ध्यान का क्रम चलाना। 3. क्षेत्र की सार-संभाल करना। गुरुकृपा व सहवर्ती संतों के सहयोग से मैं अपने निर्धारित उद्देश्य पूर्ति में सफल रहा। मैंने इस वर्ष मुनिश्री गुणचन्दजी स्वामी के पास भगवती सूत्र का पूरा वाचन किया।

उसी वर्ष गंगाशहर में मुनिश्री सुमेरमलजी 'सुमन' का चतुर्मास था। वे न केवल मेरे साथी थे, अपितु मेरे आदर्श भी थे। उनका भी उपयुक्त मार्गदर्शन मिलता रहा। नजदीकी होने से संतों का आना-जाना होता रहा।

अपना दिल्ली चतुर्मास पूर्ण कर आचार्यवर मर्यादा महोत्सव हेतु गंगाशहर पधारे। वृद्ध संतों की सेवा का हमारा दायित्व पूर्ण हुआ। इस अवसर पर मेरा आगामी चतुर्मास लुधियाना घोषित हुआ। आचार्यश्री का आशीर्वाद लेकर चले और पंजाब के क्षेत्रों में विचरण करते हुए संवत् 2039 (सन् 1982) का चतुर्मासिक प्रवेश लुधियाना में किया।

धर्मसंघ को अपने नियंत्रण में रखा

पिछले चतुर्मास में धर्मसंघ के कुछ विद्वान् साधु-साध्वियां संघ से पृथक् हो गए। एक बार काफी हलचल-सी हो गई, किन्तु आचार्यश्री ने अपनी अद्भुत प्रशासनिक क्षमता के द्वारा चतुर्विध धर्मसंघ को अपने नियंत्रण में रखा। वस्तुत: धर्मसंघ के लिए यह एक ऐतिहासिक प्रतिबोध देने वाली घटना बन गई।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

धर्मसंघ से बहिर्भूत लगभग सभी साधु-साध्वियां पंजाब आए, क्योंकि पूर्व में उनके कई चतुर्मास पंजाब में हो गए थे। लोगों में उनका प्रभाव भी अच्छा था। इसलिए सोचा होगा कि पंजाब तो हमारा ही है। यहां का पूरा श्रावक समाज हमारा सहयोग करेगा और अनुयायी बन जाएगा, किन्तु 'बिल्ली के वांछे छींका नहीं टूटा करता।'

आचार्यप्रवर ने उस समय की पंजाब की स्थिति को संभालने की जिम्मेदारी मुझे सौंपी। वहां कई सिंघाड़े–ग्रुप थे, किंतु शीघ्र विहार करने वालों में मुनि ताराचन्द, मुनि रोशनलालजी एवं साध्वीश्री भिखांजी (लाडनूं) और साध्वी कमलश्रीजी थे। हमने चिंतनपूर्वक सभी क्षेत्रों को संभालने की व्यवस्था के साथ-साथ उनके द्वारा संघ विरुद्ध प्रचारित बातों का एकरूपता से स्पष्टीकरण तथा श्रावक समाज को आस्थाशील बनाए रखने आदि का निश्चय किया और तत्काल अपना–अपना सलक्ष्य सघन प्रयास प्रारम्भ कर दिया। वे लोग जिन-जिन क्षेत्रों में जाते, उन क्षेत्रों में हमारे में से किसी सिंघाड़े को जाना अनिवार्य हो गया। भावुक पंजाबी लोगों की जिज्ञासाओं का तत्काल समाधान होने से आस्था सुरक्षित रह गई।

श्रावक सम्मेलन

लुधियाना में समायोजित पंजाब प्रांतीय श्रावक सम्मेलन का तथा आचार्यश्री का श्रावकों के नाम से अलग संदेश का व्यापक प्रभाव पड़ा। कोलकाता से शासनसेवी श्री खेमचन्दजी सेठिया आदि श्रावकों, संतों तथा साध्वीश्री सिरेकुमारीजी (सरदारशहर) आदि साध्वियों ने अपने प्रेरणादायी विचार प्रस्तुत किए। उपस्थिति भी उल्लेखनीय थी। उसमें यह स्पष्ट हो गया कि वे धर्मसंघ के वफादार श्रावक के रूप में सामने आए। वह उपस्थिति बता रही थी कि पंजाबी श्रावकों का झुकाव किस ओर है। वस्तुतः यह सम्मेलन बहुत ही कार्यकारी सिद्ध हुआ।

आचार्यश्री की वाग्सिद्धि

सन् 1983-84 के दौरान आचार्यश्री तुलसी के कई संदेश प्राप्त हुए, उनमें से कुछ अंश यहां इसलिए प्रस्तुत हैं कि उनकी वाग्सिद्धि कैसी थी। जैसा उनका चिन्तन था, आखिर हुआ भी वैसा ही।

दिनांक 25.2.1984. बीदासर (राजस्थान)। 'पंजाब प्रदेश विहारी सभी संतों से सादर सुखपृच्छा। वर्तमान टालोकरों (संघ से बहिष्कृत या बहिर्भूत) का काम आधारहीन, अध्यात्म शून्य केवल प्रचार मात्र है। पुराने परिचय के कारण या ऊपरी आकर्षण से एक बार कोई बहकावे में भले आ जाए, पर अन्ततोगत्वा निराश होकर उन्हें लौटना ही पड़ेगा। इसके सिवाय कोई चारा ही नहीं है। अतः हमारा कर्त्तव्य है कि पूरी जागरूकता के साथ लोगों को संभालें।' दूसरे पत्र की लाईन 'टालोकर कुछ भी हल्ला करें, हमें अपना काम शांति से करना है।' आचार्यश्री के संदेशों से तत्रस्थ साधु-साध्वियों को संबल मिला तथा श्रावक समाज अधिकतर अपने देव, गुरु और धर्म के प्रति आस्थाशील बना रहा। वे लोग तूफान बनकर आए और कुछ अपने साधु-साध्वियों को वहां रखकर शांत होकर चले गए। तेरापंथ धर्मसंघ को विभाजित करने का उनका सपना आकार नहीं ले सका। प्रत्युत् कुछ समय पश्चात् उनमें ही परस्पर बिखराव हो गया। तेरापंथ धर्मसंघ तो आज भी एक आचार्य की अखण्ड अनुशासना में विकासोन्मुख है।

लुधियाना (पंजाब) का ही एक प्रसंग है–धर्मसंघ से बहिर्भूत मुख्य साधु-साध्वियों के पंजाब परिचित तो था ही, इसलिए वे प्रत्येक क्षेत्र में व्यक्तिगत तथा परिवारों में जाकर भी सम्पर्क करते और उनको संघ से पृथक् होने के कारण बताते। साथ-साथ यह जानने की चेष्टा भी करते कि यह हमारा भक्त रहेगा या नहीं।

हमारा मुख्य श्रावक-श्राविकाओं से सम्पर्क पहले से चल ही रहा था। लुधियाना में तेरापंथ महिला मंडल की अध्यक्षा सुदर्शनाजी के घर मैं और सुमतिमुनि गए। इसी संदर्भ में उनकी कई जिज्ञासाओं का समाधान किया। वार्तालाप चल ही रहा था। इतने में साध्वी मंजुलाजी (गणमुक्त) एक साध्वी के साथ ऊपर आईं। हमने सोचा–हमको देखकर वापस मुड़ जायेंगी, किन्तु वे हमारे पास आकर खड़ी हो गई। औपचारिक वार्तालाप के मध्य साध्वीजी बोली–'आपको काफी श्रम हो रहा है।' मैंने कहा–'मुनि रूपचन्दजी (गणमुक्त) ने जो कोलकाता में श्रम किया, वैसा ही श्रम हम कर रहे हैं। हमारे स्थान पर आज आप होती तो यह श्रम आप भी करती।' यह सुनकर वे मुस्कुराने लगीं। संक्षिप्त वार्तालाप संपन्न कर हम वापस आ गए। विक्रम संवत् 2039 से 2041 की इस त्रिवर्षीय पंजाब यात्रा के दौरान हमने क्रमशः लुधियाना, धूरी, अहमदगढ़ में चतुर्मास किए।

पंजाब के कुछ अनुभव

- ❖ प्राचीन साहित्य में उल्लेख आता है कि व्यक्ति यात्रा करने से अनुभव संपन्न बनता है। पंजाब के इन तीन चतुर्मासों के अतिरिक्त शेषकाल में सुनाम, संगरूर, मलेरकोटला, नाभा, जगरावां, गोविन्दगढ़ आदि छोटे-बड़े क्षेत्रों में प्रवास भी हुआ। हमने देखा–जैन या जैनेतर सभी लोग संतों के प्रति बहुत आदर भाव रखते हैं। किसी घर में चले जाओ भोजन-पानी भक्ति-भावना से देते हैं। सुबह का नाश्ता ताजा पराठा, दूध, चाय, मक्खन प्रसिद्ध है। इतने भावुक होते हैं कि संतों की बात को स्वीकार कर लेते हैं। पंजाबी लोग भजनानंदी होते हैं। जब भी समय मिलता है दो-चार मिलकर आ जाते हैं और भजन सुनाने

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

की मांग हो जाती है। मेरे सहयोगी मुनि मिश्रीलालजी स्वयं भजन बनाते भी हैं, गाते भी हैं। कंठ मधुर होने से सुनने वालों को रस भी अधिक आता है। भजन सुनाने में उनका उपयोग विशेष होता। मुनि सुमतिकुमारजी ने भी कई पंजाबी भजन कंठस्थ कर लिए। उनका उपयोग भी करते।

❖ जो व्यक्ति या परिवार जिस साधु-साध्वी से प्रभावित होकर गुरु धारणा करता है, वह उसका तो भक्त ही बन जाता है। दूसरी बात–जो पूरा परिवार ही गुरु धारणा कर लेता है, उसमें तो स्थायित्व आ जाता है, किन्तु परिवार में से एक-दो व्यक्ति गुरु बनाते हैं तो उसमें स्थायित्व कम रहता है, क्योंकि शादियां प्रायः वैष्णव परिवारों में होती हैं। उनके अपने संस्कार होते हैं, तो धीर-धीरे जैन संस्कार प्रायः समाप्त हो जाते हैं।

❖ इस पंजाब यात्रा में ही मुनिश्री मिश्रीलालजी ने बेले-बेले तथा तेले-तेले का तप प्रारम्भ किया यानि दो उपवास के बाद आहार करना। प्रचलित जनभाषा में उसको बेला कहते है और तीन उपवास को तेला। आगम की भाषा में उनको क्रमशः छट्ठ भक्त और अट्ठम भक्त तप कहा जाता है। मिश्रीमुनि जहां प्रवास करते, वहां तेले-तेले का पारणा करते और विहार में बेले-बेले का पारणा करते। यह क्रम उनका जीवनभर चला।

❖ पंजाब में प्रेक्षाध्यान का दस दिवसीय शिविर एस. के. जैन तथा उनकी पत्नी संतोष के निर्देशन में चला।

आसींद (मेवाड़) की ओर

तीन वर्षों की पंजाब यात्रा संपन्न कर आचार्यश्री के दर्शन किए और जसोल मर्यादा महोत्सव तक साथ में रहे।

विक्रम संवत् 2042, सन् 1985 का हमारा चतुर्मास आसींद (मेवाड़) में हुआ। शेषकाल में चोखले में विचरण कर चातुर्मासिक प्रवेश किया। एक मास बाद नवनिर्मित तेरापंथ भवन में प्रवेश किया। क्षेत्र बड़ा था, हॉल भी उसके अनुरूप था। तीनों समय व्याख्यान में उपस्थिति अच्छी रहती। सायं गुरुवंदना में प्रतिदिन हॉल भर जाता। उपवास की बारियां, अठाईयां आदि तप के साथ पचरंगी तप, चंदनबाला के तेले, एक दिन में ढ़ाई सौ पच्चक्खाण आदि हुए। मुनि मिश्रीलालजी के तेले का क्रम चल ही रहा था।

आसींद में कई वर्षों से भीनासर (बीकानेर) की बहिन इन्दिराजी ज्ञानशाला का अच्छे ढ़ंग से संचालन कर रही है। प्रति पक्खी 10-15 छात्राएं विधियुक्त, शुद्ध उच्चारणपूर्वक सायं प्रतिक्रमण करतीं। वह दृश्य भी बड़ा आकर्षक होता। अणुव्रती भाई लक्ष्मीलालजी गांधी के प्रयास से अणुव्रत के साप्ताहिक कार्यक्रम भी अच्छे ढ़ंग से चले।

चमत्कारी संथारा

आसींद निवासी भाई गणेशमलजी कांठेड़ आए। मंगल पाठ सुना। हिरणिए के ऑपरेशन के लिए परिवार के साथ ब्यावर गए। ऑपरेशन अच्छा हो गया। तीसरे दिन, आश्विन शुक्ला पंचमी के दिन, मध्याह्न में पुत्र नोरतनमलजी मौसमी के रस की गिलास उनके हाथ में देकर चले गए। वे रस पीने लगे इतने में सामने से आवाज आई कि अरे! खाता-पीता ही रहेगा क्या? आंख उठाकर सामने देखा। एक साधु की आकृति है, वे बोल रहे हैं। पूछा–'आप कौन है?' 'मुझे नहीं पहचाना, मेरा नाम भीखण है।' 'आपने अच्छे दर्शन दिए, क्या यह रस पीऊं?' 'हां, फिर संथारा कर देना।' आकृति विलीन हो गई। कांठेड़जी ने रस पीकर उसी समय जीवनभर के लिए चारों आहार के त्याग कर दिए। इतने में बेटा अंगूर लेकर आया और कहा–'खा लीजिए।' वे बोले–'बेटा नोरतन! मैंने तो चौविहार संथारा कर लिया है। कुछ भी खाना-पीना नहीं है।' बेटे ने कहा–'अभी तो ऑपरेशन करवाया और कर रहे हैं संथारे की बात। लगता है आपका दिमाग ठीक नहीं है।' 'बेटा! मेरा दिमाग बिल्कुल ठीक है। अभी-अभी स्वामी भीखणजी ने मुझे दर्शन दिए एवं संथारे की प्रेरणा दी और मैंने रस पीकर संथारा कर दिया। एक मिनट पहले तू भी आता तो तेरे भी दर्शन हो जाते।' तत्काल डॉ. को बुलाया। सारी स्थिति की जानकारी कर डॉ. ने कहा–'कुछ भी खाना-पीना नहीं करोगे तो मेरा ऑपरेशन खराब हो जाएगा।' कांठेड़जी ने कहा–'डॉक्टर साहब! आप चाहे तो अभी टांके खोल दीजिए, कुछ भी नहीं होगा।' शरीर की जांच की, सब कुछ नॉर्मल था। दूसरे दिन आसींद आ गए। मैं दर्शन देने गया, सारी स्थिति की जानकारी प्राप्त की। उन्होंने कहा–'आप अपने मुंह से संथारा करवा दीजिए ताकि मुझे संतोष मिल जाए।' मैंने कहा–'हम तो गुरु आज्ञा के बिना संथारा नहीं करवा सकते। आचार्यश्री का चतुर्मास आमेट में ही है। आप वहां दर्शन कर संथारे का पच्चक्खाण कर सकते हैं।' दूसरे दिन वहां गए, दर्शन कर संथारे का निवेदन किया। गुरुदेव ने सारी स्थिति की जानकारी प्राप्त कर पूछा–'गुरु आज्ञा बिना संथारा कैसे किया?' उन्होंने तत्काल कहा–'आपके ही गुरु ने मुझे प्रेरणा दी और मैंने संथारा कर लिया। अब आपके मुखारविन्द से हो जाए तो मुझे बहुत प्रसन्नता होगी।' गुरुदेव ने फरमाया–'हम अभी संथारा नहीं करवाएंगे। आप दृढ़ता से उसका पालन कीजिए। वहां स्थित संत और श्रावक समाज आपका पूरा सहयोग करेगा।' मंगल पाठ सुनकर वापस आ गए। दिनभर लोगों की भीड़ लगी रहती। हमने भी सुबह का व्याख्यान उनके घर पर शुरू कर दिया। मध्याह्न में मुनि मिश्रीलालजी प्रतिदिन स्वाध्याय सुनाते और मुनि सुमतिकुमारजी भी समय-समय पर सुनाने जाते। भाइयों और बहिनों का भी अपना-अपना समय निश्चित हो गया।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

इस संथारे के उपलक्ष्य में गांव में त्याग-नियम बहुत हुए। उनके बार-बार आग्रह पर संथारा करवाने की आज्ञा भी प्राप्त हो गई। हमने चालू संथारे के आठवें दिन परिषद के मध्य विधिवत् संथारे का पच्चक्खाण करवाया। उनको बहुत प्रसन्नता हुई। मेरे मन में कई बार आया कि इनके शरीर की मजबूत स्थिति को देखते हुए न जाने यह संथारा कितना चलेगा? किन्तु आश्चर्य! दूसरे दिन प्रात: जब मैं दर्शन देने गया, देखा-शरीर इतना शिथिल हो गया कि ऐसा लगा दो-तीन दिन में ही संथारा संपन्न हो जाएगा और ऐसा ही हुआ। उन्होंने कई बार कहा–'स्वामी भीखणजी मुझे दर्शन देते हैं और कहते हैं–मजबूत रहना।' मैंने कहा–'आप स्वामीजी से पूछिए कि संथारा कितना चलेगा?' उन्होंने पूछा तो बताया कि पूर्णिमा तक चलेगा। ठीक पूर्णिमा को ही संपन्न हुआ। दस दिन के इस चौविहार संथारे में तीन बार उपसर्ग भी हुए, दो तो मेरे सामने ही हुए। आचार्यश्री ने पहले ही कहा था कि जब भी उपसर्ग की स्थिति बने, तब नवकार मंत्र और 'ॐ भिक्षु-जय भिक्षु' का जप जरूर करना। वैसा ही किया, उपसर्ग शांत हो गया। संथारे के मध्य उन्होंने कई बातें बताई, वे सही निकलीं।

चतुर्मास समाप्ति के बाद जब देवरिया गांव में आचार्यश्री के कमरे में प्रवेश किया, तब उन्होंने मिश्रीमुनि को निहारते हुए कहा–'आओ, तरुण तपस्वी!' तीनों संतों ने श्री चरणों में सिर रखा तो गुरुदेव ने अपना वरदहस्त शिष्यों के सिर पर रखा। हम धन्य-धन्य हो गए। रात्रि में प्रतिक्रमण के बाद आचार्यश्री ने आसींद संथारे की सारी जानकारी प्राप्त कर फरमाया–'यह एक चमत्कारी संथारा था।' मुनि सुमतिकुमारजी ने इस सम्पूर्ण घटनाक्रम को समेटते हुए एक विस्तृत व रोचक निबंध लिखा जो कि 'सतयुग की यादें' नामक पुस्तक में 'मौत को महोत्सव बनाया' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। सन् 1986 के उदयपुर मर्यादा महोत्सव तक गुरुदेव के सान्निध्य में रहे। वहां पर हमारा अगला चतुर्मास घोषित हुआ–भुज (कच्छ)।

कच्छ, वह कच्छ नहीं रहा

जब आचार्यश्री को वंदना करने गया, उन्होंने बहुत ही प्रसन्न मुद्रा में फरमाया–'ताराचन्द! अब कच्छ, वह कच्छ नहीं रहा, जो पहले था। बहुत बदलाव आ गया है।' मैंने निवेदन किया–'गुरुदेव! आपश्री के पधारने के बाद परिवर्तन तो होना ही था।' विहार से पूर्व आचार्यश्री का पथदर्शन एवं आशीर्वाद प्राप्त कर हम तीनों संतों ने विदा ली। उसी समय मैंने पूछा–'गुरुदेव! कच्छ जा रहे हैं तो माउन्ट आबू भी जाना होगा। वहां संघमुक्त एकाकी साधक मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) भी साधना कर रहे हैं। उनसे मिलने की भावना है, यदि आचार्यश्री की आज्ञा प्राप्त हो।' 'हां, जाओ, रहो और साधना के संबंध में जिज्ञासा करो।' गुरुदेव ने प्रसन्नता से फरमाया।

नीचे से ऊपर, ऊपर से नीचे

गोगुंदा से हम पिंडवाडा, सिरोही, आबू रोड़ होते हुए माउंट आबू की ऊंची-नीची चढ़ाई पार कर शिखर पर पहुंचे। यह रास्ता दुर्गम व आदिवासी बहुल होते हुए भी सीधा था। दस दिन के प्रवास में कुछ दिन शुभकरणजी दूगड़ (अहमदाबाद) के बंगले में रहे जहां ऊपरी मंजिल में एकाकी ध्यानयोगी अपनी साधना में लीन रहते थे। प्रारंभिक वार्तालाप में हमने कहा–'हम कच्छ की यात्रा पर जा रहे हैं। रास्ते में सहज ही माउंट आबू के दर्शनीय स्थलों का अवलोकन व आपसे मिलन हो गया।' उन्होंने केवल इतना ही पूछा कि 'बापू का' (आचार्यश्री तुलसी का) स्वास्थ्य तो अच्छा है? तदनन्तर वहां पर जितने भी दिनों का प्रवास हुआ, हम प्रतिदिन लगभग आधा-पौन घंटा उनके साथ साधना संबंधित जिज्ञासा करते और वे उसे समाहित करते। इसके सिवाय वे किसी प्रकार की इधर-उधर की बातें नहीं करते। वहां से विदाई के अवसर पर उनका प्रेरणा पाथेय मिला जो निम्नोक्त है–

'संबंधों के बीच रहो, किंतु भीतर को सब संबंधों से खाली करने में त्वरा करो। जिस दिन तुम्हारा अन्तर सब संबंधों से खाली होगा, उसी दिन तुम अपने में होंगे।' मैं मानता हूं कि यह पाथेय मेरे लिए, संघ में रहते हुए भी मेरी नैश्चयिक यात्रा का महत्त्वपूर्ण आलंबन बना।

तीन-चार दिन में माउंट आबू के ऐतिहासिक स्थलों यथा जैन मन्दिर, चमत्कारी साधक शांतिविजयजी का साधना स्थल, विशाल पानी की झील, शहर का स्थानक आदि का अवलोकन कर पुनः आबू रोड़ आ गए। नीचे से ऊपर और ऊपर से नीचे की यात्रा हो गई।

कच्छ के रण को पार किया

आबू रोड़ से अंबाजी, डीसा, पालनपुर आदि क्षेत्रों मे होते हुए कच्छ के रण को पार कर फतेहगढ़ पहुंच गए। कच्छ में प्रवेश हो गया। सुना था–कच्छ का रण पार करना बड़ा कठिन होता है। वह कठिन भी अब सरल हो गया, क्योंकि सड़कें बन गईं। सेवार्थी यात्रिओं के आने-जाने की सुविधा हो गई। एक विहार लंबा करना होता है। उस गांव के एक घर में प्रवास किया तो शाम को प्रतिक्रमण करते ही मकोड़ों का उपद्रव शुरू हो गया। देखते-देखते इतने मकोड़े बढ़ने लगे कि नीचे बैठना मुश्किल हो गया। सामान ऊंची जगह में रखा और तीनों संतों को जहां ऊंची जगह मिली वहां बैठ गए। घरवालों ने कहा–'महाराज! इनके सामने हमारा भी कुछ नहीं चलता।' वह रात्रि लगभग ऐसे ही बैठकर, कुछ लेटकर व्यतीत की।

फतेहगढ़, बेला तेरापंथ धर्मसंघ के ऐतिहासिक क्षेत्र हैं। ये वे क्षेत्र हैं जहां डालगणि ने चतुर्मास किए। आज भी वह स्थान है, जहां डालगणिराज मुनि अवस्था में विराजे और रात्रि में प्रवचन करते। हमारा दोनों क्षेत्रों में रहना हुआ। फतेहगढ़ में आज भी कई कणवी परिवार तेरापंथी है। वहां से गेड़ी में कुछ दिन प्रवास कर रापर पहुंचे। वहां हमारा प्रवास आठ कोटि स्थानक में हुआ।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

विरोधी भी विनम्र बने

मैं व्याख्यान संपन्न कर बैठा था। दो-तीन भाई मेरे साथ वार्तालाप कर रहे थे। दोनों संत गोचरी के लिए गये हुए थे। उस समय अचानक छह कोटि की दो साध्वियों ने प्रवेश किया। मैं भी खड़ा हो गया। साध्वियों ने वंदना की। औपचारिक वार्तालाप के मध्य साध्वीजी ने बताया कि यहां पर 96 वर्षीया वृद्ध साध्वीश्री बेलबाई स्वामी स्थिरवासिनी हैं। हम उनके सिंघाड़े की साध्वियां हैं। ज्ञात हुआ कि आज आप पधारे हैं। दर्शन करने आना हो गया। मैंने भी संक्षेप में आचार्यश्री के बारे में तथा हमारी कच्छ यात्रा के बारे में बताया।

उनके जाने के बाद तेरापंथी भाइयों ने बताया–'मुनिश्री! जब आचार्यप्रवर कच्छ यात्रा के दौरान रापर पधारे, तब एक दिन पहले हम लोग स्थानक में गए और उज्ज्वलबाई स्वामी से निवेदन किया–कल हमारे गुरुदेव आचार्यश्री तुलसी रापर पधार रहे हैं। आप व्याख्यान स्थगित रखें तो अच्छा रहेगा।' तत्काल उत्तेजित भाषा में दो टूक उत्तर मिला–'हमारा व्याख्यान बंद नहीं रहेगा। आचार्यजी आ रहें हैं तो हमें क्या लेना-देना है।' उक्त प्रसंग का उल्लेख करते हुए श्रावकों ने कहा–'यह वही उज्ज्वलबाई स्वामी है। हमें आश्चर्य है कि वही साध्वी आज स्वयं चलाकर आई और इतनी विनम्रता का परिचय दिया।'

सौहार्दपूर्ण वार्तालाप

दूसरे दिन श्रावकों के साथ हम तीनों संत छह कोटि स्थानक में गए। साध्वियों ने पट्ट बिछा रखा था। आग्रहपूर्वक हमको ऊपर बिठाया। वयोवृद्धा साध्वी अपने पट्ट से नीचे उतरने लगी। हमने कहा–'आप इतना कष्ट क्यों उठाती हैं?' साध्वीजी नम्रता से गुजराती भाषा में बोली–'तमें अहियां पधार्‍या छो, हूं ऊपर केम वैसूं?' 10-12 साध्वियों एवं श्रावक समाज की उपस्थिति में लगभग पौन घंटा अत्यन्त सौहार्दपूर्ण वातावरण में दोनों तरफ से जिज्ञासा और समाधान का सुन्दर क्रम चला।

चतुर्विध समण संघ का उल्लेख है

अंत में विदुषी साध्वी उज्ज्वलबाई स्वामी ने कहा–'मुनिश्री! आप हमारी तरफ से आचार्यश्री तुलसी को निवेदन करावें कि आपने जो 'समण श्रेणी' स्थापित की है, उसका नाम उचित नहीं लगता, क्योंकि 'समण' शब्द में तो साधु-साध्वियों का समावेश होता है। अतः इस बारे में पुनः चिंतन होना चाहिए। मैंने कहा–'साध्वीजी! भगवती सूत्र के संभवतः 16 वें तथा 20 वें शतक में 'चतुर्विध समण संघ' का उल्लेख हुआ है। उसमें श्रावक-श्राविकओं का भी समावेश होता है। वैसी स्थिति में 'समण श्रेणी' नाम कैसे अनुपयुक्त हो सकता है?' साश्चर्य साध्वीजी ने कहा–'क्या भगवती सूत्र में ऐसा पाठ है?' मैंने कहा–'आप स्वयं देखें, ज्ञात हो जाएगा।' रापर से अंजार, गांधीधाम, माधापर आदि कई क्षेत्रों में प्रवास हुआ और वहां श्रावक समाज को आस्थाशील बने रहने की प्रेरणा दी।

विक्रम संवत् 2043 (सन् 1986) के चतुर्मास के लिए भुज (कच्छ) में प्रवेश किया। वहां 'श्रीसंघ' में सभी जैन संप्रदायों का समावेश हो जाता है। परस्पर प्रेम-मैत्री भाव भी अच्छा है। अपने-अपने विचारों में कट्टरता होते हुए भी राग-द्वेष कम है। सामूहिक कार्यक्रम होते रहते हैं। तेरापंथ के प्रथम श्रावक श्री गेरूलालजी व्यास द्वारा कच्छ में टीकमजी डोसी आदि कई श्रावक प्रतिबुद्ध हुए, ऐसा इतिहास बताता है। गांवों से लोगों का व्यापारार्थ आने से भुज में तेरापंथियों की संख्या बढ़ी है। सभी में श्रद्धा, भक्ति-भावना अच्छी है। हमारा चतुर्मास तेरापंथ भवन में था। दो समय के व्याख्यान में उपस्थिति अच्छी रहती। प्रभुभाई आदि ज्ञानशाला का वर्षों से अच्छा संचालन कर रहे हैं। पर्युषण पर्व के नौ दिन तो धर्ममय बन गए। नौ ही दिन के कार्यक्रम एक बड़े हॉल में रखे गए। पर्युषण में सायं प्रतिक्रमण करने के लिए परिवार के आबालवृद्ध सदस्यों की उपस्थिति से तो हम भी आश्चर्यचकित थे। संवत्सरी के बाद सामूहिक जैन समाज का खमतखामणा का कार्यक्रम भी प्रभावशाली रहा। मुनि मिश्रीलालजी का छट्ठ भक्त एवं अट्ठम भक्त तप का प्रभाव भी व्यापक रहा। भाई-बहिनों में तप का क्रम अच्छा चला। अणुव्रत उद्‌बोधन सप्ताह का कार्यक्रम भी, विशेषकर विद्यालयों में आयोजित हुआ। संतों का व्याख्यान सरल हिन्दी भाषा में होता। धीरे-धीरे गुजराती भी बोलने लगे। चतुर्मास उत्साहमय वातावरण में प्रारंभ और संपन्न हुआ।

कंठी प्रदेश में विचरण

चतुर्मास के बाद मुद्रा, मांडवी आदि कंठी प्रदेश के छोटे-बड़े अनेक क्षेत्रों में विचरण किया। समुद्र के किनारे बसने से इसको कंठी प्रदेश कहते हैं। इन क्षेत्रों में अधिक संख्या 'नानीपक्ष' संप्रदाय की है। इनके साधु-साध्वियों तथा श्रावक समाज में कट्टरता अधिक है। इनमें एक आचार्य का नेतृत्व होता है। वर्ष में दो बार सभी आचार्य की सन्निधि में एकत्रित हो जाते हैं और सभी साधु-साध्वियों को एक सिंघाड़े से दूसरे सिंघाड़े में परिवर्तित कर दिये जाते हैं। यहां तक कि आचार्य के पास रहने वाले संत भी बदल जाते हैं। उनकी मान्यता के अनुसार लम्बे समय तक साथ रहने से राग भाव बढ़ने की संभावना अधिक रहती है। उस संप्रदाय के साधु-साध्वियां कच्छ से बाहर नहीं जाते, क्योंकि उनकी मान्यता है कि बाहर जाने से शुद्ध साधुपन का पालन नहीं हो सकता। कच्छी लोग, विशेषकर कंठी प्रदेश के, व्यापारार्थ मुम्बई में अधिक रहते हैं, किन्तु चतुर्मास के समय परिवार के काफी सदस्य गांव में आ जाते हैं।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

आचार्यश्री की नम्रता

जब हम उन क्षेत्रों में विचरण कर रहे थे तब आचार्यश्री रामजी स्वामी और युवाचार्यश्री लाघवजी स्वामी आदि संतों से मिलना हुआ। लगभग एक घंटा तक सौहार्दपूर्ण वातावरण में दोनों ओर से जिज्ञासा एवं समाधान का सरस क्रम चला। आचार्यश्री की नम्रता से हम भी प्रभावित हुए। जब हम स्थानक में गए तो पट्ट से नीचे बैठ गए और युवाचार्य को भी बुला लिया। हमने कहा–'आप आचार्य हैं फिर पट्ट से नीचे क्यों?' उन्होंने सहज-सरल भाव से कहा–'बराबर बैठने से वार्तालाप अच्छा होगा और ऊपर-नीचे बैठने से क्या फर्क पड़ता है?' इनके जितने स्थानक हैं, उनमें आंगन प्राय: गोबर से लिपा होता है। हमारे पूछने पर बताया कि सर्दी-गर्मी दोनों में यह स्पर्श अनुकूल रहता है।

सामाजिक सेवा कार्य

भुज से विहार कर मुद्रा, मांडवी की तरफ जा रहे थे। एक गांव में स्थानकवासी समाज द्वारा चलाए जा रहे वृद्धाश्रम को देखा। जैन समाज का कोई भी साधु-साध्वी तथा श्रावक-श्राविका वहां रहकर अपनी साधना कर सकता है। भाइयों तथा बहिनों की रहने की व्यवस्था अलग-अलग है। भोजन-पानी के साथ डॉक्टरों की भी व्यवस्था है। वहां सत्संग भी होता है। हमारा प्रवचन भी हुआ। कंठी प्रदेश में यह भी देखा कि बड़े क्षेत्रों में प्राय: भोजनशालाएं चलती हैं। जो वृद्ध हैं, वे वहां जाकर भोजन करें अथवा चाहे तो अपने टिफिन ले जाएं। कंठी प्रदेश की यात्रा संपन्न कर हम पुन: भुज आ गए और मर्यादा महोत्सव का कार्यक्रम वहीं पर आयोजित हुआ।

छह कोटि, आठ कोटि के क्षेत्रों में

भुज से विहार कर छह कोटि, आठ कोटि स्थानकवासी संप्रदाय के चित्रोल, लाकड़िया, भचाउ, सामख्याली आदि काफी क्षेत्रों में प्रवास किया। रहने के लिए प्राय: स्थानक मिल जाते। सुबह व्याख्यान में भी वे लोग आते और रात्रि में अर्हत् वंदना के बाद धर्म-चर्चा में भी भाग लेते। कच्छ में यह भी देखा कि साध्वियां हम संतों को वंदना करतीं और व्याख्यान में भी उपस्थित रहतीं। हम कहते–'आप नीचे क्यों बैठती हैं? पट्ट आदि का उपयोग क्यों नहीं करतीं?' वे कच्छी साध्वियां नम्रता से कहती–'महाराजश्री! संतों के सामने पट्ट पर केम बेसाय-कैसे बैठें?' यह व्यवहार उनकी नम्रता तथा प्रमोद भावना का प्रतीक था। वहां साधु-साध्वियों के रहने के स्थानक सभी के अलग होते हैं। वहां के लोगों को नवकारसी, पोरसी, उपवास आदि का तथा प्रतिक्रमण के समय जो पच्चक्खाण करते हैं, उनको आगम-प्राकृत भाषा का पाठ बोलकर पच्चक्खाण करवाया जाता है। हमने प्रारम्भ में एक दो-बार राजस्थान की, हमारी परम्परा के अनुसार 'त्याग है' कह दिया, इसको ये लोग पच्चक्खाण नहीं मानते। उन्होंने हमको पूछ लिया–'तमे पाठ बोलकर पच्चक्खाण नत्थी करवाते?' हमें सदा के लिए एक अच्छी प्रेरणा मिल गई। कच्छ का आम भोजन-खाखरा, लाकड़िया, थेपला आदि हमारे लिए नया अनुभव था।

रापर में प्रथम चतुर्मास

विक्रम संवत् 2044, सन् 1987 का हमारा चतुर्मास रापर (कच्छ) के तेरापंथ भवन में हुआ। यहां तेरापंथ के तेरह परिवार ही थे। अन्य संप्रदायों के परिवार काफी संख्या में थे। तेरापंथी श्रावकों ने जिस उत्साह के साथ चतुर्मास लिया, उसी उत्साह के साथ व्याख्यान आदि में उपस्थिति रहती। छह कोटि साध्वियों का स्थिरवास वहां था ही, अत: वहां का व्याख्यान संपन्न होने के बाद कुछ लोग यहां भी आ जाते। छह कोटि धार्मिक पाठशाला के विद्यार्थी प्राय: दर्शनार्थ आ जाते।

आत्मीय संबंध बन गया

सायं प्रतिक्रमण, अर्हत् वंदना के बाद संतों की गीतिकाएं होतीं, फिर मैं नाना विषयों पर कुछ बोलता। उस समय कुछ स्थानकवासी श्रावक भी आते। उनमें तत्त्वज्ञानी भी होते। व्याख्यान के बाद आधा-पौन घंटा तक वे समागत श्रावक नाना प्रकार की जिज्ञासाएं करते, उनमें तत्त्वज्ञान संबंधी प्रश्न भी आ जाते। मेरे मन में विचार आया कि इनको तो 15-20 थोकड़े कंठस्थ हैं। मैंने तो वैराग्य की अवस्था में 5-6 थोकड़े कंठस्थ किये थे, वे भी आज सब के सब स्मृति में नहीं हैं। ऐसी स्थिति में मुझे क्या करना चाहिए? क्योंकि ये भी प्रतिदिन के पक्के पाहूणे हैं। चिंतन के बाद निर्णय आया कि जिस प्रश्न का उत्तर दे सकूं, उसको तो उत्तरित करना ही है। अन्यथा कह दूं कि इसकी मुझे जानकारी–धारणा नहीं है। आप ही अपनी जानकारी बताएं। इस चिंतन की क्रियान्विति से ऐसा आत्मीय संबंध जैसा बन गया कि प्राय: चार ही महीनों तक सौहार्दपूर्ण वातावरण में यह क्रम चलता रहा।

पर्युषण पर्व में आस-पास के क्षेत्रों से श्रावक समाज के आने से उपस्थिति बढ़ गई। चतुर्मास में उपवास, पौषध, प्रतिक्रमण, व्याख्यान-श्रवण, नवाह्निक कार्यक्रमों द्वारा धर्मध्यान की अच्छी आराधना हुई। संवत्सरी के खमतखामणा करने के लिए हम श्रावक समाज के साथ छह कोटि स्थानक में गए। वृद्धा साध्वी बेलबाई स्वामी, उज्ज्वलबाई स्वामी आदि साध्वियों ने क्षमायाचना की एवं प्रमोद भावना के साथ बहुत-बहुत प्रसन्नता व्यक्त की।

तप का प्रभाव

मुनि मिश्रीलालजी के तेले–अट्ठम तप का प्रभाव इतना रहा कि लोग दर्शन करने आते, गोचरी का आग्रह करते और तपस्वी मुनि पारणे में 15-20 घरों से पारणा ले आते। प्रात: इतना जल्दी किसी के घर कुछ मिले या नहीं, किन्तु बाजरे, गेहूं का खाखरा और दही

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

तो हर घर में उपलब्ध हो जाता। बहुत बार उसी से अट्ठम भक्त का पारणा करते। एक दिन मैंने कहा–'तपस्वी! तेले के पारणे में दही-खाखरा कैसे अनुकूल रहता होगा?' उन्होंने कहा-'मुनिश्री! मेरे लिए कोई वस्तु प्रतिकूल नहीं होती। मात्रा का ध्यान अवश्य रखता हूं।' वे पारणा प्रायः अपने आप गोचरी करके लाते। कभी-कभी विहारों में हमको भी नाश्ता करवा देते। मैंने कई बार कहा–'तुम तेला करते हो, फिर रास्ते में बेला करोगे। गांवों में पारणे की कठिनाई रहेगी, इसलिए विहार में कुछ परिवर्तन कर दें।' वे दृढ़ता से कहते–'मेरे लिए परिवर्तन की अपेक्षा नहीं है। न पारणे की दृष्टि से और न किलोमीटर आदि की दृष्टि से।' उनकी तप में समता की साधना अद्भुत थी। समता से ही तप का महत्त्व है। समता उनके जीवन का आदर्श था।

पालीताणा की यात्रा

रापर का चतुर्मास संपन्न कर पालीताणा जाने के लिए निर्देश मंगाने पर आचार्यश्री ने फरमाया–'पालीताणा जा सकते हो, किन्तु वापस कच्छ में ही आना है।' मुनि सुमतिकुमारजी ने ऐसा द्रुतगामी प्रोगाम बनाया कि यात्रा संपन्न कर मर्यादा महोत्सव कच्छ में ही किया।

कच्छ से सीधा रास्ता लिया, जिसमें बांकानेर, मोरवी, चूड़ा, लीमड़ी, भावनगर, बोटाद, सोनगढ़ आदि अनेक गांवों, शहरों में होते हुए पालीताणा (जैन तीर्थ) पहुंचे। कोई परिचित नहीं था। दो संत धर्मशाला के बाहर खड़े हो गए तथा तपस्वी मिश्रीमुनि स्थान की गवेषणा के लिए आस-पास गए। एक साध्वीजी ने पूछा–'आप यहां कैसे खड़े हैं?' हमने कहा–'एक संत स्थान के लिए गए हैं।' उन्होंने तत्काल कहा–'यहां ऐसे स्थान नहीं मिलेगा। मेरे साथ चलो, मैं अभी व्यवस्था करवा देती हूं।' हम दोनों संत चले, इतने में मिश्रीमुनि भी आ गए और कहा–'स्थान तो है, किन्तु साध्वियां भी उधर बहुत हैं।' मैंने कहा–'तब वहां नहीं जाएंगे।' वह साध्वीजी हमें एक पेढ़ी में ले गई और वहां के व्यवस्थापक मुनि महाराज से हमारा परिचय करा दिया। उन्होंने तत्काल एक भाई को हमारे साथ कर दिया और कहा–'यह अमुक धर्मशाला में आपके रहने की व्यवस्था कर देगा।' इसके साथ यह भी कहा-'वह स्थान कुछ दूरी पर है, इसलिए आप गोचरी यहां से लेकर ही जाएं ताकि दोबारा आने का कष्ट नहीं होगा।' वहां बहुत बड़ा भोजनालय चल रहा था। तपस्वी मुनि के तो तपस्या थी। दो संतों का आहार-पानी लेकर वहां से निर्दिष्ट स्थान में पहुंच गए।

दूसरे दिन शौच आदि से निवृत्त होकर ऊपर की ओर प्रस्थान किया। रास्ते में सैंकड़ों साधु-साध्वियों तथा गृहस्थों का आवागमन हो रहा था। अशक्त व्यक्ति डोलियों में जा रहे थे। पर्वतारोहण करने के बाद एक भाई द्वारा हमें शत्रुंजय तीर्थ की संक्षिप्त जानकारी प्राप्त हो गई। मुख्य मन्दिर आदिनाथ भगवान का है। वहां पर भीड़ बहुत थी, फिर भी वह भाई हमें मुख्य प्रतिमा के सामने ले गया। प्रतिमा को निहारा, जप किया और भीड़ से बाहर आकर अन्य दर्शनीय स्थलों को देखा। अनेक आचार्यों, मुनियों से कुछ मिनटों के लिए सहज ही मिलन भी हो गया। चढ़ने-उतरने तथा वार्तालाप आदि में लगभग तीन घंटे लगे। तलहटी में भी कुछ दर्शनीय स्थलों को देखा, जप किया। पूरा परिसर धर्मशालाओं आदि से भरा है, फिर भी जगह-जगह निर्माण कार्य चल रहा था। दूसरे दिन सायं ही विहार कर दिया और राजकोट आदि क्षेत्रों का स्पर्श करते हुए पुनः मोरवी, बांकानेर से कच्छ में प्रविष्ट हो गए। निश्चयानुसार फतेहगढ़ (कच्छ) में मर्यादा महोत्सव का कार्यक्रम संपन्न हो गया।

विक्रम संवत् 2045 (सन् 1988) का चतुर्मास गांधीधाम (कच्छ) में हुआ। यहां पर कच्छी तेरापंथी परिवारों से मारवाड़ी परिवारों की संख्या अधिक है। गांधीधाम काफी लम्बा-चौड़ा फैला हुआ है। घर नजदीक भी हैं और दूर भी हैं। गांधीधाम के पास विशाल कांडला बंदरगाह है। उसको भी देखा। तीनों समय व्याख्यान आदि का क्रम चला। उपवास की बारियां, पचरंगी तप के साथ अठाइयां आदि थोकड़े भी बहुत हुए। पर्युषण पर्व की नवाह्निक उपस्थिति भी उल्लेखनीय थी। ज्ञानशाला और जैन विद्या परीक्षा का क्रम भी प्रतिवर्ष चलता है। गांधीधाम में हम संतों के सान्निध्य में व समणी निर्देशिका स्थितप्रज्ञाजी के निर्देशन में प्रेक्षाध्यान शिविर हुआ।

तीन वर्षों की कच्छ यात्रा सानन्द संपन्न कर गुरुदर्शनार्थ गांधीधाम (कच्छ) से (मर्यादा महोत्सव के अवसर पर) छापर के लिए यात्रा प्रारम्भ की। लगभग 800 किलोमीटर की यात्रा संपन्न कर श्रीगुरुदेव के चरणों में पहुंच गए। तीन वर्षों की कच्छ यात्रा का सारा विवरण आचार्यश्री के करकमलों में प्रस्तुत किया। आचार्यवर ने प्रसन्न मुद्रा में फरमाया–'तुम्हारी यह कच्छ यात्रा संघ की गरिमा को बढ़ाने वाली व सफल यात्रा हुई है।'

लघुता से प्रभुता मिले

प्रसंग छापर का ही है। बाहर शौचार्थ भ्रमण कर आया और श्री गुरुदेव के उपपात में पहुंचकर वंदना कर रहा था। उस समय आचार्यश्री अत्यन्त प्रसन्न मुद्रा में विराजमान थे। मेरी ओर दृष्टिपात करते हुए फरमाया–'आओ, ताराचन्दजी!' उनके मुखारविंद से मेरे लिए 'जी' शब्द का प्रयोग मैंने पहली बार सुना। निकट जाकर निवेदन किया–'मैं तो आपश्री का बच्चे के समान छोटा शिष्य हूं, फिर यह 'जी' शब्द का प्रयोग कैसा-कैसा लग रहा है। पूज्यश्री चिन्तन करवाएं।' आचार्यश्री ने वात्सल्य पूरित अपना वरदहस्त मेरे मस्तक पर रखते हुए विनोद में फरमाया–'अब तुम बड़े हो गए हो।' मैंने नम्रता से कहा–'हम कितने ही बड़े क्यों न हो जाएं, आपश्री के चरणों में लघु बनकर ही रहेंगे।' 'लघु' शब्द सुनते ही तत्काल फरमाया–'लघुता से प्रभुता मिले।' एक छोटे शिष्य को कहां से कहां तक पहुंचा दिया। यही तो सद्गुरु का सबसे बड़ा माहात्म्य है। गुरु का परम उपकार है।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

एक वर्षीय शिविर

विक्रम संवत् 2046, सन् 1989 में योगक्षेम वर्ष का आयोजन। आचार्यश्री तुलसी एवं युवाचार्यश्री महाप्रज्ञजी का पावन सान्निध्य। जैन विश्व भारती, लाडनूं का विशाल परिसर, सैंकड़ों साधु-साध्वियों, समणियों तथा हजारों श्रावक समाज की उपस्थिति। आचार्यश्री तुलसी के सपनों का एक साकार रूप प्रस्तुत हो रहा था। गुरुकृपा से हमारा प्रवास भी वहीं था। कहना चाहिए–चतुर्विध धर्मसंघ के लिए ज्ञान, दर्शन, चारित्र के विकास का एक वर्षीय शिविर था। अपनी-अपनी क्षमता के अनुसार सब लाभान्वित हो रहे थे। मैंने भी प्रेक्षाध्यान प्रशिक्षक परीक्षा के साथ ध्यान का विशेष अभ्यास किया और युवाचार्यश्री महाप्रज्ञजी द्वारा कुछ चुने हुए साधु-साध्वियों को ध्यान के विशेष प्रयोग करवाए गए, उसमें मेरी भी सहभागिता रही। आचार्यश्री के निर्देशानुसार कुछ महीनों तक बाल मुनियों की प्रारम्भिक ध्यान की क्लास भी ली। आचार्यश्री तुलसी के शब्दों में–वह एक आध्यात्मिक-वैज्ञानिक व्यक्तित्व विकास का वर्ष था।

पूर्वांचल की ओर प्रस्थान

योगक्षेम वर्ष की संपन्नता के लगभग दो मास पूर्व आचार्यश्री ने कुछ सिंघाड़ों को पूर्वांचल की ओर एवं कुछ सिंघाड़ों को दक्षिणांचल की ओर विहार करने का आदेश दिया। उनमें मुझे पूर्वांचल बिहार, नेपाल की ओर तथा मुनिश्री सुमेरमलजी (लाडनूं) को कोलकाता की ओर जाने का निर्देश दिया। हम दोनों सिंघाड़ों ने श्री गुरुदेव का आशीर्वाद लेकर छह संतों के साथ जैन विश्व भारती, लाडनूं से प्रस्थान किया।

जयपुर, आगरा होते हुए कानपुर में मर्यादा महोत्सव किया। तत्पश्चात् पावापुरी तक साथ रहे। यात्रा का यह लम्बा, सुखद प्रवास चिरस्मरणीय रहेगा। वहां से मुनिश्री शिखरजी होते हुए कोलकाता की ओर तथा हम गुलाबबाग (बिहार) की ओर प्रस्थित हुए। बरौनी, बेगुसराय, अररियाकोर्ट होते हुए अररिया आर. एस. पहुंचे। जहां साध्वीश्री मोहनांजी (राजलदेसर) एवं साध्वीश्री जयश्रीजी विराजमान थीं। उनका आतिथ्य प्राप्त हुआ और वहां चतुर्विध धर्मसंघ के साथ महावीर जयंती का भव्य कार्यक्रम अच्छी उपस्थिति में संपन्न हुआ। उसके बाद कई क्षेत्रों में कर्मणा जैन परिवारों को प्रेरणा पाथेय दिया। अररिया कोर्ट तथा फारविसगंज में कारणवश काफी लंबा प्रवास हुआ।

विक्रम संवत् 2047, सन् 1990 का चातुर्मासिक प्रवेश गुलाबबाग (बिहार) के पाटव्यवसायी भवन में किया। वहां प्रायः थली-क्षेत्र के लोग प्रवासित हैं। भक्ति-भावना अच्छी है। तीनों समय के व्याख्यान आदि में उत्साहपूर्ण उपस्थिति रहती। युवकों, किशोरों आदि ने भी सत्संग का अच्छा लाभ लिया। तपस्या, पर्युषण पर्व आदि के सारे कार्यक्रम व्यवस्थित चले। मेरा स्वास्थ्य अनुकूल कम रहा, फिर भी संतों के सहयोग तथा गुरुकृपा से चतुर्मास के सारे कार्यक्रम संपन्न हुए।

जैसा निवेदन वैसा निर्देश

गुलाबबाग चतुर्मास के बाद कोलकाता जाने के लिए आचार्यश्री को निवेदन करवाया और आदेशानुसार कोलकाता पहुंच गए। इस यात्रा पथ में जीवन में पहली बार स्टीमर द्वारा गंगा नदी को पार किया और मुनिश्री सुमेरमलजी (लाडनूं) आदि संतों से मिलन हो गया तथा केन्द्र की आज्ञा से एक संत को मुनिश्री सुमेरमलजी (लाडनूं) को सौंप दिया।

कोलकाता से आचार्यवर को एक और निवेदन करवाया–'आचार्यवर! यद्यपि सम्मेदशिखरजी जाने में चक्कर तो जरूर पड़ेगा, फिर भी शिखरजी का अवलोकन करने की हम संतों की भावना है। कुछ दिनों बाद ही श्री रतनलालजी चोपड़ा का पत्र आया, जिसमें शिखरजी जाने का निर्देश मिल गया। उस पत्र में आचार्यवर ने एक वाक्य फरमाया–'सानन्द, सकुशल और परम प्रसन्नता से विहार करो।' पूज्यश्री का यह वाक्य हमारी पूरी यात्रा में एक शक्तिशाली आलंबन बना रहा।

शिखरजी की यात्रा

कोलकाता से चले और लम्बे-लम्बे विहार करते हुए सम्मेदशिखरजी की तलहटी में पहुंच गए। दूसरे दिन प्रातः सूर्योदय होते ही उत्साह के साथ ऊपर की ओर प्रस्थान किया। 15-20 भाई–बहिनें भी साथ हो गए। कहीं-कहीं चढ़ाई दुरूह भी है, फिर भी समय पर पहुंच गए। प्रायः सभी टोंकों पर गए, कहीं बैठकर, कहीं खड़े रहकर तीर्थंकरों की स्तवना, जप, ध्यान आदि किए। तीर्थंकरों ने जहां निर्वाण प्राप्त किया, उस पावन भूमि पर आकर बड़ी प्रसन्नता की अनुभूति हुई। एक कुत्ता इस पूरी यात्रा में आगे-आगे चलता रहा। किसी भाई ने कहा–'यह मार्गदर्शक का काम कर रहा है।'

आहार और विश्राम कर चले एवं सूर्यास्त से पहले-पहले नीचे तलहटी में प्रवास स्थल पर पहुंच गए। कोलकाता से सम्मेद शिखरजी तक महिला मंडल और कोलकाता प्रवासी मेरी संसारपक्षीया बहिन ने सेवा की। शिखरजी से रास्ते की सेवा के लिए चास-बोकारो के विजयचन्दजी छल्लानी (परिवारसहित) तथा धर्मचन्दजी लोढ़ा आदि आ गए। इस प्रकार बिहार, पश्चिम बंगाल और असम तक श्रावक समाज द्वारा आगे से आगे रास्ते की सेवा का क्रम चलता रहा।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

गुलाबबाग से बिलासीपाडा

इस लंबी यात्रा में एक महीना अधिक होने से हमें क्षेत्रों में रहने का मौका मिल गया। चास-बोकारो में कुछ दिन रहना हुआ। मैंने तेला भी किया। वहां इस्पात का विशाल कारखाना है। परिवार कम होते हुए भी धर्म के प्रति आस्था अच्छी है। सत्संग का लाभ सभी ने अच्छा लिया।

वहां से झरिया, धनबाद, रानीगंज, दुगराजपुर, सैंथिया, मलारपुर, बरहमपुर, बेलडांगा, फरक्का, मालदा, दलखोला, किशनगंज, इस्लामपुर होते हुए सिलीगुड़ी में (अक्षय तृतीया) का कार्यक्रम समायोजित किया। वहां से पर्वतीय मार्गों की यात्रा करते हुए दार्जिलिंग पहुंचे। टाईगर हिल पर ऊगते हुए सूर्य का दर्शन वहां के प्रमुख आकर्षक दृश्यों में है। वह हमने देखा। सहज ही दर्शन केन्द्र पर अरुण रंग का ध्यान हो गया। वहां से सिक्किम की राजधानी गंगटोक होते हुए पुनः सिलीगुड़ी पहुंचे। मार्गगत् विभिन्न क्षेत्रों का स्पर्श करते हुए असम प्रवेश किया। चतुर्मास हेतु बिलासीपाड़ा पहुंच गए। गुलाबबाग से बिलासीपाड़ा तक 2337 किलोमीटर की यात्रा संपन्न हुई। विक्रम संवत् 2048, सन् 1991 का चातुर्मासिक प्रवेश बिलासीपाड़ा (असम) में हुआ।

यहां चतुर्मास का मुख्य कारण बना मेरे संसारपक्षीय बड़े भाई श्री तेजकरणजी, फूसराजजी चोरड़िया आदि पांच भाइयों तथा एक बहिन का परिवार वहां प्रवास कर रहा है। उनके विशेष निवेदन पर आचार्यश्री ने चतुर्मास प्रदान किया।

वहां तेरापंथी परिवार प्रायः थली की तरफ के हैं। जब से असम में साधु-साध्वियों का विचरण शुरू हुआ, तभी से यहां पर प्रवास भी होता रहा है। हमारा चतुर्मास एक स्कूल में था। प्रथम चतुर्मास होने से श्रावक समाज उत्साहपूर्वक व्याख्यान श्रवण आदि का लाभ लेता। बारी के उपवास, पचरंगियां तप, अठाइयां आदि अनेक थोकड़े चतुर्मास के अन्तिम समय तक हुए। गोचरी भी प्रायः सभी जैन परिवारों में जाना होता। उनका भी व्याख्यान में आना होता था। यहां के जिम्मेदार श्रावकों में चम्पालालजी बैद आदि थे। दो संत होने से मेरा भी कार्यों में सहयोग करने का विशेष प्रयास रहता।

चतुर्मास के बाद आचार्यश्री के आदेशानुसार कोकराझाड़, वासुगांव होते हुए बंगाईगांव शीघ्रता से पहुंचे, क्योंकि वहां सुजानगढ़ निवासी व बंगाईगांव प्रवासी बांठिया परिवार की एक बहिन भंवरीदेवी का संथारा चल रहा था। 45 दिन का लम्बा संथारा चला। बहिन के परिणाम उत्तरोत्तर वर्धमान रहे। दो-तीन घंटा हम भी आराधना आदि सुनाते। अन्य समय में भाई-बहिनें भी स्वाध्याय सुनाते। यह भी एक ऐसा संयोग मिला कि हमारे द्वारा मंगल पाठ आदि सुनाते-सुनाते बहिन का संथारा संपन्न हुआ। इस संथारे के संदर्भ में आचार्यश्री तुलसी ने एक छन्द भी फरमाया–

शुभ पैताली दिन संथारो, गुंज उठ्यो बंगाईगांव।
गजब बांठिया भंवरी गौरव, तारामुनि तार्यो आसाम ॥

बंगाईगांव से चापड़, अभयपुरी, विजनी, सरभोग आदि क्षेत्रों में प्रवास करते हुए बरपेटारोड़ में मर्यादा महोत्सव का कार्यक्रम संपन्न कर पाठशाला, टिहू, नलवाड़ी, रंगिया, मालीगांव, गुवाहाटी आदि गांवों-शहरों में श्रावक समाज को धर्म की प्रेरणाएं दी।

शिलोंग की यात्रा

पहाड़ों की दुरूह चढ़ाई को पार करते हुए शिलोंग पहुंचे। वहां सुराणा, सेठिया आदि परिवार प्रवास करते हैं। हमारा भी लगभग एक मास रहना हो गया। लोगों ने भी समय-समय पर सेवा-दर्शन, व्याख्यान श्रवण आदि का अच्छा लाभ उठाया। वहां पर हमने गर्मी में भी सर्दी का अनुभव किया। सर्दी के वस्त्रों का उपयोग करना पड़ा।

वहां से विहार कर लोंगपोह, सोनापुर, जागीरोड़, नौगांव, ढ़ींगबाजार, मोरियाबाड़ी, भूरागांव, पुरानी गोदाम, तेजपुर, ढेक्याजुली, खारूपेटिया, मालीगांव आदि क्षेत्रों में प्रवास किया। बिलासीपाड़ा से गुवाहाटी तक 962 किलोमीटर की यात्रा संपन्न हुई।

गुवाहाटी चातुर्मास

विक्रम संवत् 2049, सन् 1992 का चातुर्मासिक प्रवेश गुवाहाटी के तेरापंथ भवन में हुआ। यह असम की राजधानी है। बहुत विशाल भू-भाग में फैली हुई है। गुवाहाटी में तेरापंथी परिवार काफी संख्या में हैं। क्षेत्र बड़ा है तो व्याख्यान में उपस्थिति भी उसी के अनुरूप होती, किन्तु स्थानीय श्रावक समाज में आपसी ताल-मेल नहीं होने से उसका असर विकासमूलक कार्यों पर हो रहा था। वहां प्रवास करने वाले साधु-साध्वियों एवं समणियों की भी कसौटी हो जाती है। आचार्यश्री का हमें संदेश मिला–'तुमको तुम्हारे ढ़ंग से शांति से कार्य करना है। वाद-विवाद से बचते रहना है।' यह संदेश हमारे लिए ऐसा कार्यकारी बना कि चतुर्मास के सारे कार्यक्रम निर्विघ्न संपन्न हुए। श्रावण, भाद्रपद में तपस्या का क्रम बहुत अच्छा चलता है। हम दो संतों के लिए कसौटी थी कि इतने बड़े क्षेत्र को संभालना, तपस्या के पारणों में हर घर में जाना कोई साधारण बात नहीं थी, फिर भी हमने ऐसा क्रम बनाया कि प्रातः एक ओर मैं 15-20 घरों की गोचरी कर लेता और दूसरी तरफ सुमतिमुनि भी वैसा करते। फिर दोनों एक जगह आकर नाश्ता कर लेते। व्याख्यान के समय से पहले भवन में पहुंच जाते।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

सुमतिमुनि की श्रमशीलता

दो संत इतने बड़े क्षेत्र को कैसे संभालेंगे? यह विचार श्रावक समाज के मन में आना सहज था, किन्तु विशेषकर सुमतिमुनि की क्षेत्रोचित श्रमशीलता तथा व्यवहार-कुशलता के कारण श्रावक समाज के दिमाग से वह विचार स्वत: ही तिरोहित हो गया। इनकी श्रमशीलता की मेरे मन में गहरी छाप है। आगे जब इन्हें सह-अग्रगण्य बनाया, तभी से मैं समय-समय पर इन्हें श्रमशील सह-अग्रगण्य के रूप में पुकारता हूं।

संयुक्त मर्यादा महोत्सव

चतुर्मास की समाप्ति के बाद मर्यादा महोत्सव तक लगभग 20 कॉलोनियों तथा उपनगरों में प्रवास हुआ। वहां प्रवासित श्रावक समाज को निकटता से सेवा-दर्शन एवं धार्मिक प्रेरणाएं प्राप्त हुईं। साध्वी जयश्रीजी आदि साध्वियां भी अपना चतुर्मास संपन्न कर गुवाहाटी के तेरापंथ भवन में पधार गई। हम भी शहर में आ गए। साध्वीजी का आतिथ्य प्राप्त हुआ। चतुर्विध धर्मसंघ की भव्य उपस्थिति में मर्यादा महोत्सव का कार्यक्रम अच्छे ढ़ंग से संपन्न हुआ।

मर्यादा महोत्सव के बाद शेषकाल में धींगबाजार, नौगांव, जखड़ाबांधा, काजीरंगा, जोरहाट, बरहोला, गोलाघाट पुन: जखड़ाबांधा से तेजपुर आदि क्षेत्रों में प्रवास किया। गुवाहाटी से तेजपुर तक 617 किलोमीटर की यात्रा हुई।

जब रात्रि में ताले में बंद रहे

असम के एक जंगल को पार कर रहे थे, जो गेंडों का जंगल कहलाता है। जखड़ाबांधा से काजीरंगा होकर जोरहाट जा रहे थे। 22 किलोमीटर का विहार कर जंगल के एक डाक बंगले में ठहरे। आस-पास साधारण-सी बस्ती थी। दिन में काफी भाई-बहिनें सेवा में आ गए। रात्रि में एक भाई और काशीद वहां थे। हमको बताया गया कि रात्रि में रूम को अंदर से बंद करके सोना, क्योंकि यहां कभी कभी नशेड़ी-दारूड़िये आ जाते हैं। प्रतिक्रमण, अर्हत् वंदना कर अंदर जाकर सो गए। लम्बे मार्ग की थकान से अच्छी नींद आ गई। लगभग चार बजे दरवाजा खोलने लगा, खुला नहीं। सुमतिमुनि को जगाया और जब दरवाजा खोलने में उनका प्रयत्न भी निष्फल रहा, तब अनुमान लगाया कि बाहर से किसी ने कुंठा लगा दिया है। पास के कमरे में सोये काशीद तथा भाई को आवाजें दीं। वे आए, देखा बाहर तो ताला लगा हुआ है। पास सोए संतरी को जगाया और पूछा–'यह ताला किसने लगाया?' उसने तत्परता से खोज-खबर की और चाबी लगाकर ताला खोला। उस समय नाना प्रकार के संकल्प-विकल्प तो आए, किंतु भय की स्थिति नहीं बनी। श्री गुरुदेव का वह वाक्य हमारे कानों में गुंजित हो रहा था–'सानन्द, सकुशल और परम प्रसन्नता से विहार करो।' इस प्रकार चार वर्षीय असम यात्रा में अनेक कड़वे-मीठे अनुभव हुए।

विक्रम संवत् 2050, सन् 1993 का चतुर्मास तेजपुर (असम) में हुआ। वहां प्रवास रहा श्वेताम्बर जैन मन्दिर में। तेजपुर में जैन परिवार अच्छी संख्या में प्रवासित हैं। आपसी मैत्री भाव अच्छा है। व्याख्यान में उनकी भी कुछ उपस्थिति रहती। गोचरी प्राय: उन घरों में भी जाते। चतुर्मास के तप, जप, स्वाध्याय आदि सारे कार्यक्रम अच्छे ढ़ंग से चले। मुनि सुमतिकुमारजी ने अठाई का तप किया। पर्युषण में उपस्थिति अच्छी रही। मन्दिर वालों की संवत्सरी अलग होने से कल्पसूत्र का वाचन हमसे करवाया।

जैन जीवन शैली का प्रसार

आचार्यश्री तुलसी द्वारा निर्मित 'जैन जीवन शैली' के नौ सूत्रों को तेजपुर के दिगम्बर, श्वेताम्बर परिवारों में प्रचारित किया गया। कार्यकर्ताओं के साथ मैं जाता, परिवारवालों के बीच एक-एक सूत्र की संक्षिप्त जानकारी देता एवं वैसा जीवन जीने की प्रेरणा देता। कुछ जिज्ञासाओं को समाहित भी करता। फिर सभा द्वारा उन नौ सूत्रों का पन्ना फॉरम में मढ़ाकर प्रत्येक परिवार को दिया जाता। इसकी प्रतिक्रिया अच्छी हुई। भावनाओं से लोगों की निकटता बढ़ी।

नूतन संदेश

आचार्यप्रवर का एक संदेश लेकर भाई ऋद्धकरणजी सुराणा (पड़िहारा) आए। मैंने पढ़ा, सुमतिमुनि को पढ़ाया। उसमें था–'तुम चाहो तो अमुक समण को मुनि दीक्षा दे सकते हो।' हमने चिन्तन किया और निवेदन करवाया–'आचार्यप्रवर! आपश्री ने महती कृपाकर दो संत से तीन संत होने का अवसर प्रदान किया, किन्तु हम संतों का मानस अब श्रीचरणों में आने का हो गया है। इसलिए इसकी अपेक्षा नहीं लगती। आपश्री का आशीर्वाद प्राप्त होता रहे, यही अन्त:करण की भावना है।'

अपरिग्रही को भय किसका?

तेजपुर का चतुर्मास संपन्न कर विश्वनाथचाराली से सिलापथार जा रहे थे। रास्ते में बरदोनोली गांव में एक असमी भाई के घर में ठहरे। घर का मालिक प्रिंसिपल था। रात्रि प्रतिक्रमण के बाद परिवार वाले उपस्थित हुए। हम उनसे जैन धर्म, मुनि चर्या, मानव जीवन, अणुव्रत आदि पर चर्चा कर रहे थे। इतने में असमी युवकों ने अचानक प्रवेश किया और हमारे सामने आकर बैठ गए। मैं कुछ बोलूं, उससे पहले ही उन्होंने पूछना प्रारंभ कर दिया। 'आप कौन हैं? यहां क्यों आये हैं? आपके भ्रमण का उद्देश्य क्या हैं?' आदि। संक्षेप में

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

मैंने उत्तर दिये। बीच में कई प्रतिप्रश्न भी किये। फिर वे बोले–'क्या आपको अल्फा, आतंकवादियों आदि का भय नहीं लगता है?' मैंने कहा–'भय का मुख्य कारण होता है–परिग्रह-रुपया, पैसा, सोना आदि। हम जैन मुनि परिग्रह रखते ही नहीं, फिर भय किसका? ऐसी स्थिति में अल्फा वाले हमको ले जाकर करेंगे भी क्या?' ऐसा सुनकर वे सब मुस्कुराने लगे। कुछ और चर्चा के बाद वे लोग चले गए। बाद में ज्ञात हुआ कि वे सभी अल्फा संगठन के सक्रिय कार्यकर्ता थे।

ब्रह्मपुत्र को पार किया

क्रमश: विहार करते-करते असम की बहुत बड़ी विशाल नदी ब्रह्मपुत्र को स्टीमर द्वारा पार कर डिब्रूगढ़ पहुंचे। जीवन में दूसरी बार नदी लगी। तत्पश्चात् तिनसुखिया में मर्यादा महोत्सव का कार्यक्रम हुआ। पुन: डिब्रूगढ़, शिवसागर, जोरहाट, गोलाघाट, डीमापुर, डिफु, लामड़िंग, लंका आदि क्षेत्रों में प्रवास किया। इधर चारित्रात्माओं का आना बहुत कम होता है, इसलिए सबमें उत्साह था। हमने अनुभव किया कि कमाई के लिए व्यक्ति को कहां-कहां विषम स्थानों में रहना पड़ता है।

जब लगातार 29 किलोमीटर चले

असम की धरा पर आज भी बड़े-बड़े गहरे जंगल हैं। जहां हाथियों के झुंड, सिंह, बाघ, गेंडे आदि खूंखार प्राणी निर्बाध और मस्ती से विचरण करते हैं। जब कभी सड़कों पर आ जाते हैं तो खतरा बन जाता है। इसलिए ऐसे जंगलों से गुजरने वाली सड़कों पर गेट की व्यवस्था चलती है। कारों, बसों आदि वाहनों का एक साथ आना और एक साथ जाना होता है। पुलिस की गाड़ियां सुरक्षा के लिए चक्कर लगाती रहती हैं।

हम भी जब लामड़िंग से लंका जा रहे थे, तब लगातार चलते हुए 29 किलोमीटर के घने जंगल को पार किया। बीच में कोई भी स्थान रात्रि विश्राम के लिए नहीं था। विहार से पूर्व पुलिस केन्द्र को सूचित करना जरूरी था। इसलिए श्रावक लोगों ने वहां जाकर पाद विहारी संतों के विहार की जानकारी दी। उन्होंने कहा–'आप संतों को आराम से ले जाइए। हम कार द्वारा निरीक्षण करते रहेंगे।' उत्साही युवकों का दल हमारे साथ था। हल्का आहार करके साढ़े ग्यारह बजे वर्षा रुकने के साथ चले और चलते रहे, चलते रहे। पानी पीने तथा विसर्जन करने के सिवाय कहीं नहीं ठहरे। सायं लगभग एक घंटा दिन रहते मंजिल पर पहुंचे। वहां लंका के श्रावक-श्राविकाएं हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे। एक असमी भाई के घर में हमने रात्रि-विश्राम किया। लगातार इतना लम्बा चलने का हमारा यह पहला अनुभव था। इस जंगल को पार करते समय हाथियों को दूर से देखा और उनकी चिंघाड़ें–सुनाई दीं। दूसरे दिन लंका पहुंचे। वहां कुछ दिन प्रवास किया। श्रावक समाज ने सेवा-दर्शन आदि का अच्छा लाभ लिया। लंका से होजाई होते हुए नौगांव पहुंचे। तेजपुर से नौगांव तक 954 किलोमीटर की यात्रा संपन्न हुई।

विक्रम संवत् 2051 (सन् 1994) का चातुर्मासिक प्रवेश नौगांव–हैबरगांव के तेरापंथ भवन में किया। यहां तेरापंथी परिवार काफी संख्या में प्रवास करते हैं, किन्तु दूर-दूर फैले हुए हैं, फिर भी चतुर्मास का लाभ सबने लिया। व्याख्यान की उपस्थिति दोनों समय अच्छी रहती। पचरंगी तप, अठाइयां आदि थोकड़े अच्छी संख्या में हुए। मुनि सुमतिकुमारजी ने सात की तपस्या की। पर्युषण पर्व में जप, पौषध, प्रतिक्रमण आदि में सभी ने उत्साह से भाग लिया। धींगबाजार आदि आस-पास के क्षेत्रों के श्रावकों ने भी चतुर्मास के विशेष कार्यक्रमों में भाग लिया। धींगबाजार की भजन-मंडली, जब भी विशेष प्रसंगों में आती तो गीतिका का संगान अवश्य करती और लोगों के दिलों को आकर्षित कर लेती। गणपतमलजी चोपड़ा (गंगाशहर) का नेतृत्व रहता। गीतिकाओं का निर्माण वे स्वयं करते। ज्ञानशाला के विद्यार्थियों के अध्ययन आदि में सुमतिमुनि ने अच्छा श्रम किया।

कार सेवा में साथ चलती

ऐसे तो रास्ते की सेवा सभी करते हैं, किंतु यहां के जिम्मेदार श्रावक श्री बजरंगलालजी नाहटा रास्ते की सेवा में अपनी कार साथ में रखते, स्वयं पैदल चलते। कार में खाने-पीने की व्यवस्था भी रखते। बच्चे आदि उत्साह के साथ पैदल चलते और जब थक जाते तो कार का उपयोग कर लेते। हमारा जब भी नौगांव जाना हुआ, उनकी कार की व्यवस्था वैसी ही रही। एक बार वे कार से सेवा में आ रहे थे। रास्ते में कार तीन पलटियां खा गई, परंतु किसी को भी खरोंच तक नहीं आई। चमत्कार जैसा लगा। सरस धार्मिक वातावरण में असम का हमारा चौथा चतुर्मास नौगांव में संपन्न हुआ।

असम प्रवास के कुछ उल्लेखनीय तथ्य

इन चार वर्षों में प्राय: बड़े गांवों तथा शहरों में सुमतिमुनि द्वारा जैन दर्शन, तेरापंथ की प्रारम्भिक जानकारी तथा बच्चों के संस्कार निर्माण की दृष्टि से अनेक नए-नए कार्यक्रम आयोजित हुए, उनमें नाना प्रकार की पहेलियां, क्वीज, प्रतियोगिताएं, विद्यार्थियों के शिविर, जैन विद्या परीक्षा आदि कार्यक्रमों में सभी ने उत्साह से भाग लिया। सहज ही ज्ञान-प्राप्ति के साथ वातावरण भक्ति-भावना प्रधान बन जाता।

❖ उस समय विदुषी साध्वी जयश्रीजी आदि साध्वियां भी असम में विचरण कर रही थीं। संघ की प्रभावना बढ़ाने वाली साध्वी थीं। उनका भी हमें आत्मीय, प्रमोद भावनात्मक सहयोग मिलता रहा।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

❖ असम यात्रा में आगे से आगे युवकों तथा प्रौढ़ श्रावकों का दल विहार यात्रा में साथ रहा।

❖ कई गावों एवं शहरों में तीन-चार बार भी जाना हुआ।

❖ दो संत होते हुए भी गुरुकृपा से निर्भयता तथा स्वस्थता के साथ विचरण हुआ।

❖ असम प्रवासी पूरा श्रावक समाज देव, गुरु, धर्म के प्रति आस्थाशील है।

❖ साधु-साध्वियों तथा समण वर्ग के आने-जाने से धर्म की भावना वर्धमान रहती है।

❖ व्यापारार्थ मारवाड़ी लोग काफी संख्या में प्रवास करते हैं। वहां प्राय: सभी प्रवासी लोगों को 'मारवाड़ी' शब्द से पुकारते हैं। उन वर्षों में असमी लोगों में, विशेषकर युवकों में ऐसी भावना भर दी गई कि ये मारवाड़ी लोग हमारा आर्थिक शोषण कर रहे हैं। धोती, लोटा लेकर आए और आज इतने संपन्न बन गए कि हम उनके सामने कुछ नहीं रहे। इस भावना को लेकर वहां वर्षों से 'अल्फा' नामक एक संगठन द्वारा विरोधी आंदोलन चलाया जा रहा है। वे लोगों का अपहरण कर फिरौती आदि भी मांगते हैं।इस कारण वहां निश्चिन्तता का जीवन नहीं रहा। भय का वातावरण बना रहता है। बहुत सारे व्यापारी लोगों को अन्य प्रान्तों में अपना व्यवसाय शुरू करना पड़ा। आचार्यश्री तुलसी के निर्देशानुसार असम जाने वाले हम साधु-साध्वियां तथा समणियां भी श्रावक समाज को प्रेरणा देते हैं कि आप बाह्य दिखावा-प्रदर्शन, आडम्बर एवं शादी आदि प्रंसगों में बड़े-बड़े भोज करना बंद करें, क्योंकि ये सारे आतंकवाद के कारण बनते हैं। यदि शांति का जीवन जीना है तो संयम का जीवन जीने का अभ्यास करें। असम की यात्रा में हमने जो देखा-सुना, उसके आधार पर यहां उल्लेख किया है।

असम प्रांत का प्रारम्भ हुआ कालडोबा से और अंत हुआ तिनसुखिया में एवं पुन: कालडोबा तक लगभग 2960 किलोमीटर की यात्रा हुई।

विदेश यात्रा

पुन: बह्मपुत्र नदी को पार किया। असम के विभिन्न क्षेत्रों को पार कर, असम की सीमा को अतिक्रांत कर पश्चिम बंगाल में प्रवेश किया। वहां से बक्सीहाट, तूफानगंज, कूचविहार से दिनहट्टा मर्यादा महोत्सव संपन्न कर अलीपुरद्वार से जयगांव-फुसलिंग, भूटान पहुंचे। एक बाजार (भूटान) विदेश में। दूसरा बाजार भारत में। हमने दोनों बाजारों में कुछ दिन प्रवास किया। वहां से फालाकाटा, माथाभांगा, चंगडाबांधा, सिलीगुडी, इस्लामपुर (बिहार) किशनगंज, हनुमाननगर (नेपाल), फारविसगंज सहित श्रद्धा के 41 क्षेत्रों में विचरण करते हुए विराटनगर (नेपाल) पहुंचे। नौगांव से विराटनगर तक 963 किलोमीटर की यात्रा संपन्न हुई।

विक्रम संवत् 2052 (सन् 1995) का चातुर्मासिक प्रवेश विराटनगर (नेपाल) के तेरापंथ भवन में किया। यहां गोलछा, दूगड़, नौलखा आदि तेरापंथी परिवार काफी संख्या में प्रवास करते हैं। व्याख्यान आदि कार्यक्रमों में उत्साह के साथ भाग लेते हैं। गुरुकृपा व मुनि सुमतिकुमारजी की श्रमशीलता, मिलनसारिता व व्यावहारिकता के कारण विदेश की धरती का यह चातुर्मासिक प्रवास अत्यन्त सफल रहा। मंगल भावना का कार्यक्रम भी अच्छी उपस्थिति में हुआ। इसके साथ ही पूर्वांचल की यात्रा में विराटनगर (नेपाल) का हमारा छठा चतुर्मास सानन्द संपन्न हो गया।

गुरुदर्शन का आदेश आने के बाद मुनि सुमतिकुमारजी गुरुदर्शन यात्रा का मार्ग निश्चित करने में जुट गए। उन्होंने अपनी सूझ-बूझ तथा श्रावकों के सहयोग से इस प्रकार रूट तय किया कि 8 नवम्बर, 1995, विक्रम संवत् 2052, मार्गशीर्ष कृष्णा एकम को यात्रा प्रारम्भ की और 7 जनवरी, 1996, विक्रम संवत् 2052, माघ कृष्णा द्वितीया, रविवार को 1571 किलोमीटर की यात्रा संपन्न कर हम लाडनूं, जैन विश्व भारती के भिक्षु विहार में आचार्यप्रवर श्रीतुलसी अर्थात् गणाधिपति गुरुदेव श्रीतुलसी तथा आचार्य महाप्रज्ञजी के श्रीचरणों में नतमस्तक हो गए। पूज्यवरों द्वारा अपना वरदहस्त हमारे सिर पर रखने से हम धन्य-धन्य हो गए। हमारी यात्रा सफल हो गई। गुरुकुलवास में पहुंचने के साथ ही हमारी छह वर्षीय पूर्वोत्तरांचल की यात्रा सकुशल संपन्न हो गई।

विराटनगर से लाडनूं तक 0460 किलोमीटर की यह द्रुतगामी यात्रा हमने अपने मुनि जीवन में पहली बार ही की। इस यात्रा में एक दिन में कम से कम दो किलोमीटर और ज्यादा से ज्यादा 41 किलोमीटर का विहार किया।

प्रसन्नता की अभिव्यक्ति

18 जनवरी, 1996 की विज्ञप्ति के आधार पर–मुनिश्री ताराचन्दजी ने गुरुदर्शन कर अपनी प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा–'यहां से लगभग सोलह सौ किलोमीटर की दूरी पर स्थित विराटनगर (नेपाल) से 8 नवम्बर को हमने विहार किया और 7 जनवरी को यहां पहुंच गए। साठ दिनों में हमने यह लम्बी दूरी तय की। इसमें पूज्य गुरुदेव श्रीतुलसी तथा आचार्यश्री महाप्रज्ञजी की शक्ति काम कर रही थी। प्रतिदिन हम पच्चीस किलोमीटर के अनुपात से चले। न कभी थकान का अनुभव किया और न कभी खिन्नता का। गुरुदेव की कृपा से दोनों संत छह चतुर्मास संपन्न कर गुरु सन्निधि में पहुंच गए।'

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

परमाराध्य पूज्य गुरुदेव ने अपने मंगल प्रवचन में कहा–'यद्यपि आज सोमवार है, प्रेक्षाध्यान पर प्रवचन होना था। पर हमने यह निर्णय लिया कि आज आगन्तुक संतों को सुनना चाहिए। मुनि ताराचन्दजी छह साल की यात्रा करके आये हैं और अधिकतर समय में ये दो संत ही रहे हैं। फिर भी वही प्रसन्नता, वही समाधि, कहीं किंचित् भी अन्तर नहीं आया, बल्कि हमने कई प्रकार की चेष्टाएं कीं, पर उनका एक ही उत्तर मिलता–'गुरुदेव! चिंता न करें। हम परम समाधि में हैं। दो संतों से ही आपके दर्शन करना चाहते हैं।' मुझे लगता है कि मुनि ताराचन्दजी में तीन शक्तियां हैं–संकल्प शक्ति, गहरा मनोबल और संघीय भक्ति। मुनि ताराचन्दजी जहां भी गए हैं, ये तीनों शक्तियां मुखर हुई हैं। इनकी संघनिष्ठा और साधना के योग से संघ की प्रभावना बढ़ी है। सचमुच ऐसे संतों पर सात्त्विक गर्व होता है। मैं महाप्रज्ञजी से कहना चाहता हूं कि ऐसे संतों का विशिष्ट सम्मान करना चाहिए।'

'शासन गौरव' का अलंकरण

श्रद्धास्पद आचार्यप्रवर ने कहा–'गुरुदेव ने एक मुनि के लिए जो वात्सल्य बरसाया है, जो अहोभाव प्रकट किया है और जिस प्रकार से मुनि ताराचन्दजी ने साधना, संघीय सेवा तथा समर्पण को जीया है, वह वास्तव में ही उल्लेखनीय है। ऐसे मुनियों को अलंकृत किया जाना चाहिए। मैं आज मुनि ताराचन्दजी को 'शासन गौरव' अलंकरण से अलंकृत करता हूं।'

मुनि ताराचन्दजी पूज्य गुरुदेव व आचार्यवर का अमित अनुग्रह प्राप्त कर गद्‌गद हो गए। उन्होंने कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए कहा–'मैं अपने आप में कुछ नहीं हूं, जो कुछ हूं, वह गुरुकृपा है। आपके विश्वास को सफल, सार्थक कर सकूं, वह शक्ति आप दोनों प्रदान करावें।'

मुनि मधुकरजी ने संतों की ओर से तथा साध्वी जिनप्रभाजी ने साध्वियों की ओर से मुनिश्री ताराचन्द के प्रति अहोभाव प्रकट किया।

8 जनवरी, 1996, जैन विश्व भारती, सुधर्मा सभा में प्रात: प्रवचन के समय 'शासन गौरव' अलंकरण प्रदान किया तथा विधिवत् 'शासन गौरव' अलंकरण पत्र प्रदान किया 26 जनवरी, मर्यादा महोत्सव के पावन अवसर पर। वह पत्र इस प्रकार है:–

अर्हम्

मुनि ताराचन्द! तुमने अपनी सहज साधना, आन्तरिक समर्पण वृत्ति एवं संघनिष्ठा से धर्मशासन की उल्लेखनीय गरिमा बढ़ाई है। गुरुदेव के इंगित के अनुरूप इसका मूल्यांकन करते हुए 132 वें मर्यादा महोत्सव के अवसर पर मैं तुम्हें 'शासन गौरव' अलंकरण से अलंकृत करता हूं।

26 जनवरी, 1996, जैन विश्व भारती, लाडनूं। **आचार्य महाप्रज्ञ**

भक्ति के उत्कर्ष से रसायन बदलते हैं

गुरुदर्शन की प्रसन्नता व्यक्त करते हुए आगे मैंने कहा–'गुरुदेव! यात्रा के प्रारम्भ में एक बार तो मुझे लगा कि इतनी लम्बी यात्रा महोत्सव से पूर्व कैसे संपन्न होगी? मेरे सहयोगी मुनि सुमतिकुमारजी ने यात्रा को दस खंडों में विभक्त कर मुझे बताया कि दसवें खंड की संपूर्ति जैन विश्व भारती, लाडनूं में होने की संभावना है। इस योजना के आधार पर चले। उसी का यह परिणाम है कि महोत्सव से पूर्व ही गुरुचरणों में पहुंच गए।

जयपुर पहुंचने से दो दिन पूर्व सुबह उठे। जप, ध्यान आदि किया। गुरु वंदना से पूर्व मैंने सुमतिमुनि से कहा–'आश्चर्य होता है कि इतना लम्बा चलकर आते हैं, रात्रि विश्राम कर जब उठते हैं तो तरोताजा अनुभव करते हैं और आगे की मंजिल तय कर लेते हैं।' सुमतिमुनि ने कहा–'इसमें हमारी गुरुदर्शन की जो तीव्र भावना है, वह काम कर रही है। भक्ति के उत्कर्ष से शरीर के रसायन बदलते हैं।'

सुमति ही काम कर रही है

प्रतिक्रमण, प्रतिलेखन कर सूर्योदय से 10 मिनट पूर्व ही विहार कर मैन रोड़ पर आ गए। एक-दो किलोमीटर चले होंगे, चलते-चलते मेरा पैर मुड़ गया–मोच पड़ गई। कुछ देर रुकना पड़ा। सुमतिमुनि ने पैर की हल्की मालिश कर पट्टी बांध दी और चल पड़े। अगले पड़ाव पर पहुंचने पर देखा कि पैर सूजकर भारी हो गया है, पर प्रेक्षा के प्रयोग एवं प्राथमिक उपचार करते हुए चलते रहे, कहीं रुके नहीं। उस दिन भी 30 किलोमीटर का विहार हुआ। मुझे स्वयं आश्चर्य हुआ कि मैं इतना कैसे चला? गणाधिपति गुरुदेव ने (चुटकी लेते हुए) कहा–'सुमतिमुनि ने चला दिया।' 'हां गुरुदेव! यह सही है। सुमतिमुनि इस प्रकार की योजना नहीं बनाते तो मर्यादा महोत्सव से इतना पूर्व पहुंचना संभव नहीं था।' गुरुदेव ने मुस्कुराकर टिप्पणी की 'हमारी सुमति ही तो काम कर रही है।' सारा वातावरण खिल उठा।

वात्सल्य की अमृत वर्षा

प्रवचन-समाप्ति के बाद आहार के समय पूज्यश्री गुरुदेव एवं आचार्यश्री ने हम दोनों संतों को अपने करकमलों से मिष्ठान्न का ग्रास दिया और श्रीगुरुदेव ने मिठाई से भरे दो पात्र देते हुए फरमाया–'जाओ, सब संतों को यह मिठाई बांटो।' मैं गुरुदेव के वात्सल्य

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

की अमृत वर्षा से अभिस्नात था। एक संत को वह मिठाई की झोली देकर मेरे साथ कर दिया। गुरुदेवश्री के आदेशानुसार मैंने प्रत्येक वर्ग–साझ में जाकर सब संतों को गुरु प्रसादी वितरित की और पुनः जब श्रीचरणों में उपस्थित हुआ, तब पूज्यश्री ने अत्यन्त प्रसन्न मुद्रा में पूछा–'क्यों मिष्ठान्न कम तो नहीं हुआ?' इस सकल प्रसंग में मेरी क्या अपूर्व स्थिति बनी, व्यक्त नहीं की जा सकती। इस प्रकार गुरु की शुभ दृष्टि से जीवन में एक आल्हादकारी सृष्टि का निर्माण हो जाता है।

समर्पण महाप्रज्ञजी को करो

जब हम पूज्यवरों के आभामण्डल में पहुंचे, विधिवत् वंदना एवं सुखसाता पूछी। फिर मैं श्रीगुरुदेव के सामने अभिमुख होकर समर्पण की भाषा बोलने लगा, तब तत्काल उन्होंने कहा–'आचार्य महाप्रज्ञजी हैं, मैं नहीं हूं। उनको समर्पण करो।' मैंने निवेदन किया–'आप दोनों ही पूज्यवरों को समर्पण कर देता हूं।' फिर मैंने समर्पण पाठ का उच्चारण कर दिया। दोनों ही महापुरूष मुस्कुराते रहे।

जैन विश्व भारती से जयपुर

आचार्यश्री महाप्रज्ञ ने मर्यादा महोत्सव पर ही हमारा चतुर्मास जयपुर के सी-स्कीम में घोषित कर दिया था। हमारे निवेदन पर हमें अक्षय तृतीया तक गुरुकुलवास में रखवाने की कृपा की। इस अवसर पर गुरुदेव श्रीतुलसी द्वारा नवनिर्मित दो कृतियां–'श्रावक संबोध' और 'व्यवहार बोध' का पूज्यश्री के मुखारविंद से सुनने का हमें मौका मिल गया। पूज्यवरों का आशीर्वाद लेकर चले और बोरावड़, जोबनेर में कुछ दिन प्रवास कर जयपुर के उपनगरों में पहुंच गए।

विक्रम संवत् 2053 (सन् 1996) का चातुर्मासिक प्रवेश जयपुर के सी-स्कीम, ग्रीन हाउस में किया। हम दो संत तो थे ही, तीसरे संत आए मुनि रजनीशकुमारजी (बायतू)। जयपुर शहर में चतुर्मास था–साध्वीश्री जयश्रीजी आदि साध्वियों का। यह भी एक संयोग की बात कि साध्वीश्री भी असम आदि प्रांतों की यात्रा करके आई और हम भी उधर की यात्रा करके आए। दोनों का फिर पास-पास में चतुर्मास हो गया।

पुलिसकर्मियों में ध्यान शिविर

आचार्यश्री के निर्देशानुसार जयपुर के एक पुलिस कॉम्पलेक्स में संतों के सान्निध्य में तथा समणजी के निर्देशन में एक पंचदिवसीय ध्यान शिविर आयोजित हुआ। शिविर की रूपरेखा के आधार पर आसन, प्राणायाम, ध्यान, प्रवचन आदि के सारे कार्यक्रम व्यवस्थित चले। पुलिसकर्मी उत्साह से भाग लेते। मुनि सुमतिकुमारजी, मुनि रजनीशकुमारजी एवं दोनों समणजी के श्रम से शिविर सफल रहा। पुलिस वर्ग में इसकी अच्छी प्रतिक्रिया हुई तथा इस प्रकार के और भी शिविर लगाने की मांग आई। टेलीवीजन में इस शिविर का प्रसारण हुआ।

पूज्यवरों की सन्निधि में

चतुर्मास के बाद विहार किया और लाडनूं, जैन विश्व भारती में पूज्यश्री गुरुदेव एवं आचार्यश्री के दर्शन हो गए। कुछ दिन गुरु-सान्निध्य में रहने का मौका मिला। फिर श्रीगुरुदेव तथा साध्वीप्रमुखाजी लाडनूं, जैन विश्व भारती में ही विराजे और आचार्यश्री महाप्रज्ञजी का मर्यादा महोत्सव के लिए चाड़वास की ओर विहार हो गया। हमारा सिंघाड़ा आचार्यश्री के साथ में था। कुछ दिन सुजानगढ़ विराजना हुआ। वहां पर प्रवचन से पूर्व का उपदेश देने का कार्य आचार्यश्री ने मुझे सौंपा, जो नोखा मंडी मर्यादा महोत्सव तक चला।

विशेष कृपा दृष्टि

आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने गुरुदेव श्रीतुलसी को पत्र लिखा और हम पांच संतों को–मुझे, मुनि सुमतिकुमारजी, मुनि कुमारश्रमणजी, मुनि रजनीशकुमारजी, मुनि योगेशकुमारजी को पत्र देकर लाडनूं भेजा। यह उनकी हम संतों पर विशेष कृपा दृष्टि थी। गुरुदेव के दर्शनों का अकल्पित अवसर मिल गया। गुरुदेव ने हम संतों के सिर पर अपना वरदहस्त रखा। हम धन्य-धन्य हो गए। उसी समय वह प्रदत्त पत्र उनके करकमलों में अर्पित किया। दो दिन गुरु सन्निधि में रहे। विहार के समय गुरुदेव ने भी अपने हाथों लिखा पत्र हमें प्रदान करते हुए फरमाया–'यह पत्र महाप्रज्ञजी को देना और सबको हमारी ओर से सुखपृच्छा कहना।' हम संतों ने बद्धांजलिपूर्वक वंदना कर गुरुचरणों में अपना सिर रखा और गुरुदेवश्री ने आशीर्वादात्मक अपना हस्त हमारे सिर पर रखा। हम विहार की आज्ञा लेकर चले कि गुरुदेव ने आवाज देकर कहा–'ताराचन्द! महाप्रज्ञजी को कहना कि मर्यादा महोत्सव पर उपस्थित होने वाले साधु-साध्वियों को सात ध्रुवयोगों की विशेष प्रेरणा दें। तुम लोग विलम्ब मत करना। प्रवचन के समय पहुंच जाना।' मैंने बद्धांजलिपूर्वक नत होकर तहत् कहा। हम सुजानगढ़ की ओर चल पड़े और प्रवचन के मध्य पहुंच गए। आचार्यश्री को विधिवत् वंदना कर गुरुदेव का पत्र उनके करकमलों में प्रस्तुत कर दिया। उन्होंने वह पत्र मुझे देते हुए कहा–'इसको पढ़कर सुनाओ।' मैंने पत्र का वाचन किया और जो मौखिक संवाद गुरुदेव ने कहा था, वह भी निवेदित किया। इसके साथ यह भी निवेदन किया कि आपश्री ने हमें यह अनुपम अवसर प्रदान किया, ऐसी कृपा दृष्टि सदा बनी रहे। आचार्यश्री ने अपने प्रवचन में विस्तार से गुरुदेव के प्रति अपने श्रद्धासिक्त विचार प्रस्तुत किए।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

आचार्यश्री का स्वतंत्र मर्यादा महोत्सव

आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने अपने धर्म परिवार के साथ सुजानगढ़ से विहार किया और छापर होकर मर्यादा महोत्सव के लिए चाड़वास पधार गए। साधु-साध्वियां काफी संख्या में उपस्थित हो गए थे। महोत्सव पर होने वाले सारणा-वारणा आदि के सारे कार्यक्रम प्रारंभ हो गए। स्वतंत्र रूप में आचार्यश्री ने पहली बार अगले वर्ष के चतुर्मास आदि की घोषणाएं कीं। बहुत सरस वातावरण में महोत्सव के सारे कार्यक्रम सुसंपन्न हुए।

अनेक सिंघाड़ों के साथ हमारे सिंघाड़ें को भी आचार्यश्री ने अपने साथ रखा। मर्यादा महोत्सव के बाद आचार्यश्री की स्वतंत्र यात्रा प्रारम्भ हुई, जो बीदासर, श्रीडूंगरगढ़, मोमासर, कालू, लूणकरणसर होकर बीकानेर में संपन्न हुई। उधर लाडनूं, जैन विश्व भारती से विहार कर गणाधिपति गुरुदेव श्रीतुलसी भी बीकानेर पधार गए। वहां दोनों पूज्यवरों का भव्य मिलन हुआ। लंबे जुलूस के साथ गंगाशहर के तेरापंथ भवन में प्रवेश हुआ।

दो शिविरों की जिम्मेदारी

पूज्यवरों के पधारने के बाद अनेक कार्यक्रम शुरू हो गए। उनमें प्रेक्षाध्यान के शिविर भी आयोजित हुए। जिसकी जिम्मेदारी आचार्यश्री ने मुझे सौंपी। एक शिविर हुआ तोलाराम बाफणा विद्यालय में जिसके व्यवस्थापक थे–स्वामी धर्मानन्दजी तथा दूसरा शिविर हुआ पंचायत भवन में; इस शिविर के समय में पूज्य गुरुदेव नहीं रहे। इन दस दिनों के शिविरों में हम संतों का प्रवास भी वहीं रहा। ध्यान शिविर की क्लास मैं भी लेता और सुमतिमुनि, रजनीशमुनि भी लेते। रात्रि में आचार्यश्री स्वयं तेरापंथ भवन में ही शिविरार्थियों को संबोध प्रदान करते।

एक तेजस्वी सूर्य अदृश्य हो गया

दोनों पूज्यवरों के सान्निध्य में सारे कार्यक्रम अच्छे ढ़ंग से संचालित हो रहे थे। गंगाशहर चोखले का पूरा श्रावक समाज लाभान्वित हो रहा था, किंतु अचानक 23 जून, 1997, विक्रम संवत् 2054, आषाढ़ कृष्णा तृतीया को गणाधिपति गुरुदेव श्रीतुलसी का महाप्रयाण हो गया।' अध्यात्म जगत का एक तेजस्वी महासूर्य अदृश्य हो गया। एक सप्ताह तक उनके महान अवदानों की स्मृति का क्रम चला। अब आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के स्वतंत्र नेतृत्व में सारे कार्यक्रम संचालित होने लगे।

विक्रम संवत् 2054 (सन् 1997) का चतुर्मास गंगाशहर में आचार्यश्री के साथ हुआ। चाड़वास मर्यादा महोत्सव से नोखा मंडी महोत्सव तक हमारा गुरुकुलवास में रहना हो गया। नोखा मंडी मर्यादा महोत्सव पर हमारा चतुर्मास धुलिया (महाराष्ट्र) घोषित हुआ। आचार्यश्री ने मुनि रजनीशकुमारजी को अपने साथ रखा और हमारे साथ भेजा मुनि देवार्यकुमारजी (भुसावल-महाराष्ट्र) को।

खानदेश (महाराष्ट्र) की यात्रा

आचार्यश्री का आशीर्वाद लेकर धुलिया-महाराष्ट्र की ओर प्रस्थान किया। नोखा मंडी से नागौर, सिरियारी, संबोधि उपवन, राजनगर, आकोला, निम्बाहेड़ा, जावद (म. प्र.), नीमच, मंदसौर से रतलाम पहुंचे। वहां धुलिया के श्रावक रास्ते की सेवा में आए। वदनावर, मनावर, बड़वानी, वाबनगजा, जहां आदिनाथ भगवान की 84 फुट की विशाल मूर्ति है, सेन्धवा, चौपड़ा, भुसावल आदि क्षेत्रों में विचरण हुआ। भुसावल मुनि देवार्यकुमारजी की जन्मभूमि है। दीक्षा के बाद प्रथम बार जन्मभूमि में आना हुआ है। इससे गांववालों एवं विशेषकर परिवारवालों का प्रसन्न होना सहज है। खानदेश के इस दो वर्षीय प्रवास में पिताश्री चम्पालालजी कोटेचा एवं मातुश्री शोभादेवी आदि पारिवारिकजनों को सेवा-दर्शन का अच्छा अवसर मिला।

उफनते नाले को पार किया

जलगांव में आचार्य तुलसी की प्रथम पुण्यतिथि मनाई। वहां से हमने धरणगांव के लिए विहार किया। रास्ते के एक गांव में रात्रि प्रवास किया। रात को चारों ओर भयंकर मूसलाधार बारिश हुई। विहार के दौरान हमारे रास्ते में एक नाला पड़ता था। हमें सूचना मिली कि रास्ता साफ है। इस सूचना के आधार पर हमने विहार कर दिया। क्रमश: विहार करते हुए जब उस नाले तक पहुंचे, तब वहां का दृश्य देखकर दंग रह गए। रात्रीकालीन हुई भयंकर बारिश के कारण नाले ने अत्यंत विकराल, रौद्र रूप धारण कर लिया था। नाले में बाढ़ आ चुकी थी व पानी रपट के उपर से बह रहा था। हमारे सामने एक समस्या खड़ी हो गई कि जाएं तो कहां जाएं? गांव बहुत ही पीछे छूट चुका था और आगे मार्ग अवरुद्ध था। कुछ समय तक इंतजार भी किया कि पानी का वेग कम हो जाए, पर बारिश के आने की संभावना को देखकर हमने नाला पार करने का निर्णय लिया। यद्यपि यह निर्णय दुस्साहसपूर्ण था, किन्तु और कोई विकल्प भी नहीं था। हम तीनों संतों ने सागारी संथारे का प्रत्याख्यान किया। स्वामीजी की व गुरुदेव की शरण लेकर चल पड़े। धीरे-धीरे सकुशल नाले को पार किया। उस पार जाने के बाद चतुर्विंशतिस्तव व कायोत्सर्ग किया।

अमलनेर में

खानदेश की इसी यात्रा में विचरण करते हुए हम अमलनेर पहुंचे। वहां कुछ दिनों का प्रवास किया। इस प्रवास के दौरान वहां के किशोर भरत लोढ़ा की ओर मेरा ध्यान आकृष्ट हुआ। मुझे उसके व्यवहार में वैराग्य की झलक दिखाई दी। मैंने संतों से इस संदर्भ में

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

बातचीत की। धुलिया में उसका ननिहाल होने से उसका दर्शन-सेवा का क्रम बराबर चला। देवार्यमुनि ने विशेष प्रेरणा दी। वह विरक्त हुआ। मैंने उसके माता-पिता से बात की। संघ को पुत्र-दान करने के लिए प्रेरित किया। वे सहर्ष तैयार हो गए। आज वह किशोर मुनि भरतकुमार के रूप में संघ में साधनारत है।

धुलिया में

विक्रम संवत् 2055, सन् 1998 का चातुर्मासिक प्रवेश धुलिया (महाराष्ट्र) में किया। चतुर्मास के बाद कुमारनगर (जहां सिन्धी परिवार रहते हैं) के मुख्य श्रद्धानिष्ठ श्रावक श्री नानकराम तनेजा और उनकी पत्नी 'श्रद्धा की प्रतिमूर्ति' श्रीमती शांतादेवी के बंगले में रहना हुआ। इन दोनों की संतों के प्रति भक्ति-भावना विशेष उल्लेखनीय है। खानदेश में कुछ क्षेत्र ऐसे हैं, जहां पर स्थानीय पाटिल जाति के मराठी परिवार कर्मणा जैन बने हुए हैं। उनको संभालना आवश्यक था। खानदेश की इस यात्रा के दरम्यान हमने विश्व प्रसिद्ध अजंता की गुफाएं देखीं। पुराने समय में विज्ञान कितना समृद्ध रहा होगा? इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है। धुलिया से शहादा तक 1345 किलोमीटर यात्रा संपन्न हुई।

विक्रम संवत् 2056, सन् 1999 का चातुर्मासिक प्रवेश शहादा (महाराष्ट्र) के तेरापंथ भवन में किया। शासनसेवी श्रावक श्री जमनालालजी गेलड़ा की अत्यधिक भावना थी कि गुरुदेव कृपाकर संतों का चतुर्मास करवाएं तो मुझे इस वृद्ध अवस्था में विशेष सेवा-दर्शन आदि का लाभ मिल जाए। जब शहादा का चतुर्मास घोषित हुआ तो अपने पोते को भेजकर अपनी बहुत-बहुत प्रसन्नता व्यक्त की। उनको भी भावना के अनुरूप अच्छा लाभ मिल गया। व्याख्यान तीनों समय होता। उपवास की बारियां, पचरंगी तप के साथ अनेक थोकड़े हुए। पर्युषण की उपासना में पास के क्षेत्रों के श्रावकों ने भी लाभ लिया। प्रेक्षाध्यान का शिविर भी संतों के सान्निध्य में तथा प्रेक्षा प्रशिक्षक श्री माणकचन्दजी सांखला के निर्देशन में हुआ।

जागृत विवेका साध्वी

इस बार शहादा में खरतरगच्छ की विदुषी साध्वी मणिप्रभाजी आदि साध्वियों का भी चतुर्मास था। जब हमने चातुर्मासिक प्रवेश किया, तब जुलूस में साध्वियों ने अगवानी की। कार्यक्रम एक सार्वजनिक हॉल में था। वहां मंच पर एक पट्ट संतों के लिए और एक पट्ट साध्वियों के लिए था। साध्वियों ने देखा–उनके बैठने वाला पट्ट संतों के पट्ट से चार अंगुल ऊंचा है। तत्काल कार्यकर्ताओं से कहा–'हम इस पर नहीं बैठेंगी।' कारण बताने से कार्यकर्ताओं ने तत्काल परिवर्तन कर दिया। मैंने कहा–'साध्वीजी! इतने से ऊंचे-नीचे में क्या फर्क पड़ता है?' 'नहीं मुनि महाराज! हम संतों से ऊंचे पट्ट पर बैठें, यह हमारी आशातना होती है।' इतना उनका जागृत विवेक था।

चतुर्मास में 8-10 कार्यक्रम सामूहिक हुए। संवत्सरी की सामूहिक क्षमायाचना की विशाल उपस्थिति में साध्वीजी ने तेरापंथ, आचार्य तुलसी, आचार्य महाप्रज्ञजी के बारे में खुलकर अपनी प्रमोद भावना व्यक्त की। चतुर्मास के बाद हमारे विहार में कुछ दूरी तक साथ चलकर साध्वियों ने अपनी विनम्रता का परिचय दिया। साध्वीश्री मणिप्रभाजी ने कई बार कहा–'चतुर्मास के बाद हमारे यहां साध्वियों की दीक्षा होने वाली है, तब तक आप यहां विराजे तो हमें बहुत प्रसन्नता होगी।' हमने कहा–'आप की भावना अच्छी है, किंतु हमारे लिए गुरुदर्शन का आदेश आ गया। अब हमारा लक्ष्य शीघ्र गुरुदर्शन का बन गया है, इसलिए रुकना संभव नहीं लगता। आप साध्वियों की प्रमोद भावना का हम अन्त:करण से स्वागत करते हैं।'

भयंकर जंगल को पार किया

शहादा के कई परिवारों ने अपनी-अपनी सुविधानुसार रास्ते की सेवा की। उनमें पुष्पलालजी गेलड़ा, उनकी पत्नी श्रीमती चन्द्रकलाजी तथा दोंड़ायचा से समागत पुष्पाबाई ने खेतिया, बड़वानी से कुक्षी–टांडा के भयंकर जंगल को पार करवा कर मोहनखेड़ा तक लम्बी सेवा की।

द्रुतगति में अवरोध

विक्रम संवत् 2056 का मर्यादा महोत्सव तारानगर (चूरु) में था। हमारा लक्ष्य था कि महोत्सव से पहले गुरु-सन्निधि में पहुंच जाएं। हम बहुत ही द्रुतगति से चल रहे थे। इस दौरान मेवाड़ स्थित लाछुड़ा पहुंचे और वहां विराजित मुनिश्री बालचन्दजी आदि संतों से मिलन हुआ। दूसरे दिन 17 किलोमीटर का विहार कर आसींद पहुंच गए। सायं खबर मिली कि मुनि मनसुखजी गिर गए और कुल्हे में फ्रेक्चर हो गया। उस सिंघाड़े में सेवा करने वाले वे ही संत थे, जो कि परतंत्र हो गए। आस-पास संतों का कोई सिंघाड़ा नहीं था। अत: हमने तत्काल निर्णय लिया, हमें लाछुड़ा जाकर संतों को संभालना है। श्रावकों ने आचार्यश्री को सारा घटनाक्रम निवेदित किया। वहां से संवाद मिला–'मुनि ताराचन्दजी ने समय पर उचित निर्णय लेकर अच्छी सूझ-बूझ का परिचय दिया। अब उनकी दूसरी व्यवस्था न हो जाए, तब तक वहीं संतों की सेवा करनी है।' लगभग दो-ढ़ाई महीने के बाद आचार्यश्री के आदेशानुसार मुनि संगीतकुमारजी का सिंघाड़ा उदयपुर से आया और उन्होंने सेवा का कार्य संभाला, तब हमने गुरुदर्शनार्थ विहार किया। क्रमश: मंजिलों को पार करते हुए रतनगढ़ पहुंचे।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

सावधानी हटी, दुर्घटना घटी

रतनगढ़ से सायं विहार कर देराजसर गांव के एक जाट के मकान में ठहरे। रात्रि में एक बजे के करीब मैं शरीर-चिंता के लिए बाहर गया। मुख्य दरवाजे के सामने एक लम्बी चौकी थी। नीचे उतरने की सीढ़ियां मुख्य दरवाजे से कुछ आगे थीं। मुझे ध्यान नहीं रहा, सीधा ही चला और तत्काल करीब 4-5 फुट नीचे गिर गया। गहरी धूल-रेत होने से चोट तो कहीं नहीं लगी, किंतु पूरा शरीर खल-खला गया। मैं अवाक् रह गया, धीरे-धीरे शरीर, रजोहरण, पात्र को संभाला, सब ठीक था, किंतु शरीर का कण-कण इतना शिथिल एवं बेहाल हो गया कि मन में आया–'विहार कैसे होगा?' किंतु सूर्योदय होते ही विहार किया। गमनयोग का क्रम गतिमान रखा। 16 किलोमीटर चलकर अगले गांव पहुंचे। दिनभर शरीरप्रेक्षा का प्रयोग चलता रहा। रात्रि में ठीक महसूस होने पर मैंने गत रात्रिकालीन सारी घटना संतों को बताई। संतों का मीठा उपालंभ भी मिला, किंतु इन वर्षों में मेरे एक संकल्प चल रहा था कि साधारण शारीरिक बीमारी आदि की ऐसी घटना हो जाए तो यथासंभव बताना नहीं। अपने ढ़ंग से अपना उपचार करना। यदि सहन करने की स्थिति न रहे, तब संतों को बताकर अन्य उपचार करवाना।

रामगढ़ में आचार्यश्री के दर्शन हो गए। लाछूड़ा का सारा घटनाक्रम निवेदित किया। खानदेश की दो वर्ष की यात्रा का लिखित विवरण प्रस्तुत किया। लगभग तीन महीने आचार्यश्री की सन्निधि में रहने का अवसर मिल गया।

संदेशवाहक बनकर गए

सन् 2000 के तारानगर मर्यादा महोत्सव के बाद युवाचार्य श्री महाश्रमणजी गंगानगर चोखले की स्वतंत्र सफल यात्रा संपन्न कर जब बीदासर में आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के दर्शनार्थ पधार रहे थे, उससे एक दिन पूर्व आचार्यश्री ने हम पांच संतों को अपना संदेश देकर युवाचार्यश्री की अगवानी के लिए भेजा। यह हम संतों पर उनकी विशेष कृपा थी। युवाचार्यश्री के दर्शन किए और सब संतों ने अपनी प्रसन्नता की अभिव्यक्ति दी। प्रवचन में मैंने संदेश पढ़कर सुनाया और यह भी कहा कि मानों इस संदेश के माध्यम से आचार्यश्री स्वयं युवाचार्यश्री की अगवानी में पधार गए हैं। प्रवचन के मध्य युवाचार्यश्री ने अपने गुरु के प्रति अहोभाव व्यक्त किया। हम संतों को साधुवाद दिया।

विक्रम संवत् 2057, सन् 2000 का चातुर्मासिक प्रवेश बीदासर (चूरू) के ओसवाल भवन में किया। बीदासर तेरापंथ धर्मसंघ का एक ऐतिहासिक क्षेत्र है। समाधि केन्द्र होने से साध्वियों का प्रवास निरन्तर रहता है। इस बार सेवा के लिए साध्वीश्री चन्दनबालाजी आदि साध्वियों की नियुक्ति थी। आचार्यश्री कभी-कभार संतों का चतुर्मास भी करवा देते हैं, ताकि भाइयों को विशेष लाभ मिल जाए। सुबह का व्याख्यान संतों के यहां होता। यहां लोग रहते ही कम हैं तो उपस्थिति उसी के आधार पर होती, किंतु यह जरूर देखा कि संवत्सरी के बाद भी व्याख्यान की उपस्थिति लगभग बनी रही। यहां पहले तेरापंथ दर्शन के तथा तत्त्वज्ञान के ज्ञाता काफी श्रावक थे। अब उसमें कमी आ गई है, फिर भी उस समय कुछ भाई थे जो प्रश्नोत्तर-तत्त्वबोध आदि ग्रन्थों का मध्याह्न में संतों के सान्निध्य में वाचन करते। लोगों के आग्रह से आश्विन, कार्तिक में रात्रिकालीन व्याख्यान में जैन रामचरित्र का वाचन किया।

आगमकाल में मुनियों की परम्परा रही कि वे वृक्ष-मूल में बैठकर ध्यान-स्वाध्याय आदि किया करते थे। मेरी भी यह सहज प्रकृति-सी बन गई, जब कभी भी अवसर मिलता है, मैं प्रकृति की गोद में बैठकर ध्यान आदि के प्रयोग करता रहा हूं। बीदासर में हमारा चातुर्मासिक प्रवास ओसवाल पंचायत भवन में हुआ। वहां पास में ही पीपल का विशाल व सघन वृक्ष है। वहां चारों तरफ चौकियां भी निर्मित हैं। इस चतुर्मास के दौरान मैं और मुनि देवार्यकुमारजी प्रायः प्रतिदिन सूर्योदय से सवा घंटा पूर्व वहां चले जाते। पेड़ के नीचे बैठकर प्राणायाम, प्रतिक्रमण करते। प्रायः चार महीनों तक यह क्रम नियमित चला।

समाधि केन्द्र व्यवस्थापिका साध्वी चन्दनबालाजी आदि साध्वियों के आत्मीय एवं सौहार्दपूर्ण वातावरण में चतुर्मास संपन्न हुआ। बीदासर से विहार किया और दूसरे दिन ही आचार्यश्री के दर्शन लाडनूं, जैन विश्व भारती के भिक्षु विहार में हो गए। वहां से सन् 2001 के गंगाशहर मर्यादा महोत्सव तक आचार्यश्री के सान्निध्य में रहना हुआ।

इसी चातुर्मासिक प्रवास में बीदासर का एक किशोर धर्मेन्द्र गोलछा नियमित रूप से दर्शनार्थ आता। देवार्यमुनि की प्रेरणा से दीक्षा के लिए तैयार हुआ। सुमतिमुनि ने उसके घर जाकर उसके अभिभावकों को समझाया। वे भी आज्ञा देने के लिए तैयार हो गए। साध्वियों को उसकी जिम्मेदारी संभलाकर हमने वहां से विहार किया। मर्यादा महोत्सव के अवसर पर वह किशोर गुरुदर्शनार्थ गंगाशहर आया। उसको मैंने पूज्य गुरुदेव के दर्शन करवाए व उसकी भावना के बारे में निवेदन किया। गुरुदेव ने भी उस पर ध्यान दिया। आज वह किशोर मुनि धन्यकुमारजी के रूप में संघ में साधनारत है।

❖ ❖ ❖

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

द्वितीय खंड

जागृतिपरक-प्रेरणा

एक महान् दार्शनिक, अध्यात्मयोगी, तेरापंथ धर्मसंघ के दशम अधिशास्ता आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने अपने प्रवचन में कहा–'हर व्यक्ति को एक अवस्था के बाद अपने आत्म-उत्कर्ष के लिए जीवन को एक नया मोड़ देना चाहिए, विशेषकर आत्मसाधक को। जैसे–कोई 50 वर्ष का हो गया तो 51वें वर्ष से 60 वर्ष तक यानी 'एक दशक' का नया जीवन जीने का अभ्यास करना चाहिए। क्रमशः दूसरे, तीसरे आदि दशक को और अधिक अध्यात्म साधना प्रधान बनाना चाहिए।'

इन पंक्तियों से प्रेरणा प्राप्त कर मैंने अपने 71वें जन्मदिन के शुभ अवसर पर चिंतनपूर्वक कुछ विशेष प्रयोगों के साथ एक नया मुनि जीवन प्रारम्भ किया।

प्रवृत्ति से क्रमशः निवृत्ति की ओर प्रस्थान

दिनांक 25 जनवरी, 2001, विक्रम संवत् 2057, माघ शुक्ला एकम, गुरुवार, 71वें जन्मवर्ष में प्रवेश-अर्थात् आठवें दशक में प्रवेश। आचार्यप्रवर श्री महाप्रज्ञजी का आशीर्वाद लेकर चौविहार उपवास के साथ गणाधिपति गुरुदेव श्रीतुलसी के समाधिस्थल (नैतिकता का शक्तिपीठ) पर मौन, स्वाध्याय, जप, ध्यान आदि की आराधना की। इस वर्ष से अगले जीवन को क्रमशः निवृत्ति प्रधान बनाने का लक्ष्य रहेगा। संकल्प के कुछ बिन्दु स्वीकृत महाव्रतों की साधना में विशेष सावधानी रखना। आचार्यश्री भिक्षु के शब्दों में–'पांच महाव्रत, पांच समिति और तीन गुप्ति की अखण्ड आराधना करना।' महाव्रतों की स्वीकृति का उद्देश्य है–'**अत्तहियट्ठयाए**'–आत्महित के लिए। महाव्रतों की पुष्टि तथा सुरक्षा के लिए समिति, गुप्ति की आराधना अनिवार्य है। अतः सतत जागरूकतापूर्वक इनकी साधना करना है।

'**जत्ता**'–यात्रा-तप, नियम, स्वाध्याय आदि। '**जवणिज्जं**'–यमनीय–इन्द्रियों का संयम, कषाय-उपशम आदि। यथासंभव 1 से 2 घंटा मौन। वर्ष में एक बार एकमासिक ध्यान का निजी शिविर लेना। विशेषकर यात्रा-विहार में 'गमनयोग' का अभ्यास करना। सात ध्रुवयोगों में सजगता रखना।

समता की साधना के लिए अनुप्रेक्षा का प्रयोग

'**समया धम्ममुदाहरे मुणी**'–भगवान महावीर ने समता में धर्म कहा है। मेरी साधना का मुख्य लक्ष्य है–समता का अभ्यास। इसके लिए अनुप्रेक्षा का आलंबन लिया। वह इस प्रकार है–'कायोत्सर्ग की मुद्रा में; मुझे समता का जीवन जीना है, क्योंकि समता में शांति है, विषमता में अशांति है। समता आत्मा का स्वभाव है, विषमता आत्मा का विभाव है। (नौ बार तन्मयता से उच्चारण करना।) फिर दो बार बोलना-अपनी शांति के लिए तथा पारस्परिक शांत सहवास के लिए मुझे समता का जीवन जीना है। इसके बाद दोनों होठ बंद, जीभ स्थिर कर उसी शब्दावली का नौ बार मानसिक उच्चारण करना।' फिर प्रसन्नता के साथ प्रयोग संपन्न करना। दिन-रात्रि में एक बार यह प्रयोग शुरू हो गया। इसके साथ सदा सजग रहने का अभ्यास करना। जब भी क्रोध आदि की विषम स्थिति बने उसी समय अनुप्रेक्षा का स्मरण कर लेना कि मुझे समता में रहना है, विषमता में नहीं जाना है।

चित्तशुद्धि के लिए - प्रेक्षाध्यान का अभ्यास

कायोत्सर्ग, दीर्घश्वासप्रेक्षा, शरीरप्रेक्षा आदि प्रवहमान प्रयोगों का और अधिक जागरूकता के साथ अभ्यास करना।

'आरोग्गबोहिलाभं, समाहिवरमुत्तमं दिंतु'-आरोग्य, बोधि-ज्ञान, दर्शन, चारित्र व उत्तम, श्रेष्ठ समाधि प्राप्त हो। 'चंदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा। सागरवर गंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु।'–चित्त की निर्मलता, चारित्र की तेजस्विता, गुणों की गंभीरता–ये सब वीतरागता के उपाय हैं। इन पद्यों को आत्मसात् करने का लक्ष्य रहेगा।

बाह्य यात्रा के साथ अन्तर्यात्रा

24 फरवरी, 2001 को आचार्यश्री महाप्रज्ञजी का आशीर्वाद लेकर नोखा मंडी (बीकानेर) से राजनगर (मेवाड़) चतुर्मास के लिए विहार किया। जैन परम्परा के अनुसार विहार–पैदल यात्रा का क्रम दीक्षा लेने के बाद से ही (मुनिचर्या के साथ बाह्य यात्रा भी) प्रारम्भ हो जाता है, किन्तु मेरे लिए इस 71वें जन्मवर्ष से अन्तर्मुखता का अभ्यास विशेष रूप से प्रारम्भ हो जाने से बाह्य यात्रा के साथ अन्तर्यात्रा का मार्ग भी प्रशस्त होने की संभावना बढ़ गई है।

सिरियारी और संबोधि उपवन

12 मार्च को जेतारण पावन धाम में प्रवास हुआ। वहां का वातावरण शांत, एकांत होने से ध्यान का क्रम अच्छा रहा। 16 मार्च को भिक्षु समाधि स्थल-सिरियारी पहुंचते ही 'विघ्न हरण मंगल करण ...।' जप के साथ ध्यान किया। चार दिन के प्रवास में प्रतिदिन यह क्रम चला। अनुभव किया कि वहां के शांत-प्रशांत, रमणीय वातावरण में शांत भाव से बैठने से ही सहज शांति का अनुभव होता

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

है। लगा कि वहां के परमाणु कुछ ऐसे ही प्रशस्त हैं, जिससे आने वाले आस्थाशील व्यक्ति को मानसिक तृप्ति मिलती है, पुनः-पुनः वहां बैठने का भाव होता है।

21 मार्च को मेवाड़ प्रवेश और 28 को संबोधि उपवन पहुंचे। वहां विराजित सेवाभावी मुनिश्री जयचन्दलालजी (लाडनूं), ध्यान-योगी मुनिश्री शुभकरणजी (सरदारशहर) {जो सन् 2011 के चतुर्मास के बाद संघमुक्त होकर एकाकी साधना कर रहे हैं।} आदि संतों के दर्शन हुए। उनको आचार्यश्री का संदेश तथा केन्द्र के समाचारों की अवगति दी। मुनिद्वय के सान्निध्य में जप, ध्यान आदि से संबंधित अनेक बातें सुनने-जानने को मिलीं। मुनिश्री शुभकरणजी (सरदारशहर) मेरे वैराग्य अवस्था के साथी व सहदीक्षित हैं। दीक्षा के बाद भी सेवाभावी मुनिश्री चम्पालालजी (भाईजी महाराज) तथा मुनिश्री नथमलजी (आचार्यश्री महाप्रज्ञजी) के सान्निध्य में हम एक-दूसरे के सहयोगी के रूप में साथ रहे हैं। इन वर्षों में क्षेत्रीय दूरी के बावजूद भी विचारों की एकरूपता काफी रूप में आज भी विद्यमान है। मुनिश्री वर्षों से एकांत प्रवास में मौन, ध्यान आदि के विशेष प्रयोग कर रहे हैं। 10 दिन के इस प्रवासकाल में मुनिश्री के आभामंडल में बैठकर मुझे ध्यान के कुछ प्रयोग करने का अवसर मिला। संबोधि उपवन का सहज प्राकृतिक सौन्दर्य, शांत वातावरण मन को आकर्षित करनेवाला तथा ध्यान-साधना के लिए अनुकूल है।

राजनगर चतुर्मास

चतुर्मास से पूर्व हम केलवा में प्रवास कर रहे थे। उस समय अणुव्रती कार्यकर्ता भाई श्री मोहनजी जैन आए। निवेदन किया–'हम लोग अणुविभा में एक कार्यक्रम रख रहे हैं। मुख्यमंत्री श्रीअशोक गहलोत आदि कांग्रेस के कई स्थानीय व प्रादेशिक नेतागण उसमें आने वाले हैं। उस कार्यक्रम में आपका सान्निध्य प्राप्त हो, यह भावना है।' संघीय परिप्रेक्ष्य में मैं कुछ हद तक राजनीति से जुड़े लोगों से संपर्क को उपयोगी तो मानता हूं, पर इस क्षेत्र में मेरी व्यक्तिगत रुचि कम है। पहले तो मैंने ना ही की, पर उनके अत्यधिक निवेदन पर स्वीकृति देनी पड़ी। हमारे व साध्वी अशोकश्रीजी की सन्निधि में अत्यंत गरिमामय ढ़ंग से कार्यक्रम हुआ। मुख्यमंत्रीजी ने अपने भाषण में आचार्यवर व अणुव्रत के बारे में अच्छी शुभाशंसा व्यक्त की।

चोखले के अनेक क्षेत्रों में विचरण करते हुए 30 जून, 2001, आषाढ़ शुक्ला 10 को राजनगर में चातुर्मासिक प्रवेश किया। पूज्यश्री के आशीर्वाद से यह पांच माह का पावस प्रवास स्वास्थ्य तथा साधना की दृष्टि से एवं स्थानीय श्रावक समाज की जागृति, तत्त्वज्ञान आदि की दृष्टि से सतत विकासोन्मुख रहा। सुमतिमुनि का विवेकपूर्वक किया गया परिश्रम मूर्तरुप बनकर सामने आया।

आचार्यश्री के आदेशानुसार देवार्यमुनि चतुर्मास से पूर्व मुनिश्री शुभकरणजी की सेवा में संबोधि उपवन गए और वहां से पदममुनि हमारे पास राजनगर आए।

28 सितम्बर को शर्मा हॉस्पिटल में डा. अनिल शर्मा द्वारा मेरे मस्से का ऑपरेशन हुआ। इस कार्य में संतों के सहयोग के साथ श्री सुरेशजी कावड़िया (भिक्षु बोधि स्थल के अध्यक्ष) तथा रमेशजी चपलोत (मंत्री) का अच्छा सहयोग रहा।

18 अक्टूबर से 15 नवम्बर तक व्यक्तिगत साधना शिविर लिया, जिसमें मौन, ध्यान, जप आदि के विशेष प्रयोग चले। इस एकांत प्रवास में सुमतिमुनि और श्रावक समाज की अनुकूलता रही।

मेवाड़ से मारवाड़ की ओर विहार

चतुर्मास संपन्न कर 1 दिसम्बर को हम केलवा पहुंचे। वहां पर संगीतमुनि से मिलन हुआ। 2 दिसम्बर को संबोधि उपवन में मुनिश्री जयचन्दलालजी तथा मुनिश्री शुभकरणजी आदि संतों से पुनः मिलन हुआ एवं पांच दिनों के प्रवास में विचारों का आदान-प्रदान हुआ। देवार्यमुनि पांच माह तक मुनिश्री की सेवा में थे। अब पुनः हमारे साथ हो गए। वहां से प्रस्थान कर 15 दिसम्बर को देवगढ़ पहुंचे। वहां साध्वीश्री नगीनांजी के सान्निध्य में साध्वीश्री कंचनकुमारीजी (उदयपुर) का लम्बे समय से संथारा चल रहा था। 16 ता. को मुनिश्री राजकरणजी स्वामी भी पधार गए। साध्वियों के सिंघाड़ें भी काफी पहुंच गए थे। संलेखना सहित 61वें दिन संथारा संपन्न हुआ।

20 दिसम्बर को कालीघाटी उतरे और 21 को जोजावर के तेरापंथ भवन में ठहरे। वहां के 16 दिन के प्रवास में शयन कक्ष से दूसरे कक्ष में चला जाता और आसन, प्राणायाम, जप, ध्यान का प्रयोग चलता। पश्चिम रात्रि का यह 3 से 6 बजे तक का क्रम चित्त को भावित करने वाला था। खिंवाड़े के एक सप्ताह के प्रवास में भी यही क्रम चला। पाली होते हुए 1 फरवरी, 2002 को समदड़ी में आचार्यश्री एवं युवाचार्यश्री के दर्शन किए और मर्यादा महोत्सव तक गुरुकुलवास में ऊर्जा-प्राप्ति का अवसर मिल गया।

अंतिम समय में आत्मा की शरण में रहूं

मुनिश्री सुमेरमलजी (सुमन) एवं मुनिश्री मोहनलालजी (आमेट) दोनों मेरे आत्मीय संतों में थे। जब उनके सहयोगी संतों से (मुनि सुरेशजी एवं मुनि जिनेशकुमारजी) मुनिद्वय की अंतिम समय से पूर्व की कष्टप्रद शारीरिक वेदना को सुना तो मैं रोमांचित हो गया। मन में आया कि जीवन में कष्ट सहिष्णुता का अभ्यास अवश्य करना चाहिए और उसी समय गुरुदेव श्रीतुलसी के नाम स्मरण के साथ निश्चय किया–'मैं जीवन के अंतिम समय में आत्मा की शरण में रहूं। डाक्टरों की शरण में न जाना पड़े, ऐसी क्षमता प्राप्त करूं।'

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

युवाचार्यश्री के सान्निध्य में

गत गंगाशहर मर्यादा महोत्सव पर परमाराध्य आचार्यवर ने हम तीन संतों को युवाचार्यश्री के सहयोगी के रूप में 'तेरापंथ-प्रभार' सौंपा। पचपदरा मर्यादा महोत्सव के अवसर पर मेरे अनन्य साथी-मित्र मुनि मधुकरजी के साथ व्यक्तिगत तथा संघहित की दृष्टि से कई बार चिंतन-मनन-वार्तालाप हुआ। तत्पश्चात् दायित्व के नाते हम दोनों युवाचार्यश्री महाश्रमणजी के उपपात में गए और संघीय हित के लिए कुछ सुचिंतित विषयों पर विचार प्रस्तुत किए। युवाचार्यश्री ने अवधानपूर्वक सुनकर कहा–'आपको भविष्य में भी तेरापंथ विकास की दृष्टि से हमें बताते रहना है, ताकि उन विषयों पर आचार्यश्री के साथ चिंतन कर उचित निर्णय ले सकें।'

एक महती जिम्मेदारी, जो शत-प्रतिशत पूर्ण नहीं हो सकी

बचपन से ही किसी न किसी रूप में मैं आचार्यश्री महाप्रज्ञजी से जुड़ा हुआ हूं। समय-समय पर उनकी कृपा से अभिस्नात भी होता रहा हूं। बालोतरा में जब हम लोग 'सीख' लेने गए, उस समय मेरे सहवर्ती संतों को थोड़ा पीछे बिठाकर आचार्यश्री मेरे साथ पूरे खुल गए। उन्होंने संघ की कुछ अंतरंग बातें मुझे बताईं। यह उनकी महानता है। उस समय अन्यान्य विषयों के साथ एक विषय था–'संबोधि उपवन।' तत्संबंध में आचार्यश्री ने मुझे कुछ दिशा-निर्देश देते हुए फरमाया–'तुम्हें संबोधि उपवन जाना है व मुनि शुभकरणजी से इस विषय में बात करनी है।' इस आधार पर हम चक्कर लेकर संबोधि उपवन गए। वहां कई वर्षों से मुनिश्री शुभकरणजी साधनारत थे। हम दोनों ही आचार्यश्री महाप्रज्ञजी से जुड़े हुए थे। बचपन से ही हम दोनों के संबंध बहुत ही घनिष्ठ थे। गुरु निर्देशानुसार उनसे बातचीत की। कुछ हद तक सफलता मिली। पर शायद प्रारब्ध में कुछ और ही लिखा था।

सुमतिमुनि सह-अग्रगण्य बने

हमारा चतुर्मास आचार्यश्री ने गोगुंदा (मोटागांव) के लिए फरमाया। पूज्यवरों का आशीर्वाद लेकर पुन: मेवाड़ की ओर विहार किया। शेषकाल में चोखले के क्षेत्रों में विचरण करते हुए नांदेशमा पहुंचे। वहां कुछ दिन प्रवास किया। आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के जन्म-दिवस पर समायोजित कार्यक्रम संपन्न हुआ। रात्रि में एक श्रावक द्वारा आचार्यश्री का संदेश प्राप्त हुआ, सुमतिमुनि के सह-अग्रगण्य नियुक्ति का पत्र भी उसी के साथ था। पत्र पढ़कर मुझे और देवार्यमुनि दोनों को प्रसन्न होना सहज था। ऐसे भी मुनि सुमतिकुमारजी मेरे हर कार्य में विशेषकर मेरी साधना में सतत सहयोगी रहे हैं। अब सह-अग्रणी पद की जिम्मेदारी आ जाने से मैं और अधिक निर्भारता का अनुभव करने लगा।

प्रथम मंत्री मुनिश्री की जन्मभूमि में

गांवों की यात्रा संपन्न कर गोगुंदा में विक्रम संवत् 2059 (सन् 2002) का चातुर्मासिक प्रवेश किया। चतुर्मास में आचार्यश्री की आज्ञा से विशेष स्थितिवश अग्रणी मुनि दर्शनकुमारजी का भी साथ रहना हुआ। प्रात:कालीन प्रवचन पहले देवार्यमुनि प्रारम्भ करते, फिर मैं जाता। मध्याह्न में तत्त्वज्ञान शिक्षण तथा व्याख्यान की जिम्मेदारी सुमतिमुनि संभालते। रात्रि का व्याख्यान दर्शनमुनि देते। मैंने स्वाध्याय, ध्यान आदि में तथा एकमासिक शिविर द्वारा समय का समुचित उपयोग किया। अपने इस एकमासिक शिविर में मैंने निम्नलिखित प्रयोगों की विशेष साधना की।

आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने कुछ मंत्र बताए–

1 स्वास्थ्य के लिए–'**ॐ ऐं ह्रीं क्लीं क्लौं क्लौं अर्हं नमः।**'

1 '**सव्वसाहूणं**' का पूरे शरीर पर न्यास करना।

3 अन्तर्दृष्टि जागरण के लिए–'**ॐ ह्रीं अर्हं अ. सि. आ. उ. सा.।**' इसका एक घंटा मानसिक जप करने के बाद नासाग्र पर ध्यान केन्द्रित करने से निर्विचारता की स्थिति क्रमशः निर्मित होती है।

4 योगक्षेम वर्ष में आचार्यश्री ने एक प्रयोग हम कई साधु-साध्वियों को करवाया था। 'ऊर्ध्व दर्शन का प्रयोग'-दृष्टि को आकाश में स्थिर कर मन ही मन उच्चारण करना–'**लक्ष्य तुम्हारा है अति ऊंचा, मत बनना पुद्गल आसक्त।**' लंबे समय से यह प्रयोग करता रहा हूं। इससे अनासक्ति की साधना विकसित होती गई।

योग, ध्यान-साधिका, शासन गौरव साध्वीश्री राजीमतीजी के अनुभूत प्रयोग भाव क्रिया, मैत्री भावना, कषाय उपशम, अनासक्ति, भेद ज्ञान, जागरूकता एवं दीर्घ श्वासप्रेक्षा के साथ मस्तिष्क पर ध्यान केन्द्रित करने से क्रमशः निर्विचारता की स्थिति बननी शुरू होती है। इनमें से कुछ प्रयोग किए और कुछ आज भी चल रहे हैं। निष्पत्ति का भी कुछ-कुछ अनुभव होने लगा है।

मुम्बई से बेंगलुरू

गोगुंदा से हम तीन संतों को मुम्बई मर्यादा महोत्सव पर पहुंचने का आचार्यश्री का आदेश प्राप्त हुआ। तदनुसार चतुर्मास संपन्न होते ही द्रुतगति से विहार करते हुए उदयपुर, अहमदाबाद, सूरत होते हुए भायंदर में पूज्यवरों के आभामंडल में पहुंच गए। कुछ दिनों के प्रवास में अग्रिम प्रेरणा पाथेय प्राप्त किया। कांदीवली मर्यादा महोत्सव पर हमारा सन् 2003, विक्रम संवत् 2060 का चतुर्मास आचार्यश्री द्वारा कर्नाटक की राजधानी बेंगलुरू के लिए घोषित हुआ।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

मुझे बच्चे प्रिय है

मुम्बई के इस प्रवास में मेरा जन्मदिन आया। हमेशा की भांति मैं आचार्यवर का आशीर्वाद लेने गया। निवेदन किया। आचार्यवर ने अत्यंत प्रसन्नता के साथ मुझसे पूछा–'कौनसे वर्ष में प्रवेश किया है?' मैंने कहा–'73 वें वर्ष में।' तब आचार्यश्री ने फरमाया–'73में दो अंक होते हैं। 7 और 3 दोनों अंकों को मिलाने से 10 की (7+3 = 10) संख्या बनती है। तुम तो दस वर्ष के बालक जैसे लगते हो। तुम्हें पता ही है मुझे बच्चे बहुत ही प्रिय है।' यह फरमाने के बाद आपने उसी प्रसन्न मुद्रा में अपना हाथ मेरे सिर पर रखा। आशीर्वाद प्रदान किया। मैं धन्य-धन्य हो गया। मैंने अनुभव किया कि इस आशीर्वाद के साथ मेरे भीतर बच्चों की-सी निश्छलता व सरलता का और अधिक विकास हो रहा है।

इसी मर्यादा महोत्सव पर मेरे निवेदन पर आचार्यवर ने मुझे ध्यान-साधना का एक सूत्र प्रदान किया। आपने फरमाया–'खुली आंखों से नासाग्र पर ध्यान करना। यह प्रयोग भगवान महावीर द्वारा आचीर्ण है।' इसके परिणामों की चर्चा करते हुए फरमाया–'इससे मूल नाड़ी तनती है। ऊर्जा का ऊर्ध्वारोहण होता है।' मैंने यथासंभव इसका प्रयोग भी किया।

(**नोटः**–इस प्रयोग को बंद आंखों से भी किया जा सकता है। सं.)

दक्षिण भारत की यात्रा

पूज्यवरों का आशीर्वाद तथा साधु-साध्वियों की मंगल भावना के साथ शीघ्र गति से विहार किया। पूना, सोलापुर होते हुए कर्नाटक की सीमा में उत्साह के साथ प्रवेश किया। विशेष उमंग, उत्साह इसलिए था कि गणाधिपति गुरुदेव श्रीतुलसी ने देवलोक होने से पूर्व प्रसंग-प्रसंग में मुझे कई बार फरमाया–'ताराचन्द! तुम्हारी दक्षिण भारत की यात्रा बाकी है।' गुरुदेव के इस कथन को दक्षिण प्रवेश के साथ मैं चरितार्थ कर सका, इसकी अपूर्व प्रसन्नता थी।

हम्पी में

इस यात्रा के दौरान हम हम्पी (बेल्लारी) पहुंचे। हमें बताया गया कि चौदहवीं शताब्दी में वह एक विशाल महानगर था। जहां पर आज एक छोटी-सी बस्ती थी। हमारे ग्रंथों में पांचवें 'आरे' के लक्षणों की चर्चा करते हुए बताया गया–इस 'आरे' में महानगर गांवों में बदल जाएंगे। ग्रंथों में लिखी हुई ज्ञानी-पुरुषों की बातें कितनी सत्य हैं।

बेंगलुरू में

अनेक छोटे-बड़े क्षेत्रों तथा बेंगलुरू के उपनगरों,कॉलोनियों में रहने वाले श्रावक समाज की धार्मिक सार-संभाल एवं आस्था को अक्षुण्ण रखने की प्रेरणा प्रदान करते हुए बेंगलूरू (गांधीनगर) के तेरापंथ भवन में सन् 2003 का चातुर्मासिक प्रवेश किया। श्रमशील अग्रणी मुनि सुमतिकुमारजी तथा मुनि देवार्यकुमारजी के प्रयास से सारे संघीय कार्यक्रम और अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान, जीवन विज्ञान के सार्वजनिक कार्यक्रम भी समायोजित हुए। व्याख्यान आदि की उपस्थिति उल्लेखनीय होती। प्रवचन और कुछ जनसंपर्क के सिवाय मेरा समय मेरे लिए ही आरक्षित रहता। आम जनता के लिए एक पंचदिवसीय प्रेक्षाध्यान शिविर भी एस.के. जैन दंपती के नेतृत्व में आयोजित हुआ। योगा, ध्यान आदि की दृष्टि से यहां के श्री मांगीलालजी छाजेड़ बहुत सक्रिय कार्यकर्ता हैं। संवत्सरी के बाद मैत्री दिवस का भव्य कार्यक्रम जैन समाज के विभिन्न संप्रदाय के साधु-साध्वियों की उपस्थिति में समायोजित होता है, जिसमें पूरा जैन समाज लाभान्वित होता है।

सामूहिक जप अनुष्ठान का प्रभाव

बेंगलुरू में उसी वर्ष तेरापंथी सभा के चुनाव होने थे। इन वर्षों में बेंगलुरू तेरापंथ श्रावक समाज की स्थितियां विवादास्पद बनी हुई थीं। चुनाव के दौरान समाज में काफी हलचल पैदा हो जाया करती थी। उस अशांत माहौल को देखते हुए मैंने सोचा–हम पारिवारिक कलह-निवारण के लिए विभिन्न मंत्रों का सुझाव देते हैं। क्यों नहीं उन मंत्रों के प्रयोग ऐसे अवसरों पर सामूहिक रूप से किये जाएं? चिंतन निर्णय में बदला व क्रियान्विति के रूप में एक प्रयोग शुरु किया। उसके तहत् प्रवचन समाप्ति के बाद जब श्रावक वर्ग मंगल पाठ सुनने के लिए खड़ा होता, उस समय खड़े-खड़े निर्धारित मंत्रों का सामूहिक जाप करना। पहले मैं बोलता, मेरे बाद परिषद बोलती। यह क्रम कई दिनों तक बराबर चला। हजारों लोगों द्वारा किये गये उस अनुष्ठान का असर हुआ। चुनाव से एक दिन पहले ही मध्याह्न में अध्यक्ष पद के प्रबल उम्मीदवारों में से एक श्री सोहनलालजी मांडोत आए। कुछ वार्तालाप के पश्चात् उन्होंने स्व-प्रेरणा से ही अपना नामांकन पत्र वापस ले लिया। समाज के प्रायः सभी प्रमुख कार्यकर्ता उपस्थित हो गए व उसी समय श्री हीरालालजी मालू निर्विरोध अध्यक्ष चुन लिये गए। कहां तो चुनाव के दिन शांति व्यवस्था कायम रखने के लिए पुलिस बुलाने की बात थी और कहां अकस्मात् ही सारा काम बड़े गरिमामय ढ़ंग से पूर्ण हो गया। मंत्रों की पवित्र ध्वनि के द्वारा निःसंदेह वातावरण पवित्र होता ही है-इस सूत्र पर मेरा विश्वास और गहरा हो गया।

इस बेंगलुरू प्रवास में हमारा परिचय युवकरत्न व शासनसेवी श्री बजरंगजी जैन व उनकी धर्मपत्नी श्रीमती लताजी से हुआ। हमने देखा–यह दंपति प्रबुद्ध है व अत्यंत धर्मपरायण है। प्रेक्षाध्यान के वैज्ञानिक पक्ष से संबंधित मेरी कुछ जिज्ञासाएं थीं, जिसे बजरंगजी ने

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अत्यंत सरलता के साथ समाहित की। चतुर्मासकाल में ये प्रातः विशेष रूप से प्रवचन सुनने के लिए आते, किन्तु मेरे विशेष कहने पर इन्होंने देवार्यमुनि को इंग्लिश पढ़ाने में व उनके व्यक्तित्व-विकास में अपना समय नियोजित किया।

कम समय में लाभ अधिक

बेंगलुरू का ही एक बड़ा उपनगर है–विजयनगर। चतुर्मास के बाद वहां गए। वहां तेरापंथ के लगभग 400 परिवार प्रवास करते थे। वहां के श्रावक समाज का तीनों ही समय का उत्साह, भक्ति-भावनापूर्वक आवागमन दर्शनीय ही नहीं, अपितु उल्लेखनीय था। तदनुरूप संतों की सक्रियता तथा व्यस्तता रहनी ही थी। यहां रहना तो बहुत कम हुआ, किन्तु श्रावक समाज ने दिल खोलकर लाभ उठाया।

आक्रोश परीषह: साधना की कसौटी

वहां से मंडिया, बाहुबलीजी, हासन, होते हुए कर्नाटक के प्रसिद्ध तीर्थक्षेत्र धर्मस्थला की ओर विहार किया। सकलेशपुर से धर्मस्थला के रास्ते में गहरा जंगल पड़ता है। दूसरे दिन हमें बताया गया–'कल के विहार में 25 कि.मी. तक ठहरने योग्य कोई स्थान नहीं है। रास्ते में एक छोटा-सा चर्च पड़ता है।' तदनुसार हमने विचार किया कि सूर्योदय से पूर्व ही विहार कर लेंगे। प्रात:राश की दृष्टि से चर्च में कुछ समय ठहरकर फिर आगे की मंजिल तय कर लेंगे। हमारे चर्च पहुंचने से पूर्व ही सेवा में जो श्रावक साथ में थे उन्होंने नन्स (क्रिश्चियन साध्वियों) से पूछकर फादर के ऑफिस में हमारे अल्पकालीन प्रवास की व्यवस्था कर दी। हम चर्च में पहुंचे, उस समय फादर कहीं और व्यस्त थे। थोड़ी देर बाद वे आए। उस समय हम गोचरी कर नाश्ता करने ही वाले थे, पर हमें अपने ऑफिस में देखकर वे आग-बबूला हो गए। बहुत ही भला-बुरा कहने लगे।

श्रावकों ने कहा–'हमने नन्स को पूछकर, उनके कहने से ही यह व्यवस्था की है।' (अब या तो नन्स ने फादर को बिना पूछे ही अनुमति दे दी होगी या उन्होंने फादर को सूचित नहीं किया होगा। मूल कारण तो भगवान ही जाने।) पर फादर के उग्र रूप को देखकर उन्होंने झूठ बोलते हुए कहा–'इन्होंने हमको पूछा ही नहीं।' खैर, बात को समेटते हुए मैंने फादर को जैन मुनि-चर्या की संक्षेप में जानकारी दी व शांति से पूछा–'फादर साहब! हमें लगभग आधे घंटे के लिए कोई स्थान चाहिए। आप ही सुझाइए।' तब तक फादर भी कुछ शांत हो गए थे। (शांति, शांति से ही पैदा होती है।) उन्होंने हमें एक हॉल दिया। छोटे ऑफिस की तुलना में वह हॉल बहुत ही सुविधाजनक था। जो हुआ, अच्छा हुआ। हमने शीघ्रता से अपना काम सलटाया व आगे के लिए चल पड़े। (साधु जीवन में कभी-कभी ऐसी स्थितियां बनती हैं, जिसमें हमारे मानसिक सन्तुलन की परीक्षा होती है।) कुल मिलाकर 25 कि.मी. का विहार कर हम अगले गांव पहुंचे। वहां पर भी ईसाई मिशनरी द्वारा संचालित स्कूल में हमारी व्यवस्था की। नन से मिलना हुआ। सुबह की घटना स्मृति-पटल पर आ गई। पर हाथों की अंगुलियों की तरह सारे मनुष्य एक समान नहीं होते। उन्होंने हमारी व साथ में आये हुए यात्रियों की अच्छी व्यवस्था की।

धर्मस्थला में

लंबे विहार करते हुए हम धर्मस्थला पहुंचे। यह तीर्थक्षेत्र जैन, शैव तथा वैष्णव धर्म का अनुपम संगम स्थल है। वहां के धर्माधिकारी श्री वीरेन्द्रजी हेगड़े जैन धर्म में आस्था रखते हैं। तेरापंथ आचार्य परम्परा से बहुत प्रभावित है। बड़े उल्लास व उत्साह के साथ जैन साधु-साध्वियों का नगर प्रवेश करवाते हैं। प्रवेश के समय हमारे लिए आकर्षण का एक बिन्दु था–एक प्रशिक्षण प्राप्त हथिनी की जात। पूरे रास्ते भर में वह अपने सूंड में स्थित चंवर को पुनः-पुनः हवा में ऊपर-नीचे लहरा रही थीं।

काश! तेरापंथ समाज भी...........।

सर्वप्रथम हम सीधे श्री हेगड़ेजी के निवास स्थान पर गए। उन्होंने अत्यंत श्रद्धा के साथ हमारा स्वागत किया। उस समय वहां उनकी 'अदालत' लगा करती थी। मुझे बताया गया आस-पास के अनेकों गांवों के लोग उनके प्रति असीम श्रद्धा रखते हैं। उनकी धारणा है कि इस कुर्सी पर बैठकर श्री हेगड़ेजी जो निर्णय देते है वह भगवद्वचन तुल्य होता है। वह 'अदालत' देखने की हमारी इच्छा थी। इस संबंध में हमने श्री हेगड़ेजी से बात की। पहले तो वे सकुचा गए, किंतु हमारी इच्छा देखकर उन्होंने समुचित व्यवस्था की। हमने देखा–एक परिवार विवाद लेकर आया। मात्र कुछ मिनटों में ही विवाद का निपटारा हो गया, निर्णय हो गया। उस दृश्य को देखकर मन में टीस उठी–काश! तेरापंथ समाज के अनुयायी भी इन ग्रामीणों की तरह अपने गुरु के प्रति सर्वात्मना समर्पित हो जाएं तो हमारे समाज के पारिवारिक व सामाजिक विवादों का निपटारा शीघ्रता से हो जाएं।

वहां से हम मैसूर गए। इस तरह कर्नाटक के विभिन्न क्षेत्रों में विचरण करते हुए हमने गुरु आदेशानुसार तमिलनाडु की ओर विहार किया। मार्गान्तर्गत ऊटी, कोयम्बत्तूर, तिरपुर, ईरोड़, सेलम, गुड़ियातम, निर्मली, आरकोणम् आदि क्षेत्रों तथा चैन्नई के उपनगरों में (श्रावक समाज में धर्म-जागृति के कार्यक्रमों के साथ) कुछ दिनों का प्रवास किया।

पांच मास का चतुर्मास

विक्रम संवत् 2061, सन् 2004 का चातुर्मासिक मंगल प्रवेश तमिलनाडु की राजधानी मद्रास-चेन्नई (साहुकार पेठ) के तेरापंथ भवन में किया। यहां पर भी संतों का परिश्रम मुखर होकर सामने आया। संघीय कार्यक्रमों के साथ अनेक प्रतियोगिताओं

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

आदि के प्रभावी कार्यक्रम संपन्न हुए। उपस्थिति अच्छी से अच्छी रहती। तपस्याएं भी अच्छी संख्या में हुईं। यहां की ज्ञानशालाएं बड़े अच्छे ढ़ंग से संचालित होती हैं। संवत्सरी का कार्यक्रम तेरापंथ विद्यालय के विशाल हॉल में रखा गया। वहां के श्रावक-श्राविकाएं पौषध भी बड़ी संख्या में करते हैं। धर्म ध्यान की जागृति पांच ही मास तक वर्धमान रही। पूर्ण मौन के साथ मैंने अपना एकमासिक ध्यान शिविर संपन्न किया।

नेत्र विशेषज्ञ डॉ. सोहनलालजी ओसवाल द्वारा मेरी दोनों आंखों का मोतियाबिंद का ऑपरेशन एक के बाद एक भलीभांति हुआ।

हम गद्गद हो गए

संस्कृत में प्रसिद्ध उक्ति है–'**दूरस्थोऽपि न दूरस्थः, यो यस्य हृदये स्थितः।**' संघीय परिप्रेक्ष्य में इसका भावानुवाद इस तरह से किया जाता है–यदि शिष्य गुरु के हृदय में स्थित है तो शारीरिक रूप से चाहे वह कितना भी दूर क्यों न हो, वह दूर नहीं कहलाता।

चेन्नई चतुर्मास संपन्न कर उपनगरों में क्रमशः विचरण करते हुए हम पल्लावरम् पहुंचे। उन्हीं दिनों में सुनामी त्रासदी घटित हुई। श्रद्धेय आचार्यप्रवर को इस त्रासदी की सूचना मिली। आपश्री हम संतों के प्रति चिंतित हुए। चेन्नई तेरापंथ समाज के वरिष्ठ श्रावकों के पास केन्द्र से समाचार आए। आचार्यवर ने पूछवाया–'मुनि ताराचन्दजी आदि संत कहां हैं? सुनामी के कारण उनके कोई दिक्कत तो नहीं हुई?' प्रसंगवश हमें आवश्यक दिशा-निर्देश भी दिराए। हमने सोचा–'हमारी चिन्ता करने वाले समर्थ गुरु विद्यमान हैं, फिर हमें परेशानी का सामना क्यों करना पड़ेगा?'

तिरुपति में

आंध्रा के तिरुपति में मर्यादा महोत्सव का भव्य कार्यक्रम आयोजित हुआ। अनेक क्षेत्रों के लोगों की अच्छी उपस्थिति रही। ऊपर पहाड़ों के बीच स्थित तिरुपति बालाजी का मंदिर दक्षिण भारत का विश्रुत मंदिर है। सबसे अधिक आमदनी वाला यह मंदिर बताया जाता है। हमने उस मंदिर के अवलोकन का मानस बनाया। स्थानीय लोगों से हमने जाना कि जैन मुनि के रूप में वहां जाने में निम्नांकित बातें बाधक बन सकती हैं। 1. वहां भीड़ बहुत होती है। प्रतिदिन हजारों की संख्या में यात्री आते हैं। 2. भीड़ के कारण स्त्रियों आदि के संघट्टे की संभावना बनी रहती है। 3. लंबी लाईन में खड़ा रहना पड़ता है। 4. वहां भूगर्भ (जहां बालाजी की मूर्ति स्थित है) से कुछ कदमों पहले जलप्रवाह बहता है। वहां की धारणा है कि पैरों को धोकर, सही ढ़ंग से शुद्ध होकर भगवान के दर्शन करने चाहिए। स्थानीय श्रावक श्री निर्मलजी सिंघवी के भाई का तिरुमाला प्रशासनिक कार्यालय के कुछ वरिष्ठ अधिकारियों से व्यक्तिगत अच्छे संबंध थे। उसने ये सारी बातें उनके सामने रखीं। अधिकारियों ने भरोसा दिलाते हुए कहा–'आप 'स्वामीजी' को लेकर आइए। सारा कार्य उनकी मर्यादा के अनुसार ही होगा।' निश्चित कार्यक्रमानुसार हम तिरुमाला गए। प्रशासनिक अधिकारी हमें लेने के लिए हमारे प्रवास-स्थल पर ही आ गए। उनके संरक्षण में हम तिरुपति बालाजी की मूर्ति को देखने हेतु चल पड़े। वे हमें विशेष रास्ते से ले गए। परिणामतः न तो भीड़ का सामना करना पड़ा, न लाईन का। इसी क्रम में जब वह जलप्रवाह आया तब मैंने अधिकारीजी से कहा–'हम इस पानी का स्पर्श नहीं कर सकते।' उन्होंने तत्काल बिना किसी आपत्ति के पार्श्वस्थित दूसरा रास्ता खुलवाया। हम भूगर्भगृह में गए। भगवान नमिनाथ की स्तुति की। लगभग पांच मिनट तक स्तुति व ध्यान किया। उस समय कुछ पुरुष व महिला अधिकारी हमारे आस-पास खड़े रहे। वे इस बिन्दु पर पूरे सजग थे कि महिला तो दूर पुरुष का भी हमें स्पर्श न हो जाए। वे लोगों को बराबर निर्देश दे रहे थे–'जैन स्वामी ध्यान कर रहे हैं, सभी दूर रहें।' उसके बाद हमें जहां सारा रुपया, सोना आदि इकट्ठा होकर उन्हें वर्गीकृत किया जाता है, वहां ले गए। वहां की सारी व्यवस्था बताई। तिरुमाला की इस यात्रा में हमने अनुभव किया कि दक्षिण में साधारण जनमानस ही नहीं, बल्कि प्रबुद्ध व उच्चस्तरीय प्रशासनिक वर्ग भी जैन श्रमणों के प्रति अत्यंत श्रद्धाशील है।

प्रेक्षा-चिकित्सा के प्रयोग

तिरुपति शहर पहाड़ की तलहटी में बसा है व ऊपर पहाड़ पर तिरुमाला देवस्थानम् स्थित है। सीधे रास्ते से जाते है तो 7 कि.मी. की दूरी पड़ती है। अधिकांश रास्ता चढ़ाई का है। बीच-बीच में कहीं-कहीं दुरूह चढ़ाई भी है। रास्ते में कुछ मकान आते हैं। मेरी उम्र व दुरूह चढ़ाई को देखते हुए स्थानीय श्रावकों ने उन मकानों में हमारे अल्पकालीन विश्राम की व्यवस्था की। विहार में विशेष अपेक्षा के बिना विश्राम करने की मेरी मानसिकता कभी नहीं रही, अतः मैंने विश्राम का निषेध कर दिया। यह सुनते ही श्रावकगण विस्मित हो गया। वे आश्चर्यचकित होकर बोले–'आपको अभी तक थकान क्यों नहीं आई?' मैंने कहा–'जो प्रेक्षा साहित्य का पाठक है या जो प्रेक्षाध्यान का साधक है, उसके लिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है। मैं प्रायः विहार में गमनयोग व श्वास पर ध्यान केन्द्रित करता हूं। इन दोनों प्रयोगों से प्राण ऊर्जा बढ़ती है, परिणामतः थकान की अनुभूति नहीं होती।'

अगले दिन तिरुमाला से नीचे उतरते समय हम तीनों ही संतों के पिंडलियां व साथल भयंकर रूप से तनावग्रस्त हो गए। ऐसा लगा, दोनों पैर पूर्णरूप से जकड़ चुके हैं, पत्थर जैसे बन चुके हैं। जो कि ऐसी ढलान में व सीढ़ियों से उतरते समय सहज व स्वाभाविक है।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

लगभग छः वर्ष पूर्व महाराष्ट्र की यात्रा में दिगम्बर समाज के प्रसिद्ध तीर्थ क्षेत्र 'मांगीतुंगी' गए। उस समय भी पहाड़ियां उतरने के बाद पैरों की यही स्थिति बनी थीं। तब मैंने शरीर प्रेक्षा का आलम्बन लिया था। इस समय भी मैंने उठने-बैठने आदि के साथ शरीर प्रेक्षा को जोड़ दिया। परिणामस्वरूप इस भयंकर शारीरिक वेदना को भोगा कम व देखा ज्यादा।

हालांकि सुमतिमुनि ने गर्म पानी के सेक व आयोडिन आदि लगाने के लिए बहुत कहा, किंतु ऐसे अवसरों पर मैं प्रायः '**देहे दुक्खं महाफलं**' इस आगम-वाक्य के आधार पर संतों को कहता रहता हूं–देह में उत्पन्न वेदना को थोड़ा-बहुत ही सही, यदि हम सहन करते रहे तो हमारी सहज निर्जरा होगी, वहीं दूसरी ओर हमारे धैर्य का विकास होगा। जिसके चलते हम अंतिम समय आने पर मारणांतिक कष्टों को सहन करने में सक्षम बन सकते हैं।

उस समय भी मैंने मानसिक संकल्प कर लिया–जितना हो सके मुझे बाहरी चिकित्सा पद्धति का सहारा नहीं लेना है। सौभाग्य से स्थिति नियंत्रण में ही रही। शरीर प्रेक्षा के कुछ दिनों के अनवरत अभ्यास से धीरे-धीरे स्थिति सामान्य हो गयी।

हीरक जयंती वर्ष

तिरुपति में मैंने 75वें वर्ष में प्रवेश किया। प्रचलित जनभाषा में हीरक वर्ष में प्रवेश किया। अनेकों बार जन्मदिन के अवसर पर गुरु सान्निध्य प्राप्त हो जाता है। तब पूज्यवरों के आशीर्वाद से अपने आगामी वर्ष की यात्रा प्रारम्भ करता हूं, किंतु क्षेत्रीय दूरी के कारण इस वर्ष वह संभव नहीं हो पाया। अनायास ही परम श्रद्धेय आचार्यवर का संदेश प्राप्त हुआ। जो कि इस प्रकार है–

शासन गौरव मुनि ताराचन्दजी! तुम्हारा पचहत्तरवां वर्ष श्रेयस्कर और मंगलमय बने। तुम क्षेत्रीय दृष्टि से दूर हो, पर आत्मिक दृष्टि से बहुत निकट हो। कभी-कभी ऐसा अनुभव होता है कि पास भी हो। तुम्हारी जीवनशैली सदा मन को आकृष्ट करती रहती है। तुम साधना के क्षेत्र में आगे बढ़ रहे हो, यह प्रसन्नता की बात है। अभी-अभी हमने सिरियारी में साध्वी राजीमती के अनुरोध पर साधना के अग्रिम प्रयोग के लिए तीन भूमिका की कल्पना की थी।

❖ प्रथम भूमिका में – एक घंटा से दो घंटा श्वास पर ध्यान।

❖ द्वितीय भूमिका में – तीन घंटा से चार घंटा ध्यान।

❖ तृतीय भूमिका में – पांच घंटा से आठ घंटा तक केवल श्वास पर ध्यान।

आलंबन सहज श्वास का रहे। यह प्रयोग बहुत ही शक्तिशाली है। मंगलकामना।

9 फरवरी, 2005, जै.वि.भा.लाडनूं। **आचार्य महाप्रज्ञ**

मर्यादा महोत्सव के अवसर पर आचार्यवर ने हमारा चतुर्मास पल्लावरम् फरमाया। तदनुसार मर्यादा महोत्सव के बाद तमिलनाडु के पक्षीतीर्थम्, तिरुवण्णामल्लै, कुंभकोणम्, वीलीपुरम्, चिदंबरम्, आरकोणम् आदि क्षेत्रों में कुछ प्रवास के साथ श्रावक समाज को धार्मिक उद्बोधन भी दिया।

शूली की सजा शूळ में टल गई

ज्योतिष मेरी रुचि का विषय रहा है। जहां कहीं भी अवसर मिलता है, वहां मैं ज्योतिषियों को अपनी जन्मकुंडली दिखाता हूं। जिसमें मुख्यतः मेरा एक ही प्रश्न रहता है–'मेरी साधना व स्वास्थ्य में कोई दिक्कत या समस्या तो नहीं आएगी?'

दक्षिण भारत का एक प्रसंग है–पल्लावरम्, तिरुवण्णामल्लै, कांचीवरम्, मायावरम्, कुंभकोणम् इन क्षेत्रों में हमारा प्रवास हुआ। इन क्षेत्रों में आज भी ज्योतिष की पकड़ रखने वाले तमिल लोग हैं। कांचीवरम् में तो एक व्यक्ति इतना सिद्धहस्त है कि वह बिना प्रश्नकर्ता को देखे, बिना उससे मिले मात्र उसके हाथ के अंगूठे की छाप के आधार पर उसका भूत, भविष्य आदि बता देता है। मैंने भी जिम्मेदार श्रावकों के द्वारा यथायोग्य अपनी जन्मकुंडली, अंगूठे का छाप आदि भिजवाकर फलादेश जानना चाहा। अलग-अलग समय में अलग-अलग ज्योतिषियों द्वारा प्राप्त फलादेशों में एक समानता थीं। उन सभी ने सन् 2005 से लेकर 2008 तक का समय मेरे लिए घातक बताया था। उनके अनुसार इस कालखंड में मेरे साथ किसी प्रकार की दुर्घटना होने या ऐसी स्थिति बनने की संभावना थी, जो मेरे लिए शारीरिक पीड़ा या संत्रास का कारण बने।

ऐसे तो मैं ग्रह शांति की दृष्टि से नमस्कार महामंत्र के विभिन्न पदों की मालाएं फेरा करता था। पर ये फलादेश आने के बाद जिस ग्रह की दशा के कारण ये स्थितियां संभावित थीं, उस ग्रह से संबंधित नमस्कार महामंत्र के पद की माला (जो ज्ञान किरण में दी गई है।) फेरनी शुरू कर दी। लंबे समय तक यह क्रम व्यवस्थित चला।

इस जप का निश्चित रूप से कितना, क्या असर हुआ यह तो केवली ही जाने, पर मैं इतना जरूर कह सकता हूं–कांदीवली (मुम्बई) में अक्षय तृतीया की रात्रि को व बाद में लाडनूं से गुरुदर्शन यात्रा के दौरान किशनगढ़ से पहले मेरे साथ जो घटना घटी संभवतया उनका तार दक्षिण भारत के ज्योतिषियों द्वारा कही गई बातों से जुड़ा हो। कुल मिलाकर यह कह सकता हूं कि जप के इस

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अनुष्ठान द्वारा यह कालखंड आंशिक रूप में विघ्नदायी बनकर बीत गया। 'शूली की सजा शूळ में टल गई' वाली प्रसिद्ध कहावत चरितार्थ हो गई। (नोट:-ये दोनों घटनाएं आगे इसी पुस्तक में क्रमशः 'नींद में तीन फुट नीचे गिरा' व 'स्वयं की चिकित्सा स्वयं ने की' इन शीर्षकों में दी गई है। सं.)

आचार्यश्री महाप्रज्ञजी का जन्मदिन

चतुर्मास से पूर्व आचार्यश्री का जन्मदिन बड़े रूप में चेन्नई के सुप्रसिद्ध कामराज मेमोरियल हॉल में आयोजित किया गया। जिसमें हमारा तथा साध्वी अणिमाश्रीजी एवं साध्वी स्वर्णरेखजी आदि साध्वियों का सान्निध्य था। वहां के राज्यपाल श्री सूरजीतसिंहजी बरनाला की विशेष उपस्थिति। सभी वक्ताओं ने आचार्यप्रवर के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व के प्रति अपने श्रद्धाशील विचार व्यक्त किए। गुरु के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने वाला यह भव्य कार्यक्रम गरिमापूर्ण वातावरण में संपन्न हुआ।

गत चेन्नई चतुर्मास में सुमतिमुनि तथा देवार्यमुनि की विशेष प्रेरणा से सुश्री शीतल बोहरा दीक्षा लेने के लिए संकल्पित हुई। उसकी मां का मोह प्रबल था। उसका घर कामराज मेमोरियल हॉल के पास ही था। बहिन शीतल की मां को समझाने के विशेष लक्ष्य के साथ ही उस दिन का प्रवास उसके यहां किया। शीतल की माता को समझाया। कुछ काम बना, पर पूरा नहीं बन पाया। चतुर्मास में साध्वियों की प्रेरणा से पूरा काम हो पाया। बहिन शीतल आज साध्वी सिद्धार्थप्रभा के रूप में संघ में साधनारत है।

संकल्प की संपूर्ति

सन् 2005 के चतुर्मास के लिए पल्लावरम् के तेरापंथ भवन में शुभ प्रवेश किया। बेंगलूरु के चतुर्मास के प्रारम्भ से जो दूध-चाय व दूध से बनी हुई कोई भी चीज नहीं लेने का संकल्प लिया था, वह 25 मास बाद पल्लावरम् पहुंचने पर संपन्न हो गया। पल्लावरम् मद्रास-चेन्नई का एक निकटवर्ती क्षेत्र है। इस बार चेन्नई-साहुकार पेठ के आस-पास में तीन चतुर्मास थे, फिर भी उपस्थिति अपने-अपने क्षेत्रों के अनुसार सब जगह अच्छी रही। पल्लावरम् में परिवार कम होते हुए भक्ति-भावना बहुत प्रशस्त थी। परिपार्श्व के क्षेत्रों के श्रावक समाज ने भी अच्छा लाभ उठाया। प्रातः, मध्याह्न तथा सायं तीनों समय की उपस्थिति अच्छी रही। किशोरों व कन्याओं में तपस्या की होड़-सी लग गई। सारे कार्यक्रमों का संचालन संत ही करते। प्रातः प्रवचन के सिवाय मैं तो स्वाध्याय, ध्यान में समय का उपयोग करता। मेरे एकमासिक शिविर में प्रवचन भी सुमतिमुनि करते।

इस प्रवास में सुमतिमुनि तथा देवार्यमुनि की प्रेरणा से वहां की एक लड़की सुश्री रेखा पितलीया दीक्षा के लिए तैयार हुई, किंतु उसकी मां ने मनाही कर दी। उसे मैंने, सुमतिमुनि ने समझाया, किंतु उस समय उसकी आज्ञा प्राप्त नहीं हो सकी। कालांतर में (हम संतों द्वारा सूचित करने पर) मुनि धर्मेशकुमारजी ने प्रयास किया। उन्हें सफलता मिली। आज रेखा, साध्वी रश्मिप्रभा के रूप में संघ में साधनारत है।

पल्लावरम् में हम तीनों ही संतों को खुजली की भयंकर बीमारी हो गई। दवाइयों का, विशेषकर मलहम का लंबा कोर्स चला। चेन्नई में समणी शुक्लप्रज्ञाजी के संसारपक्षीय भाई श्री महेंद्र बाफना व श्री महावीर बाफना का दवाइयों का बड़ा काम है। इस बन्धुयुगल की तीव्र भावना रही कि हमें औषधि दान का लाभ मिले। मैं समझता हूं इस बन्धुयुगल ने औषधि दान द्वारा बहुत ही कर्मों की निर्जरा की है। उनके प्रति मंगलकामना।

यों बनी 'अर्हम् भवन' की भूमिका

आचार्यश्री के आदेशानुसार मुम्बई की ओर विहार किया। हालांकि बेंगलुरू हमारे मार्ग में नहीं था, फिर भी वहां के प्रमुख कार्यकर्ताओं के निवेदन पर हम गए। वहां के कई श्रावकों ने मिलकर विजयनगर में 'अर्हम् भवन' हेतु एक विशाल प्लॉट खरीदा था। काम कुछ आगे बढ़े, उससे पूर्व ही श्रावकों में पारस्परिक सामंजस्य की कमी के कारण दूरियां बढ़ती गईं। श्रावकों का आपसी मनोमालिन्य दूर हो, इसी लक्ष्य के साथ हमारा विजयनगर में अल्पकालिक प्रवास हुआ। मेरे सान्निध्य में 'अर्हम् भवन' से संबंधित ट्रस्टियों की मीटिंग रखी गई। मीटिंग में पुरानी बातें उखाड़ी जाने लगीं। मुझे लगा मीटिंग लक्ष्य से भटक चुकी है। अतः मीटिंग में अपना सान्निध्य देने में कोई औचित्य नहीं है। तब मैं यह कहते हुए उठा–'पुरानी बातें उखाड़ने में कोई निष्कर्ष तो निकलेगा नहीं। आगे बढ़ने की पहली शर्त है–तथ्यहीन पुरानी बातों को भूलना।' मुझे यों अचानक उठा हुआ देखकर कुछ श्रावकों ने निवेदन किया–'आप विराजें। हम आपकी कही गई बातों पर विशेष ध्यान देंगे।' मेरा यों बीच में उठना अच्छे के लिए ही हुआ। श्रीचिमनजी बुच्चा के शब्दों में 'वह क्षण मीटिंग का टर्निंग प्वॉइंट था।' उसके बाद मीटिंग विधेयात्मक रूप में आगे बढ़ी। उसी प्रवास के दौरान सभी ने एक दूसरे से खमतखामणा किए। भाई प्रदीप हीरावत को जिम्मेदारी सौंपी गई। माहौल अत्यंत मधुर व सरस बना। सभी रचनात्मक कार्य करने हेतु संकल्पित हुए। जिसकी निष्पत्ति 'अर्हम् भवन' के रूप में समाज के सामने आई।

दक्षिण भारत की यात्रा के उल्लेखनीय तथ्य

(1) दक्षिण भारत में, प्राचीन समय में जैन धर्म का बड़ा ही प्रभुत्व व वर्चस्व रहा। आज भी स्थानीय जनमानस जैन धर्म व जैन श्रमणों के प्रति अत्यंत श्रद्धाशील है।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

(2) हमारे श्रावक समाज में व विशेषकर युवा पीढ़ी में शिक्षा का ग्राफ बहुत ही ऊंचा है और उससे भी ऊंचा है उनकी श्रद्धा का स्तर। मेरी नजरों मे इसका मूलभूत कारण हो सकता है–ज्ञानशाला। वहां अनेकों छोटे-बड़े नगरों में ज्ञानशाला का संचालन बहुत ही अच्छे ढ़ंग से होता है।

(3) श्रावक वर्ग देव-गुरु-धर्म के प्रति श्रद्धालु तो है, पर कभी-कभी भावावेश में बहकर संघीय संस्कारों के प्रतिकूल आचरण कर लेता है। जैसे–मंदिर में बोली बोलना। बाद में वे जरूर पछताते हैं, कहते भी हैं–हमारे साथ धोखा हुआ। 'बाद में पछताने से होत क्या जब चिड़ियां चुग गई खेत।'

(4) पूरी यात्रा में हमने यह निश्चय कर लिया था–हमें रास्ते की सेवा कम से कम लेनी है। प्रतिदिन 18-20 कि.मी. की एवरेज रखनी है। कुछ एक अपवादों को छोड़कर हमने इसका पूरा ध्यान रखा। परिणामत: सर्वत्र श्रावक समाज को खुशी-खुशी रास्ते की सेवा के लिए तैयार पाया।

(5) इस यात्रा में मेरे मन में एक विचार आया–मानसिक शांति के लिए अनुप्रेक्षा की दृष्टि से एक वाक्य श्रावक समाज को सुझाया जाए। वह वाक्य सरल हो व सैद्धान्तिक उलझनों से मुक्त हो। सोचते-सोचते एक वाक्य मन में सूझा–'**मुझे मन को शांत रखना है।**' यह तय किया इस शब्दावली का पुन:-पुन: पुनरावर्तन करना व बाद में मन ही मन तीन बार अनुचिंतन करना–'मन को शांत क्यों रखना है? अपनी शांति के लिए व परिवार की शांति के लिए, मुझे मन को शांत रखना है। क्रोध नहीं करना है, आवेग व आवेश में नहीं जाना है।' प्राय: प्रवचन के बाद लगभग पांच मिनट तक अनुप्रेक्षा के इस प्रयोग को मैं करवाता था। श्रावक वर्ग ने उसी समय इस प्रयोग को अपनाया। व्यक्तिगत, पारिवारिक व सामाजिक शांति की दृष्टि से इस प्रयोग के परिणाम भी सामने आए। श्रावकों के आध्यात्मिक विकास में मैं यत्किंचित् सहभागी बना, इसकी हार्दिक प्रसन्नता हुई।

गदग, हुबली, इचलकरंजी आदि क्षेत्रों का स्पर्श करते हुए जयसिंगपुर में मर्यादा महोत्सव संपन्न कर सातारा, सांगली, पूना होते हुए न्यू-मुम्बई के वाशी में महावीर जयंती का कार्यक्रम समायोजित हुआ।

साधु के क्या चक्कर?

मुम्बई सभा के पदाधिकारीयों ने एक चिंतन किया कि हमारे सान्निध्य में अक्षय तृतीया का कार्यक्रम विशाल रूप में समायोजित हो। निर्धारित यात्रा-पथ के अनुसार उस समय का हमारा प्रवास दक्षिण मुम्बई में प्रस्तावित था। उस समय मुम्बई में वर्षीतप करने वाले तपस्वी भाई-बहिन भी काफी थे। संभावित विशाल उपस्थिति को देखकर उन लोगों ने दक्षिण मुम्बई में एक विशाल हॉल कार्यक्रम हेतु बुक कराने का चिंतन किया। मीटिंग के पश्चात् सभा के कुछ पदाधिकारी मेरे पास आये, जिनमें श्री पृथ्वीराजजी कच्छारा, श्री जगदीशजी उमरिया, श्री ख्यालीलालजी तातेड़, श्री चिमनजी सिंघवी, श्री भंवरलालजी कर्णावट आदि मुख्य थे। उनकी बात सुनकर मैंने कहा–'कांदीवली के तेरापंथ भवन में साध्वीश्री सूरजकुमारीजी विराज ही रही है। सुना है साध्वी कीर्तिलताजी भी वहां आने वाली है। समाज के पास इतना विशाल भवन होते हुए फिर समाज किराये का हॉल आदि क्यों ले? अत: यह कार्यक्रम उनके सान्निध्य में ही रहे तो अधिक उपयुक्त रहेगा।' तब सभा अध्यक्ष श्री पृथ्वीराजजी कच्छारा ने कहा–'मुनिश्री! हम सभी की भावना है कि मुख्य कार्यक्रम आपके सान्निध्य में ही हो।' एक तरफ समाज के प्रमुख लोगों की भावना थी, दूसरी तरफ कार्यक्रम आदि के लिए समाज का अतिरिक्त अर्थ व्यय हो–इस पक्ष में शुरू से ही मेरी मानसिकता नहीं रही। मेरे दिमाग में इसका समाधान सूझा कि हम भी कांदीवली की ओर विहार कर दें। मैंने सुमतिमुनि से कहा–'यात्रा पथ बदलो। अब हमें 'आखातीज' कांदीवली मनानी है। मेरा यह निर्णय सुनकर उपस्थित श्रावक समाज अवाक् रह गया। उन्होंने सोचा भी नहीं कि इस प्रकार की बात भी होगी। श्रीपृथ्वीराजजी ने कहा–'मुनिश्री! हमारा आपको इतना अतिरिक्त चक्कर दिलाने का मानस कदापि नहीं था।' तब मैंने कहा–'गुरुदेव श्री तुलसी फरमाया कराते थे, साधु के क्या चक्कर?' वाशी से हम डोम्बिवली होते हुए अक्षय तृतीया की आयोजना हेतु कांदीवली पहुंचे।

नींद में 3 फुट नीचे गिरा

कांदीवली के तेरापंथ भवन में चतुर्विध धर्मसंघ के साथ अक्षय तृतीया का भव्य कार्यक्रम समायोजित हुआ। उसकी संपन्नता के बाद हमारा रात्रिकालीन प्रवास रूपचन्दजी दूगड़ (बीदासर) के बंगले में हुआ। 10 बजे के बाद तीनों संत सो गए। मैं उसी कमरे के झरोखे में सोया हुआ था। लगभग वह 3 फुट ऊंचा होगा। करीब 1 बजे अचानक मच्छरदानी को चीरकर नीचे आ गिरा। धमाका हुआ, फिर भी संतों की नींद नहीं खुली। मैं बैठा, शरीर को संभाला तो पाया कि होठ लहूलुहान हो गए हैं। दांतों पर भी कुछ असर हुआ है। दाएं हाथ के कंधे से कुहनी तक के भाग में अधिक दर्द महसूस हुआ। उसी समय स्वमूत्र से सफाई की, गीली पट्टी का प्रयोग किया। पूरे शरीर की प्रेक्षा कर रहा था। तब संत जागे। सूर्योदय होने के बाद कदम-कदम पर संभलते हुए विहार किया। अगली मंजिल पहुंचे। संत गोचरी आदि के कामों में लगे। मैंने अंदर जाकर ठंडे पानी की धार तथा पानी की पट्टी का प्रयोग किया। फिर भी शरीर की स्थिति अनुकूल नहीं हुई, तब रात्रिकालीन घटना की पूरी जानकारी संतों को दी। संतों का मधुर उपालंभ भी मिला। तत्परता से एक्सरे करवाया।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

रिपोर्ट में आया कि हड्डी क्रेक नहीं हुई है, मांसपेशियों में असर हुआ है। उनके कहे अनुसार-गर्म पानी से सेक तथा व्यायाम आदि करता रहा। लगभग एक वर्ष बाद हाथ का दर्द ठीक हो पाया।

श्रम ही जीवन का आभूषण है

यात्रा की सफलता का एक बिन्दु है–श्रम। इस संदर्भ में पूज्य गुरुदेव श्रीतुलसी सदा से ही मेरे आदर्श रहे हैं। 'मुझसे शक्ति का गोपन न हो' इस भावना से मैं अपने आपको सदा भावित करता रहा हूं। मुम्बई में हमारे कई जिम्मेदार श्रावक कोई आठवीं मंजिल पर, कोई दसवीं मंजिल पर रहते हैं। कई तो और भी ऊंची मंजिलों में रहते हैं। उन्हें संभालना भी हमारा कर्तव्य था। हालांकि उस समय मेरे जीवन का 77वां वर्ष चल रहा था। लेकिन यह सोचकर कि स्वामी भीखणजी ने अपने जीवन के इन वर्षों में मेवाड़ की दुरूह घाटियों को पार किया था। उसके सामने यह ऊंचाई है ही क्या? आराध्यदेव की स्मृति कर हमने उनमें से कुछ श्रावकों के घरों में जाने का निर्णय लिया। निर्णय के तहत् हमने मुम्बई के प्रमुख श्रावक श्री भंवरलालजी कर्णावट के मकान में प्रवास किया। उनका मकान बालकेश्वर के पास नाना चौक में दसवीं मंजिल पर है। श्रावकों ने जब यह सुना, उन्हें आश्चर्य हुआ। कुछ श्रावकों ने भंवरलालजी को मधुर उपालंभ देते हुए कहा–'मुनिश्री को इस उम्र में तुमने इतना ऊपर चढ़ा दिया। कहीं असाता हो जाती तो?' स्वयं भंवरलालजी भी गद्‌गद हो गए।

प्रकृति के आगे सभी विवश

योजनानुसार मुम्बई के उपनगरों, कॉलोनियों आदि की लगभग 300 कि.मी. की यात्रा कर हम कांदीवली के अलिका नगर में श्री भंवरलालजी सम्पतकुमारजी नाहटा के निवास स्थल पर पहुंचे। पूर्व निर्णीत योजना थी कि वहां एक दिन का प्रवास कर अगले दिन तेरापंथ भवन (कांदीवली) में चातुर्मासिक प्रवेश करेंगे। सायं मुम्बई समाज के वरिष्ठ श्रावक श्री ख्यालीलालजी तातेड़ आए। उन्होंने कार्यक्रम की तैयारियों के बारे में हमें बताया। रात्री में बारिश का चक्र शुरू हुआ। मुम्बई की बारिश के बारे में सुना बहुत था, प्रत्यक्ष साक्षात्कार करने का काम तभी पड़ा। परिणामत: प्रात: विहार नहीं हो पाया। हमारी, सभा की, सभी की योजनाएं धरी की धरी रह गईं। बारिश के आने का समय भी बड़ा ही विचित्र था। प्राय: सूर्योदय से एक घंटे पूर्व शुरू होती जो सूर्यास्त के एक घंटे बाद रुकती। चार दिन तक बारिश का क्रम इसी प्रकार चला। जिससे चार दिन तक हमें उसी मकान में रहना पड़ा। हालांकि श्रद्धासंपन्न परिवार होने के कारण और चीजों की कोई सोच नहीं हुई, पर ऐसे विचित्र मौसम ने एक बार के लिए चिंता पैदा कर दी। आखिरकार पांचवें दिन शाम ढ़लते-ढ़लते मात्र कुछ समय के लिए बारिश रुकी। हम तैयार तो थे ही, तत्काल तेरापंथ भवन की ओर चल पड़े। रास्ते में फिर से बूंदाबूंदी शुरू हो गई। भीगते-भीगते सूर्यास्त होते-होते अंगुलि गणनीय श्रावकों के साथ हमने कांदीवली के तेरापंथ भवन में विक्रम संवत् 2063, सन् 2006 का चातुर्मासिक प्रवेश किया। वैसा चातुर्मासिक प्रवेश मेरे जीवन का पहला था। (शायद अंतिम ही हो।) इस दृष्टि से उसे 'ऐतिहासिक चातुर्मासिक प्रवेश' भी कहा जा सकता है। तेरापंथ भवन का वही कमरा, जिसमें सिद्ध मर्यादा महोत्सव के अवसर पर आचार्यश्री विराजते थे। उसी कमरे में हमारा चतुर्मास परिसंपन्न हो रहा था। संतों के श्रम से चतुर्मास में होने वाले सारे धार्मिक कार्यक्रम व्यवस्थित संचालित होने लगे, जिससे श्रावक समाज का उत्साह भी बढ़ता रहा।

सन् 2001 से प्राय: प्रत्येक चतुर्मास के आश्विन शुक्ला एकम से कार्तिक अमावस्या तक एक मास का मौन, एकांत, जप, स्वाध्याय, ध्यान आदि के प्रयोगों के साथ अपना शिविर लेता हूं। इस बार भी यही चिंतन था, किंतु मेरी साधना में अनन्य सहयोगी सुमतिमुनि ने कहा–'आश्विन कृष्णा दूसरी एकादशी, सोमवार को पुष्य नक्षत्र आता है। आप उसी दिन से एकांत साधना शुरू करें तो अच्छा है।' मैंने उनकी बात को स्वीकार कर लिया।

अपने लिए अपना शिविर

आज भीतर की प्रसन्नता मन एवं चेहरे पर प्रस्फुटित हो रही थी। शारीरिक कार्यों से निवृत्त हो सवा नौ बजे ईशाण कोणाभिमुख हो, इष्ट स्मरण के साथ सुखासन में जमकर ध्यानाभ्यास में बैठ गया। लगातार 3 घंटे का प्रयोग मन को बहुत-बहुत आल्हादित कर रहा था। 1 घंटा बैठकर, आधा घंटा खड़े-खड़े, फिर 1 घंटा बैठकर और आधा घंटा खड़े-खड़े इस प्रकार तीन घंटे का यह प्रयोग प्रतिदिन के लिए जम गया। चित्त को श्वास पर केन्द्रित रखता। श्वास लेते हुए यह भाव-श्वास के साथ शुभ भाव एवं स्वस्थ परमाणु भीतर प्रवेश कर रहे हैं और श्वास छोड़ते हुए यह भाव-अशुभ भाव और अस्वस्थ परमाणु बाहर निकल रहे हैं। इस प्रकार श्वास प्रेक्षा के साथ सूक्ष्म अनुप्रेक्षा का प्रयोग भी कुछ समय के लिए साथ-साथ जुड़ जाता।

यह ध्यान है या कुछ और

निर्विकल्प ध्यान का होना वस्तुत: कठिनतम है। श्वासप्रेक्षा का आलंबन लेने के बाद भी बार-बार मन अतीत में चला जाता है, भविष्य की कल्पना में लग जाता है, वर्तमान में अनिच्छित चिंतन में चला जाता है। निर्विचार की अवस्था कुछ क्षणों के लिए तो अवश्य आती ही होगी, किंतु वे क्षण अनुभवगम्य नहीं हो रहे हैं।

शिविर का पांचवां दिन-ध्यान मुद्रा में स्थित हूं। कभी संतों के प्रवचन की आवाज कानों में टकराती है, कभी आस-पास से गुजरते लोगों की हलचल का और कभी पक्षियों आदि की ध्वनियों की ओर मन चला जाता है। मन में आया कि मैं ध्यान कर रहा हूं या

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

कुछ और? भीतर से चिंतन उभरा कि यदि मैं इन सब में तटस्थ हूं, प्रतिक्रिया विरत हूं और समता में स्थित हूं तो ये आत्मा के-चेतना के शुद्ध क्षण ही होने चाहिए।

शिविर संपन्नता के कुछ दिन बाद ही चतुर्मास भी संपन्न हो गया। संतों के श्रम से मुम्बई का अष्टमासिक प्रवास श्रावक समाज के लिए सुखद एवं प्रेरणादायी रहा।

राजस्थान की ओर प्रस्थान

आचार्यश्री के आदेशानुसार चतुर्मास के बाद गुरुदर्शन के लिए हमारा विहार द्रुतगति से राजस्थान के बीकानेर-गंगाशहर की ओर हो गया। इस लंबी यात्रा में मुम्बई के श्रावक समाज ने समुचित सेवा की। उसके बाद नोखा मंडी के श्री मूलचन्दजी चोरड़िया व श्री मोहनलालजी चोपड़ा के परिवार ने आगे सेवा की जिम्मेदारी का निर्वहन किया।

सन् 2007, गंगाशहर के मर्यादा महोत्सव के पावन अवसर पर मुम्बई सहित चार वर्षों की दक्षिण भारत की यात्रा सानंद संपन्न कर पूज्यश्री के पावन आभावलय में पहुंचकर परम प्रसन्नता का अनुभव किया।

अतिरिक्त प्रसन्नता

जब आचार्यश्री ने हम संतों के मस्तक पर अपना वरदहस्त रखा, तब जो आनंदानुभूति हुई वह स्वगम्य है। फिर फरमाया–'लंबे समय के बाद आचार्य के दर्शन करने वाले साधु-साध्वियों को तो प्रसन्नता होती है, किंतु कभी-कभी किसी-किसी साधु-साध्वी को देखकर आचार्य को भी अतिरिक्त प्रसन्नता होती है।' यह कहना उनकी महान उदारवृत्ति का द्योतक है।

अब मुख्यता अन्तर्यात्रा की

इस आगमन की बेला में प्रवचन के मध्य मैंने निवेदन किया–'आचार्यप्रवर! पूज्य गुरुदेव श्रीतुलसी तथा आपश्री के निर्देशानुसार उत्तर, पूर्वांचल, दक्षिण एवं पश्चिमांचल के प्राय: सभी प्रांतों की बाहर की यात्रा कर चुका हूं। अब मेरे अन्त:करण में विशेष रूप से अन्तर्यात्रा की प्रबलतम भावना है। उसको साकार रूप देने की कृपा करवाएं। इससे पूर्व इच्छा है कि पहले सेवाकेन्द्र में वृद्ध संतों की सेवा करने का अवसर दिराएं। जिससे सेवा के ऋण से कुछ उऋण होने तथा कर्म निर्जरा का लाभ मिल सके।' आचार्यश्री ने मेरे इस निवेदन को ध्यान से सुना ही नहीं, अपितु बसंत पंचमी के दिन जै.वि.भा. लाडनूं के वृद्ध संत सेवाकेन्द्र में मेरी और सुमतिमुनि की नियुक्ति की घोषणा की।

मर्यादा महोत्सव सानंद संपन्न कर आचार्यश्री, युवाचार्यश्री अपने धर्मसंघ के साथ बीकानेर पधारे। हम भी साथ में थे। वहां पूज्यश्री द्वारा दो बहिनों की मुनि दीक्षा पहले से ही घोषित थी। उनमें एक देवार्यमुनि की संसारपक्षीया बहिन मुमुक्षु सरिता थी। गुरुकृपा से देवार्यमुनि को दीक्षा में सम्मिलित होने तथा परिषद में गुरुदेव के सम्मुख अपनी बहिन के प्रति मंगल भावना व्यक्त करने का सहज, सुन्दर अवसर प्राप्त हो गया।

सेवा के लिए प्रस्थान

पड़िहारा का तेरापंथ भवन। जै. वि. भा. लाडनूं संत सेवाकेन्द्र में सेवार्थ विदा लेने के लिए आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के श्रीचरणों में उपस्थित हुए, विधिवत् वंदना की। गुरुदेव ने अपना वरदहस्त हम संतों के सिर पर रखा और आशीर्वाद प्रदान किया। वहां उपस्थित युवाचार्यश्री, साध्वीप्रमुखाश्री तथा मुख्य नियोजिकाजी ने मंगलभावना व्यक्त की। ज्योंहि बद्धांजलिपूर्वक विहार करने की आज्ञा लेकर चले, आचार्यश्री ने युवाचार्यश्री की ओर दृष्टिपात करते हुए फरमाया–'तुम भी जाओ, मुनि ताराचन्दजी को विदाई देने के लिए।' परम विनीत युवाचार्यप्रवर तत्काल खड़े हुए और तेरापंथ भवन के बाहर बरामदे में पधारे। हम संत गद्‌गद थे, भावविभोर थे। वंदना कर हम संतों ने संतों के समूह के साथ प्रस्थान किया। एक सीमा के बाद संतों की सद्‌भावना के साथ हमारे चरण आगे की ओर चल पड़े।

सेवा करना हमारा कर्तव्य है

विक्रम संवत् 2064, फाल्गुन शुक्ला तृतीया, 20 फरवरी, 2007। गतवर्ष के सेवाकेन्द्र व्यवस्थापक प्रेक्षा प्राध्यापक मुनिश्री किशनलालजी आदि सेवादायी संतों ने परिषद के मध्य सेवा व्यवस्था की 'फाइल' हम समागत संतों को प्रदान की। सहर्ष स्वीकार करते हुए हमने कहा–'पूज्यवरों ने कृपाकर हम संतों को सेवा का अवसर प्रदान किया, इसकी हमें बहुत प्रसन्नता है। सभी वृद्ध संतों की चित्त समाधि रहे, ऐसा हमारा सतत प्रयास रहेगा।'

पिता-पुत्र की दीक्षा

तेरापंथ धर्मसंघ के संविधान की एक सुविख्यात धारा है कि संघ में मुनि दीक्षा देने का अधिकार एकमात्र आचार्य को ही होता है, किंतु यदा-कदा आचार्य चाहें तो अन्य साधु-साध्वी को भी दीक्षा देने की अनुमति प्रदान कर सकते हैं। परन्तु शिष्य-शिष्या तो आचार्य के ही कहलाएंगे। इसी संदर्भ में मेरे जीवन में एक नया प्रसंग तब उपस्थित हुआ, जब आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने मुझे निर्देश दिया–'2

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

मई, 2007, विक्रम संवत् 2064, वैशाख शुक्ला पूर्णिमा को गंगाशहर निवासी पिता-हंसराज, पुत्र-आलोक मरोठी को क्रमशः समण तथा मुनि दीक्षा तुमको देना है।'

गुरु के इस कृपा प्रसाद से हम संत अभिभूत थे, नत-प्रणत थे। लाडनूं, जै.वि.भा. संत सेवाकेन्द्र में शासनश्री मुनि हीरालालजी (बीदासर), मुनि सुमतिकुमारजी, मुनि देवार्यकुमारजी आदि सात संत थे। सुजानगढ़ सेवाकेन्द्र से मुनिश्री राजकरणजी, मुनि वत्सराजजी, मुनि जंबूकुमारजी (सरदारशहर) के प्रतिनिधि के रूप में-मुनि महेशकुमारजी, मुनि स्वस्तिककुमारजी, मुनि पीयूषकुमारजी तथा छापर सेवाकेन्द्र से मुनिश्री सुखलालजी के प्रतिनिधि मुनि मोहजीतकुमारजी पधारे, जिन्होंने दीक्षा के कार्यक्रम का सफल संचालन भी किया। सुमतिमुनि सहयोगी के रूप में थे ही। लाडनूं सेवाकेन्द्र की व्यवस्थापिका साध्वीश्री कंचनप्रभाजी, शासनश्री साध्वीश्री रामकुमारीजी एवं शासन गौरव साध्वीश्री राजीमतीजी आदि साध्वीवृन्द, समण, समणीगण, पारमार्थिक शिक्षण संस्था, लाडनूं की सभा, संस्थाएं आदि की दीक्षा के इस पावन कार्य में अपने-अपने ढ़ंग से सहभागिता रही।

इस अवसर पर आचार्यप्रवर, युवाचार्यवर, साध्वीप्रमुखाश्री के संदेश तथा मुख्य नियोजिकाजी की मौखिक मंगलकामना प्राप्त हुई। इन संदेशों को जब सी.डी. प्रोजेक्टर के माध्यम से मंच पर सुनाया गया, तब ऐसा मनोहारी दृश्य उपस्थित हुआ और ऐसा लगा कि संदेश प्रदाता स्वयं साक्षात् यहीं पर विराजमान हैं। सारी परिषद आश्चर्यचकित थी। मन में आया कि आज वही उक्ति चरितार्थ हो रही है–'जहां गुरु की शुभ दृष्टि, वहां होती है नई सृष्टि।' संदेश क्या थे? सारे कार्यक्रम में चार चांद लगाने वाले थे। (संदेश पढ़ें परिशिष्ट–3 में)

इसी क्रम में साधु-साध्वियों, श्रावक-श्राविकाओं द्वारा मंगलाचरण, मंगलगीत, मंगल वक्तव्य, शासनसेवी श्री कन्हैयालालजी छाजेड़ द्वारा आज्ञा पत्र का वाचन तथा दीक्षार्थियों द्वारा अहोभाव व्यक्त करने के बाद ठीक निश्चित समय पर परिवारजनों की मौखिक आज्ञा लेकर मैंने मंगल वाक्यों, इष्ट स्मरण के साथ सामायिक पाठ के द्वारा दीक्षा संस्कार, रजोहरण प्रदान, चतुर्विंशतिस्तव, केशलुंचन आदि अपेक्षित सारे कार्यक्रम सानंद संपन्न किए। पूज्यश्री द्वारा प्राप्त नवदीक्षितों के नाम की घोषणा की गई–नचिकेता मुनि आदित्यकुमार तथा समण हंसप्रज्ञ।

वह सेवा नहीं, व्यापार है

नचिकेता मुनि आदित्यकुमारजी की दीक्षा के बाद का प्रसंग है। संस्कार-निर्माण की दृष्टि से मैं नवदीक्षित मुनि को प्रशिक्षण दे रहा था। उसी समय मुमुक्षु डॉ. शांता जैन आई। उन्होंने आदित्यमुनि को प्रेरणा देते हुए कहा–'आज महाराज (मैं) अपनी व्यक्तिगत साधना गौण कर, आप पर इतना ध्यान देकर आपको तैयार कर रहे है। आपको भी जल्दी से जल्दी तैयार होकर मुनिश्री का (मेरा) सहयोगी बनना है।' वार्तालाप के दौरान व्यक्तिगत स्वार्थ की बात चल पड़ी। सामान्यतया हर व्यक्ति के भीतर यह मनोभाव रहता है कि आज मैं जिसे अपना समय लगाकर तैयार कर रहा हूं, भविष्य में वह मेरे काम आए। इस बात पर मैंने शांताबाई से कहा–'मैं इस मनोभाव को व्यापार मानता हूं। इन पर श्रम करने के पीछे मेरे दो उद्देश्य है–(1) आचार्यवर ने मुझ पर भरोसा कर इनकी जिम्मेदारी मुझे प्रदान की है। इन्हें तैयार कर मुझे उस भरोसे पर खरा उतरना है। (2) मैं मानता हूं संघ की भावी पीढ़ी को तैयार करना संघ की एक सेवा है। यह सेवा भी तो साधना का ही एक अंग है।'

प्रयोग प्रधान प्रवास

लगभग तेरह मासिक जै.वि.भा. का हमारा प्रवास कुल मिलाकर सुखद रहा। सेवा के साथ वहां का प्राकृतिक सौन्दर्य तथा वातावरण शांत होने के कारण स्वास्थ्य भी अनुकूल रहा। सेवाकेन्द्र, सेवा व्यवस्था का सारा कार्य अग्रणी सुमतिमुनि एवं देवार्यमुनि ने भलीभांति संभाला। साधना और प्रयोग की दृष्टि से मेरे लिए यहां का लंबा प्रवास बहुत सार्थक रहा। कुछ प्रयोग जो लंबे समय से मैं करना चाह रहा था, किंतु अनुकूलता के अभाव में नहीं कर सका। इस बार स्वास्थ्य और साधना की दृष्टि से तीन प्रयोग किये–पहला-त्रिफला का प्रयोग, जो कि मेरे संसारपक्षीय भाणेज तोलाराम बरड़िया (भीनासर-कोलकाता) की देख-रेख में चला। वह स्वयं आठ वर्ष से विधिवत् प्रयोग कर रहा था। उसकी भावना रही कि सहज प्राप्त इस लंबे समय में आप भी यह प्रयोग करें। 5 मार्च, 2007 से प्रारम्भ किया जो 5 मार्च, 2008 को संपन्न हुआ। उदर शुद्धि आदि कई दृष्टियों से अच्छा रहा। यही प्रयोग मैंने ईस्वी सन् 2001 में गंगाशहर मर्यादा महोत्सव से पचपदरा मर्यादा महोत्सव तक प्रायः एक वर्ष तक किया था। दूसरा प्रयोग था–उगते सूर्य किरणों की नंगी आंखों से यथासंभव अनिमेष प्रेक्षा करना। 1मिनट से बढ़ाते हुए क्रमशः 45 मिनट तक बढ़ाने का यह प्रयोग है, किंतु मैं 30 मिनट तक कर सका। तीसरा प्रयोग था–मिट्टी की भूमि पर नंगे पैर भ्रमण करना। मिट्टी पर चलने का प्रयोग करीब 7 माह तक चला। इन प्रयोगों के अनेक लाभ बताए गए हैं। मैंने भी कुछ स्पष्ट, कुछ अस्पष्ट अनुभव किये, जो अग्रोक्त हैं–भूख की अल्पता, पदार्थ के प्रति आसक्ति में कमी, प्राण ऊर्जा तथा कष्ट सहिष्णुता का ग्राफ पहले से कुछ वर्धमान महसूस कर रहा हूं।

अपना एक मासिक शिविर तथा प्रतिदिन का आसन, प्राणायाम, स्वाध्याय, ध्यान आदि का क्रम व्यवस्थित चला।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

गुरुदर्शन यात्रा

सन् 2007, लाडनूं जै.वि.भा. सेवाकेन्द्र की एकवर्षीय सेवा व्यवस्था सांनद संपन्न हुई। अगले वर्ष की सेवा व्यवस्था की 'फाइल' प्रो. मुनिश्री महेन्द्रकुमारजी (मुम्बई) आदि संतों को संभलाकर 15 मार्च, 2008 में गुरुदर्शन के लिए विहार किया और 11 अप्रैल को किशनगढ़ से दो मंजिल आगे अजमेर रोड़ पर स्थित गगवाना में पूज्यवरों के दर्शन किए।

नवदीक्षित नचिकेता बालमुनि आदित्यकुमारजी को गुरुचरणों में समर्पित किया। (2 मई, 2007 को पूज्यश्री के आदेशानुसार जै.वि.भा. लाडनूं, सुधर्मा सभा में दीक्षा दी गई थी, अतः समर्पण की हमारी परम्परा है।) दीक्षा के बाद प्रथम बार गुरुदर्शन के पावन अवसर पर मुनि आदित्यकुमारजी ने भी अपना स्वरचित भक्ति गीत हाव-भाव के साथ आकर्षक शैली से प्रस्तुत किया। प्रसन्नमना आचार्यश्री ने महती कृपा कर इस लघुवय में रचना तथा प्रस्तुति दोनों का मूल्यांकन करते हुए शैक्ष मुनि को पुरस्कृत किया।

चार दिन का गुरु सान्निध्य प्राप्त हुआ। हमारा अगला चतुर्मास उदयपुर फरमाया। किशनगढ़ से जयपुर की तरफ एक मंजिल पाटण तक पूज्यश्री की सेवा में रहे।

तुम्हारा चिंतन प्रशस्त है

पाटण, मध्याह्न का समय, आचार्यश्री की उपासना में युवाचार्यश्री, साध्वीप्रमुखाजी तथा मुख्य नियोजिकाजी विराजमान थे। मैं गया। प्रणतिपूर्वक वंदना की और कुछ निवेदन के लिए समय मांगा। पूज्यश्री ने कहा–'बोलो, क्या कहना चाहते हो?' मैंने निकट जाकर करबद्ध निवेदन किया–'आचार्यप्रवर ! जै.वि.भा. लाडनूं सेवाकेन्द्र, भिक्षु विहार में अचानक एक भाव जागृत हुआ कि जीवन के इस संध्याकाल में अब आत्मशुद्धि के लिए कुछ विशेष पुरुषार्थ करना चाहिए। जैसे–दिगम्बर, श्वेताम्बर दोनों परम्पराओं में संलेखना की चर्चा आती है। जघन्य छह मास, उत्कृष्ट 12 वर्ष आदि। इस संदर्भ में मैं अपने ढ़ंग से संयम, तप, मौन, स्वाध्याय, ध्यान आदि के विशेष प्रयोग करना चाहता हूं। इनमें से 12 प्रकार के तप तथा 10 प्रकार के धर्म आदि का प्रयोगात्मक रूप कैसे हो सकता है? पूज्यवरों का पथदर्शन चाहता हूं।' कुछ परिचर्चा के पश्चात् फरमाया–'तुम्हारा चिंतन प्रशस्त है, साध्वोचित है। भावी साधना की जो तुम्हारी कल्पना है, उसकी पूरी रूप-रेखा हमारे सामने आ जाए, फिर हम चिंतनपूर्वक निर्णयात्मक रूप ले सकेंगे।'

स्वयं की चिकित्सा स्वयं ने की

लाडनूं से गुरु दर्शनार्थ किशनगढ़ जा रहे थे। 26 मार्च को राबडीयाद पहुंचे। सायं शौच से निवृत्त होकर आ रहे थे। आदित्यमुनि और काशीद कुछ आगे चल रहे थे, मैं पीछे चल रहा था। अचानक एक ट्रॉली आई। मैं ज्योंहि सड़क के बांई साइड के किनारे पर हुआ, गोबर से पैर फिसल गया और मैं गिर गया। तत्काल खड़े होकर हाथों, पैरों को संभाला तो पाया कि दाएं हाथ की हथेली में हलकी-सी चोट आई है और बाएं पैर के घुटने के नीचे के भाग की कुछ चमड़ी छिल गई है। स्थान पर आकर ठंडे पानी से सेक किया और रात्रि में स्वमूत्र की मालिश एवं पट्टी आदि के प्रयोगों से अच्छा लाभ मिला। उसके बाद संतों को घटना की जानकारी दी।

संतों का आध्यात्मिक मिलन

15 अप्रैल को पूज्यवरों का आशीर्वाद लेकर उदयपुर (मेवाड़) चतुर्मास के लिए विहार किया। उस समय शासन गौरव मुनिश्री मधुकरजी स्वास्थ्य-लाभ के लिए राजनगर के किशोर नगर में प्रवासित थे। भिक्षु बोधि स्थल (राजनगर) में विराजित साध्वीश्री जयश्रीजी आदि साध्वियों ने आहार, पानी आदि से हम संतों की भक्ति की। इनके साथ आलोकमुनि की बहिनें व देवार्यमुनि की मौसियां– साध्वीश्री उज्ज्वलप्रभाजी व साध्वीश्री अनुप्रेक्षाश्रीजी थीं। सहज ही सभी का मिलन हो गया। भक्ति-भावना से प्रमुदित साध्वियों का कण-कण नाच रहा था। उनकी प्रमोद भावना से वहां का वातावरण संघीय प्रभावना से मुखरित हो गया। 2 मई को किशोर नगर पहुंचे।

दो अनन्य साथी मुनियों का मिलन सबके मन को बहुत प्रसन्न करने वाला था। संघीय भावना से ओत:प्रोत यह मिलन और स्वागत का कार्यक्रम धर्मसंघ की गरिमा को बढ़ाने वाला था। जब पूज्यवरों तथा साध्वीप्रमुखाश्री का पावन संदेश मुनिश्री मधुकरजी के हाथों में दिया गया, तत्काल उन्होंने शिरोधार्य करते हुए अपना अहोभाव व्यक्त किया। भिक्षु बोधि स्थल के अध्यक्ष, मंत्री, शासनसेवी पदमचन्दजी पटावरी, अशोकजी डूंगरवाल आदि व्यक्तियों ने अपनी-अपनी अभिव्यक्ति दी।

हमारे स्वागत में मुनि मधुकरजी के सहयोगी संतों की गीतिका सबको प्रमुदित करने वाली थी। नवदीक्षित आदित्यमुनि की दीक्षा पर्याय का एक वर्ष संपन्न हो गया और आज 2 मई, 2008 को दूसरे वर्ष में प्रवेश हुआ। इस उपलक्ष्य में उन्होंने भी अपनी स्वरचित गीतिका के माध्यम से अपनी भावना व्यक्त की। सुमतिमुनि आदि संतों के वक्तव्यों के बाद मैंने अपनी प्रसन्नता की अभिव्यक्ति देते हुए कहा–'यदि संभव हो तो उदयपुर में चिकित्सा करवाएं। हमें भी सहज साथ रहने का एक मौका मिल जाएगा।'

सहप्रवास तथा पंडित-मरण

शुभ संयोग ही मानना चाहिए कि पूज्यवरों की कृपा से हम दोनों का 10 संतों के साथ विक्रम संवत् 2065, सन् 2008 का चातुर्मासिक प्रवास उदयपुर में ही हुआ। मुनि जीवन के प्रारम्भिक वर्षों में साथ रहे और अंतिम समय में भी साथ रहना हो गया। इस

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

प्रवास में मैंने मुनि मधुकरजी को कई बार कायोत्सर्ग सहित भेद ज्ञान का प्रयोग तथा 'एगो मे सासओ अप्पा....।' गाथा का स्वाध्याय करवाया। उनको अच्छा लगता।

श्रावकों, डॉक्टरों, दवाओं तथा संत सेवाओं की भरपूर अनुकूलताओं के बावजूद भी शासन गौरव मुनि मधुकरजी की बीमारी बढ़ती गई और उनकी कष्ट-सहिष्णुता भी वर्धमान रही। मधुकरमुनि ने प्रथम दिन यानि 30 सितम्बर को उपवास किया। दूसरे दिन 1 अक्टूबर, 2008, आश्विन शुक्ला 2, बुधवार को जागृत अवस्था में उनको तिविहार संथारा करवाया, जो 1 घंटा 27 मिनट का आया। आलोयणा, शरण आदि के साथ पंडित-मरण, समाधि-मरण प्राप्त किया। मुनि जीवन को धन्य-धन्य बना लिया। मेरे लिए अतिरिक्त प्रसन्नता का एक कारण यह बना कि पूज्यश्री के निर्देशानुसार मुझे उनको यावज्जीवन के लिए संथारा करवाने का अवसर मिला। उस समय मेरे शरीर का कण-कण इस प्रकार रोमांचित हुआ तथा पुलकित हुआ कि जिसकी मैं कल्पना भी नहीं कर सकता।

मुनि मधुकरजी बहुत भाग्यशाली संत थे। उनके सभी सहवर्ती संतों ने, विशेषकर मुनि आलोककुमारजी व मुनि जबूंकुमारजी ने सेवा का अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया। पूज्यवरों की कृपा से सहयोगी संतों द्वारा जो इनकी सेवा हुई, वह गजब की थी।

उदयपुर का चतुर्मास संपन्न कर 25 दिसम्बर को सुजानगढ़ में पूज्यवरों के दर्शन किए और शासन गौरव मुनि मधुकरजी के पंडित-मरण आदि के बारे में पूज्यवरों को अवगति दी।

एक पल का भी भरोसा नहीं

संघमुक्त एकाकी साधक संत अमिताभ (मुनिश्री मीठालाल) इन वर्षों में उदयपुर में ही साधना कर रहे हैं। हम कई संत चतुर्मास के बाद उनसे मिलने गए। संतों ने ध्यान संबंधी कई जिज्ञासाएं कीं। इस चर्चा प्रसंग में मैंने पूछा–'मेरे जीवन के 78 वर्ष संपन्न होने जा रहे हैं। 79वें वर्ष से साधना के कुछ विशेष प्रयोग प्रारम्भ करने जा रहा हूं। आपकी इस लंबी साधना की निष्पत्ति क्या रही? यह मैं जानना चाहता हूं।' दूसरे दिन श्री फतहलालजी पोरवाल द्वारा उनका पत्र प्राप्त हुआ। जो इस प्रकार है–'79वें वर्ष की प्रतीक्षा साधक कर नहीं सकता। एक पल का भी भरोसा नहीं। कब शरीर से अपना संबंध छूट जाए। इसलिए आज से नहीं, इसी क्षण से निरंतर सजगता या सहज कुंभक का अभ्यास मेरी साधना का निचोड़ है। संप्रदाय या आचार्य का राग भी अन्यान्य राग से कम बाधक नहीं। महावीर और गौतम का संस्मरण स्मृति में होगा ही।'

'नियति तारकमुनि को निरंतर सजगता का वरदान दे।' **–अमिताभ**

वर्धमान संयम, तप आराधना

साधना के प्रवहमान एक दशक में दो वर्ष शेष हैं। अंत:करण में एक भाव जागा कि अगले दो वर्षों में कुछ और अधिक तीव्रता के साथ साधना के क्रम को आगे बढ़ाना चाहिए। इस चिंतन की पूरी रूप-रेखा तैयार कर उसे 21 जनवरी, 2009, बीदासर में पूज्यश्री महाप्रज्ञजी के करकमलों में प्रस्तुत की। जो निम्न प्रकार है–

लक्ष्य–वीतरागता की ओर तीव्रता के साथ प्रस्थान।

65 वर्षीय मुनि जीवन की चर्या में ज्ञात-अज्ञात प्रमाद की आचार्यप्रवर द्वारा आलोचना के बाद प्रस्तुत साधना क्रम प्रारंभ करना। भविष्य में यथासंभव ज्ञात प्रमाद का तत्काल प्रायश्चित्त करना।

लक्ष्य एक-प्रयोग अनेक

बाह्य जगत से निवृत्ति का तथा भीतरी जगत में प्रवृत्ति का अभ्यास अर्थात् सतत जागरूकता का अभ्यास।

1. ठाणेणं-कायगुप्ति, कायोत्सर्ग-कायिक ध्यान।
2. मोणेणं-वचनगुप्ति, मौन-वाचिक ध्यान।
3. झाणेणं-मनगुप्ति, चित्त की निर्मलता-मानसिक ध्यान।

❖ पुनः-पुनः कायोत्सर्ग।

❖ एक से तीन घंटा मौन।

❖ एक-दो घंटा से क्रमशः तीन घंटा ध्यान।

❖ अप्पभासी–मितभाषण। आवश्यकतानुसार परिमित एवं मधुर बोलने का अभ्यास।

❖ मियासणे-मित आहार। भूख से कम खाने का अभ्यास।

❖ आगम आदि ग्रंथों का स्वाध्याय।

❖ 16 भावनाओं का चिंतन।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

❖ तप के 12 प्रकारों एवं दस पच्चक्खाण आदि के यथासंभव प्रयोग।

❖ महीने में एक बार खड़े-खड़े एकासन करना और उसी समय पानी पीना। {नोट: लगभग डेढ़ वर्ष तक यह प्रयोग चला।}

❖ श्वासप्रेक्षा, शरीरप्रेक्षा, विचारप्रेक्षा, कुंभक आदि में से किसी एक-दो का लंबे समय तक सघनता के साथ अभ्यास करना तथा अनुप्रेक्षा का प्रयोग भी करना।

❖ जयं चरे, जयं चिट्ठे, जयमासे, जयं सये। जयं भुंजंतो भासंतो, पावं कम्मं न बंधई। दसवै. 4/9. यतनापूर्वक चलने आदि क्रियाओं से पाप का बंधन नहीं होता। यह भाव क्रिया, जागरूकता का प्रयोग है। चलने, खड़े रहने आदि क्रियाओं को यतना-जानकारीपूर्वक करना। क्रिया हो रही है, मैं केवल देख रहा हूं, ज्ञाता-द्रष्टा भाव का अभ्यास। यह आगम गाथा मेरी साधना का मुख्य आलंबन है।

❖ प्रत्येक प्रयोगों के साथ भाव क्रिया का अभ्यास सबसे महत्त्वपूर्ण है, जो निष्पत्ति प्रदायक है।

❖ इनके अतिरिक्त और भी प्रयोग जो पूज्यश्री द्वारा निर्दिष्ट होंगे।

निष्पत्ति

इन प्रयोगों की निष्पत्ति यह आनी चाहिए–राग, द्वेष, कषाय का अल्पीकरण, उपशम, भाव-विशुद्धि, स्वभाव में रमण, मैत्री, क्षमा आदि के विकास के साथ वेदना में द्रष्टा भाव, साक्षी भाव का विकास आदि। (परिचर्चा एवं कुछ परिवर्तन के साथ आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने इस साधना पद्धति को स्वीकृति प्रदान की।)

दायित्व मुक्ति पत्र

नम्र निवेदन-प्रेक्षा प्रणेता, अध्यात्मयोगी आचार्यश्री महाप्रज्ञजी! 26 जनवरी, 2001 को मैंने अपना 71वां जन्मवर्ष प्रवेश कुछ संकल्पों के साथ किया था। इन आठ वर्षों के आधार पर यह तीव्रता से महसूस किया कि आत्मसाधना के विशेष प्रयोगों के लिए अग्रगण्य के दायित्वों से मुक्त होना नितांत जरूरी ही नहीं, अपितु अति आवश्यक है। इसलिए जीवन के संध्याकाल में इस साधनाक्रम को दायित्वों से मुक्त होकर ही गतिशील बनाना है। मुझे आत्मविश्वास है कि इसके लिए आचार्यश्री की आज्ञा प्राप्त होगी ही। अध्यात्म के पथदर्शक आचार्यप्रवर मेरे इस निवेदन को आत्मा की आवाज समझकर दायित्व मुक्त भावना को साकार रूप देने का अनुग्रह करवाएंगे।

21 जनवरी, 2009, बीदासर (राजस्थान) **निवेदक:–'एगो मे सासओ अप्पा' का आराधक-मुनि ताराचन्द**

यह पत्र पढ़ लेने के बाद पूज्यवर ने फरमाया–'अग्रणी का दायित्व लगभग मुनि सुमतिकुमारजी संभाल ही रहे हैं, फिर कठिनाई क्या है?' मैंने कठिनाई की बात प्रस्तुत की, किंतु वह मान्य नहीं हुई।

अध्यात्म के नए सूर्य का उदय

27 फरवरी, 2009, विक्रम संवत् 2065, माघ शुक्ला एकम, मंगलवार का मंगल दिन आ गया। 79वें जन्मवर्ष के उपलक्ष्य में सूर्योदय की पावन प्रभात बेला में आचार्यश्री एवं युवाचार्यश्री ने परम प्रसन्नतापूर्वक मंगल आशीर्वाद दिया और मंगल पाठ के साथ अग्रिम वर्षों के लिए सुचिंतित साधना का उपक्रम प्रारंभ हो गया।

त्रिदिवसीय अनुष्ठान

27 जनवरी - चौविहार उपवास (चउत्थ भक्त), पूर्ण मौन के साथ जप, स्वाध्याय, ध्यान आदि के प्रयोग।

28 जनवरी - बीयासना-दो समय आहार। मौन....आदि।

29 जनवरी - एकासन-खड़े-खड़े, उसी समय पानी। मौन...आदि।

इन तीन दिनों में नमस्कार महामंत्र, लोगस्स, आरोग्ग...। चंदेसु.... सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु। आगम गाथाओं का, चौबीसी, भक्तामर आदि का स्वाध्याय। श्वासप्रेक्षा, ध्यान आदि का क्रम व्यवस्थित चला।

संतों की जिज्ञासा

जब 2 फरवरी, 2009, मर्यादा महोत्सव के दिन हम संतों के लिए आचार्यश्री ने दिल्ली चतुर्मास की घोषणा की, तब कई संतों ने मुझे पूछा–'मुनिश्री! आपने जो विशेष साधना के प्रयोग प्रारम्भ किये हैं और इधर दिल्ली प्रवास कैसे अनुकूल रहेगा?' मैंने कहा–'मेरे चिंतन का एक कोण यह है कि मेरे सहयोगी संतों ने भारत की राजधानी दिल्ली को देखा नहीं, अत: दिल्ली जाने की भावना है। अब पूज्यश्री ने सहज ही दिल्ली का फरमा दिया तो मुझे अपनी प्रवहमान साधना को विराम न देकर द्रव्य, क्षेत्र के अनुसार अपने भावों को तदनुकूल बनाकर किंचित् परिवर्तन के साथ चल रहे क्रम को तो आगे बढ़ाना ही है। दूसरी बात–जो संत लंबे समय से मेरी साधना में अनन्य सहयोगी बने हुए हैं, व्यावहारिक धरातल पर उनकी भावना को रखना मेरा कर्तव्य बन जाता है।'

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

प्रज्ञापुरुष का अमृत संदेश

00 फरवरी, 1   8, विक्रम संवत् 1 54, फाल्गुन कृष्णा 1 को पूज्यवरों का आशीर्वाद लेकर शाहदरा (दिल्ली) चतुर्मास के लिए प्रस्थान किया। उस समय आचार्यश्री ने महती कृपा कर मेरी साधनाकालीन 'जागरूकता' को सतत प्रेरित करने वाला तथा उसमें प्राण-प्रतिष्ठा करने वाला संदेश प्रदान करवाया। जो निम्न प्रकार से है–

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी! तुम्हारी साधना उत्कर्ष पर है, और आगे बढ़े। 1. रहें भीतर, जीएं बाहर 2. सुभेणं परिणामेणं, सुभेणं अज्झवसाएणं, लेस्साए विसुज्झमाणीए 3. भाव क्रिया-अप्रमाद का सिंहद्वार 4. भाव विशुद्धि-अप्रमाद का सिंहद्वार 5. एगो मे सासओ अप्पा।

11 फरवरी, 2009, बीदासर (राजस्थान) **आचार्य महाप्रज्ञ**

प्रसन्नता में प्रसन्नता

11 फरवरी, तेरापंथ दर्शन मनीषी मुनिश्री सुमेरमलजी (लाडनूं), सह-अग्रणी मुनि उदितकुमारजी आदि पांच संतों ने लुधियाना (पंजाब) चतुर्मास के लिए और मैंने तथा सह-अग्रणी मुनि सुमतिकुमारजी आदि चार संतों ने शाहदरा (दिल्ली) के लिए पूज्यवरों का आशीर्वाद लेकर प्रस्थान किया। युवाचार्यश्री संत मंडली के साथ अपने दीक्षा प्रदाता मुनिश्री सुमेरमलजी (लाडनूं) को विशेष सम्मान देने की दृष्टि से तेरापंथ भवन से कुछ दूर तक पधारे। वह प्रसन्नतामय वातावरण उस समय और अधिक प्रसन्नता से सराबोर हो गया, जब युवाचार्यश्री ने तत्काल स्वरचित निम्नलिखित एक संस्कृत श्लोक फरमाया–

'विभूती धर्मसंघस्य, शोभते गण-मंडले। जंबूद्वीपे सुमेरुः स्यात्, तारकाः गगने यथा।'

हमारे धर्मसंघ के गण गगनांगण में (मुनि सुमेरमलजी और मुनि ताराचन्दजी) दोनों विभूतियां उसी प्रकार शोभित हो रही है, जिस प्रकार जंबू द्वीप में सुमेरु पर्वत और आकाश में तारा मंडल।

12 फरवरी को छापर आए। नव अग्रगण्य मुनि आलोककुमारजी (लोणार) भी आचार्यश्री का आशीर्वाद लेकर हमारे साथ ही छापर आये थे। उन्होंने वृद्ध संत सेवाकेन्द्र की जिम्मेदारी संभाली। 13 से 18 फरवरी तक (रतनगढ़ तक) मुनिश्री सुमेरमलजी (लाडनूं) के साथ रहे। उन्होंने तथा उदितमुनि ने दिल्ली तथा साधना से संबंधित अनेक प्रकार की जानकारी प्रदान की।

6 दिन का चूरू प्रवास कर 2 मार्च को आचार्यश्री महाप्रज्ञजी की जन्मभूमि टमकोर पहुंचे। वहां विराजित साध्वी उज्ज्वलकुमारीजी आदि साध्वियां एवं विद्यालय के शिक्षण कार्य में संलग्न समणी निर्देशिका प्रतिभाप्रज्ञाजी आदि समणियों द्वारा पहले से ही आध्यात्मिक मिलन का कार्यक्रम निश्चित किया हुआ था। पंचविध धर्मसंघ की उपस्थिति में वक्ताओं ने अपने-अपने विचार प्रस्तुत किए। विषय रहे-संत समागम, आचार्य महाप्रज्ञ एवं उनकी जन्मभूमि।

दिल्ली प्रवेश और स्वागत कार्यक्रम

4 मार्च को टमकोर से राजगढ़, बहल, भिवानी, रोहतक आदि क्षेत्रों में होते हुए 28 को दिल्ली प्रवेश किया और 29 को वहां की तेरापंथ सभा, महिला मंडल, एवं तेयुप द्वारा संतों और साध्वीश्री यशोधराजी आदि साध्वियों का सामूहिक स्वागत कार्यक्रम रखा गया। अनेक वक्ताओं के बाद मैंने भी आगम-वाणी के आधार पर अपने विचार व्यक्त किए तथा अपनी प्रवहमान साधना के बारे में इसलिए संक्षिप्त जानकारी दी कि दिल्ली के श्रावक समाज को ज्ञात रहे। साथ-साथ यह भी कहा–आपको प्रवचन आदि धार्मिक कार्यक्रमों की प्रेरणा में कोई कमी महसूस नहीं होगी। आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के शब्दों में–'साध्वी यशोधराजी हमारे धर्मसंघ की एक अच्छी प्रवक्ता साध्वी है।' आपको ऐसी विदुषी साध्वियों का सान्निध्य प्राप्त होगा। संतों की ओर से प्रबल पुरुषार्थी अग्रगण्य मुनि सुमतिकुमारजी, मुनि देवार्यकुमारजी, मुनि आदित्यकुमारजी का भी प्रेरणा-पाथेय मिलता ही रहेगा। मैं भी समय-समय पर आपके लिए उपस्थित रहने का भाव रखता हूं। श्रद्धाशील, प्रबुद्ध श्रावक-श्राविकाओं ने मेरी बात को न केवल शांतिपूर्वक सुना, अपितु समय-समय पर साधना की अनुमोदना भी की।

इस साधना क्रम में व्याख्यान देना लगभग स्थगित रखा था, किंतु विहार करते समय पूज्यश्री ने फरमाया–'केवल रविवार का व्याख्यान तुम्हारा भी होना चाहिए, ताकि दिल्लीवालों को भी लाभ मिले, चाहे आधा घंटा का ही हो।' इस गुरु आज्ञा को मैंने शिरोधार्य किया।

विविध कार्यक्रम

3 अप्रैल, लालकिला के विशाल ग्राउण्ड में स्थानकवासी समुदाय के मुनिश्री सुमतिप्रकाशजी की दीक्षा स्वर्ण जयंती के उपलक्ष्य में कार्यक्रम समायोजित था। हजारों भाई-बहिनें तथा लगभग सौ साधु-साध्वियां उपस्थित थे। उसमें हम भी आमंत्रित थे। संक्षेप में प्रवचन भी दिया।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अणुव्रत भवन (दीनदयाल उपाध्याय मार्ग) में 7 अप्रैल को महावीर जयंती और 12 अप्रैल को दिल्ली की ज्ञानशालाओं का वार्षिक अधिवेशन तीनों सिंघाड़ों के सानिध्य में संपन्न हुआ। विद्यार्थियों, प्रशिक्षकों एवं अभिभावकों की अच्छी उपस्थिति में सभी क्षेत्रों की ज्ञानशालाओं के छात्र-छात्राओं की अभिव्यक्ति भी प्रशंसनीय रही।

13 अप्रैल से 2 मई तक दक्षिण दिल्ली (नई दिल्ली) की अनेक कॉलोनियों में विचरण हुआ। इस बीच पड़िहारा के श्रावक श्री हनुमानमलजी सुराणा 'बंगाली' को संथारे में दर्शन देने सूर्यनगर (उ.प्र.) में मैं और आदित्यमुनि गए। उनको आलोचना करवाई तथा आराधना का स्वाध्याय करवाया। 15 किलोमीटर गए और 20 कि.मी. का विहार कर वापस आए। हमारा यह अतिरिक्त श्रम उनके लिए कल्याणकारी बन गया।

के.सी. जैन द्वारा उनके बंगले में ही रात्रि में विशिष्ट, प्रबुद्ध व्यक्तियों के मध्य 'प्रेक्षाध्यान और तनाव प्रबंधन' विषय पर एक विचार गोष्ठी रखी गई, जो सरसता के साथ संपन्न हुई।

27 अप्रैल को अक्षय तृतीया का कार्यक्रम आर्य समाज भवन में संपन्न हुआ। जिसमें लम्बे समय से वर्षीतप करने वाली दो बहिनें उपस्थित थीं। उस दिन दिल्ली 'सृजनयात्रा स्मारिका' विमोचन का कार्यक्रम तेयुप द्वारा आयोजित था।

लगभग 20 दिनों के इस प्रवास में हमें रहने के लिए प्राय: ऐसे स्थान उपलब्ध हुए, जो खुले आकाश और नाना वृक्षों-लताओं से सुशोभित थे। मेरी साधना में ऐसे स्थानों का मुझे अच्छा सहयोग मिलता है।

पूर्वी दिल्ली में विचरण

3 मई को अणुव्रत भवन से यमुनापार लक्ष्मीनगर पहुंचे। स्वागत कार्यक्रम हुआ और भी क्षेत्रों में योजनानुसार सारे कार्यक्रम व्यवस्थित शुरू हो गए। लगभग हजार परिवार इस क्षेत्र में व्यवसायार्थ प्रवास कर रहे हैं। उन सबको धार्मिक प्रेरणा से प्रेरित करना चतुर्मास करने वाले साधु-साध्वियों का कर्तव्य होता है। अग्रणी मुनि सुमतिकुमारजी, देवार्यमुनि एवं आदित्यमुनि ने पूरी तत्परता के साथ जनसंपर्क, प्रवचन, तत्त्वज्ञान आदि के कार्यक्रम सुचारु रूप से संचालित किए। लगभग 21 कॉलोनियों, उपनगरों आदि में श्रावक समाज को धार्मिक प्रेरणाएं दीं।

चातुर्मासिक मंगल प्रवेश

विक्रम संवत् 2066, सन् 2009 का चातुर्मासिक प्रवेश ओसवाल भवन (विवेक विहार-शाहदरा) में हुआ। तेरापंथ सभा, तेयुप, महिला मंडल आदि के सहयोग से चतुर्मास में होने वाले सारे कार्यक्रम मुनि सुमतिकुमारजी आदि संतों के सान्निध्य में सम्यक् प्रकार से प्रारम्भ हो गए। मैं तो केवल रविवार को करीब आधे घंटे के लिए जनता के मध्य जाता और कुछ बोलता। जो बोलता, वह मैं स्वयं भी सुनता और उससे प्रेरणा प्राप्त करता।

वेदना में साक्षी भाव का अभ्यास

2 जुलाई के बाद मेरा स्वास्थ्य कुछ अनुकूल कम रहा। डॉक्टरी जांच तथा दवा लेने से 2 सप्ताह बाद कुछ ठीक अनुभव हुआ। मेरे अस्वास्थ्य की बात जब पूज्यश्री को ज्ञात हुई तब शासनसेवी श्री कन्हैयालालजी छाजेड़ (श्रीडूंगरगढ़) द्वारा संदेश प्राप्त हुआ। आचार्यश्री का वात्सत्यभरा संदेश पढ़कर मेरा मन प्रसन्नता से सराबोर हो गया।

मुनि ताराचन्दजी! ज्ञात हुआ है कि अतिरेचन और कफ का आधिक्य दोनों समस्याएं सामने आई हैं। स्वास्थ्य के प्रति अधिक ध्यान दो। कोई भी प्रयोग चलता हो या चल रहा हो, स्वास्थ्य को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए।

मुनि सुमतिकुमारजी आदि सहवर्ती साधु इस बात पर अधिक जागरूक रहें। ऐसा प्रयत्न करें, जिससे मुनि ताराचन्दजी शीघ्र स्वस्थ हों। श्रावक समाज का योग भी बराबर बना रहे।

6.7.2009. जै.वि.भा. लाडनूं। **आचार्य महाप्रज्ञ**

मैंने भी अपनी भावना श्री लक्ष्मीपतजी छाजेड़ के माध्यम से प्रेषित की।

पूज्यश्री का स्वास्थ्य संबंधी जागरूकता का संदेशामृत प्राप्त हुआ। प्रसन्नता के साथ कष्ट के लिए क्षमाप्रार्थी हूं। अब और अधिक सावधानी रखने का भाव है। स्वास्थ्य क्रमश: सुधार पर है। आचार्यप्रवर! इस अल्पकालीन शारीरिक वेदना को भोगा कम से कम और केवल देखने का अभ्यास किया। इसमें मैंने किंचित् सफलता का अनुभव किया। यह मेरे लिए श्रेयस्कर रहा। आपश्री के आशीर्वाद से यह स्थिति क्रमश: वर्धमान रहे। संतों और श्रावकों की सजगता में कोई कमी नहीं है। मेरे पूर्व के प्रमाद का परिणाम तो मुझे ही भोगना पड़ेगा।

8 जुलाई, ओसवाल भवन-विवेक विहार-शाहदरा। **मुनि ताराचन्द**

विशेष प्रयोग की दृष्टि से मैंने एक निवेदन करवाया–आचार्यश्री! 21 सितम्बर से एकमासिक शिविर में विशेष प्रयोग करने जा रहा हूं। जिसमें प्रथम प्रहर में स्वाध्याय क्रमश: ध्यान, आहार पुन: स्वाध्याय। उसी प्रकार रात्रि में केवल आहार के स्थान पर शयन (यह

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

प्रयोग कुछ परिवर्तन के साथ) मेरी प्रबल भावना है कि इस शिविरकाल में मैं गोचरी स्वयं लाऊं। केवल आचार्यप्रवर की अनुमति की प्रतीक्षा है।

11 सितम्बर, विवेक विहार-शाहदरा। **ध्यानाराधकः मुनि ताराचन्द**

संदेश–'प्रयोग किया जा सकता है, बशर्ते-स्वास्थ्य का ध्यान रखकर। प्रथम प्रहर में बिल्कुल नहीं लेना, यह उपयुक्त नहीं है। अवस्था को ध्यान में रखते हुए स्वल्प मात्रा में लेना उचित रहेगा। ताकि वायु आदि विकारों से बचा जा सकता है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में प्रयोग किया जाना चाहिए। गोचरी सुमतिमुनि करें, उससे कोई फर्क नहीं पड़ेगा। अत: गोचरी वाला चिंतन स्थगित रखा जाए तो उचित रहेगा। स्वास्थ्य और अध्यात्म-साधना वर्धमान रहे, इसी मंगल भावना के साथ।' आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के निर्देशानुसार–जयमुनि।

संदेश पढ़कर एक क्षण के लिए चिंतन आया, तत्काल दूसरे क्षण ही विचार उभरा–'गुरुणामाज्ञामविचारणीया।' जैसा आचार्यश्री का इंगित प्राप्त हुआ उसी के आधार पर 21 सितम्बर, 2008, आश्विन शुक्ला 3 को सूर्योदय के साथ ही संतों से विदा लेकर ओसवाल भवन में ही एकांत कक्ष में चला गया और एकमासिक शिविर के मौन, स्वाध्याय, ध्यान आदि के निश्चित किये हुए प्रयोग प्रारम्भ हो गए। ध्यान के प्रयोगों में कायोत्सर्ग, अन्तर्यात्रा, समवृत्ति श्वासप्रेक्षा के साथ श्वासप्रेक्षा और कभी-कभी शरीरप्रेक्षा का सघनता से अभ्यास किया। दिन में तथा रात्रि में दूसरा प्रहर ध्यान के लिए आरक्षित था, किंतु रात्रिकालीन ध्यान का क्रम व्यवस्थित नहीं चल सका। इसके मुख्य दो कारण थे–1. निंद्रा-विजय नहीं कर पाया। 2. मन के जिद्दीपन का मेरी अन्तर्भावना पर हावी हो जाना। मूल कारण तो दर्शनावरणीय कर्म का प्रबल उदयभाव मानना चाहिए।

अनुप्रेक्षा की दृष्टि से कायोत्सर्ग-प्रतिमा का बहुत अनुकूल असर हुआ। मैं संकल्पित हो गया कि कम से कम तीन मास तक प्रतिदिन इसका प्रयोग करना ही है।

कायोत्सर्ग-प्रतिमा कैसे प्राप्त हुई?

सन् 2009 के बीदासर मर्यादा महोत्सव से पूर्व सुजानगढ़ में आचार्यश्री के निर्देशानुसार साध्वीप्रमुखाश्रीजी तथा मुख्य नियोजिकाजी का सान्निध्य प्राप्त हुआ। मैंने अपनी भावी साधना व प्रयोगों के बारे में बताया और कहा–'इसमें आपश्री के साधनाजनित अनुभवों से मैं लाभान्वित होना चाहता हूं।' उन्होंने अपने जीवन के कुछ अनुभव बताते हुए मेरी साधना के प्रति सद्भावना व्यक्त की और मेरे निकट बैठे आदित्यमुनि की ओर निहारते हुए साध्वीप्रमुखाजी ने पूछा–'मुनिश्री का साधनामय जीवन कौन लिख रहा है?' मैने कहा–'71वें जन्मवर्ष प्रवेश के बाद मैंने लिखना प्रारम्भ किया है, किंतु प्रतिदिन नहीं। जब लिखना अपेक्षित लगता है, तब लिख लेता हूं।'

मुख्य नियोजिकाजी ने पूछा–'क्या आपने कायोत्सर्ग-प्रतिमा का प्रयोग भी किया है?' मैंने कहा–'नहीं। वह कहां प्राप्त हो सकती है?' उन्होंने कहा–'जब हम समण श्रेणी में थीं, तब हम समणियों को कायोत्सर्ग-प्रतिमा का प्रयोग आचार्यप्रवर ने कई बार करवाया था। वह प्रति मेरे पास होनी चाहिए।' उन्होंने वह हस्तलिखित एक पृष्ठ का पन्ना आचार्यश्री को निवेदित किया। पूज्यश्री ने वह पन्ना मुझे देते हुए फरमाया–'यह प्रयोग वृत्तियों के परिष्कार एवं स्वभाव-परिवर्तन के लिए बहुत ही महत्त्वपूर्ण है।' वह इस प्रकार है–

1. कायोत्सर्ग-प्रतिमा

शरीर को स्थिर, शिथिल और तनाव मुक्त करें। पृष्ठरज्जु और गर्दन को सीधा रखें। मांसपेशियों को ढ़ीला छोड़ दें। चित्त को कंठ पर केन्द्रित करें और पूरे शरीर में शिथिलता का अनुभव करें।

संकल्प करें

तस्स उत्तरीकरणेणं पायच्छित्तकरणेणं विसोहीकरणेणं विसल्लीकरणेणं पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए ठामि काउस्सग्गं।

2. विवेक प्रतिमा

अपने स्वरूप को जानने के लिए विजातीय तत्त्वों का विवेक करें। चिंतन करें–

1. मैं क्रोध नहीं हूं, क्रोध मेरा स्वभाव नहीं है।
2. मैं मान नहीं हूं, मान मेरा स्वभाव नहीं है।
3. मैं माया नहीं हूं, माया मेरा स्वभाव नहीं है।
4. मैं लोभ नहीं हूं, लोभ मेरा स्वभाव नहीं है।
5. मैं भय नहीं हूं, भय मेरा स्वभाव नहीं है।
6. मैं शोक नहीं हूं, शोक मेरा स्वभाव नहीं है।
7. मैं घृणा नहीं हूं, घृणा मेरा स्वभाव नहीं है।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

8. मैं काम नहीं हूं, काम मेरा स्वभाव नहीं है।

9. मैं मिथ्यात्व नहीं हूं, मिथ्यात्व मेरा स्वभाव नहीं है।

प्रत्येक अनुभव के पश्चात् श्वास संयम का प्रयोग करें। स्वयं को भावित करें। पूरी जागरूकता के साथ, एकाग्रता के साथ प्रयोग करें।

3. अइअं पडिक्कमामि

मैं अतीत का प्रतिक्रमण करता हूं।

1. यदि मैंने क्रोध किया हो तो मनसा, वाचा, कर्मणा तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।
2. यदि मैंने मान किया हो तो मनसा, वाचा, कर्मणा तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।
3. यदि मैंने माया की हो तो मनसा, वाचा, कर्मणा तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।
4. यदि मैंने लोभ किया हो तो मनसा, वाचा, कर्मणा तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।
5. यदि मैंने भय का संवेदन किया हो तो मनसा, वाचा, कर्मणा तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।
6. यदि मैंने शोक किया हो तो मनसा, वाचा, कर्मणा तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।
7. यदि मैंने घृणा की हो तो मनसा, वाचा, कर्मणा तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।
8. यदि मैंने काम का सेवन किया हो तो मनसा, वाचा, कर्मणा तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।
9. यदि मैंने मिथ्यात्व का व्यवहार किया हो तो मनसा, वाचा, कर्मणा तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

प्रत्येक अनुभव के पश्चात् श्वास संयम का अभ्यास करें। स्वयं को भावित करें। पूरी जागरूकता के साथ, एकाग्रता के साथ प्रयोग करें।

4. पडिपुण्णं संवरेमि

मैं वर्तमान का संवर करता हूं।

1. अनुभव करें – क्षमा का विकास हो रहा है।
2. अनुभव करें – मृदुता का विकास हो रहा है।
3. अनुभव करें – ऋजुता का विकास हो रहा है।
4. अनुभव करें – संतोष का विकास हो रहा है।
5. अनुभव करें – अभय का विकास हो रहा है।
6. अनुभव करें – आनंद का विकास हो रहा है।
7. अनुभव करें – मैत्री का विकास हो रहा है।
8. अनुभव करें – ब्रह्मचर्य का विकास हो रहा है।
9. अनुभव करें – सम्यक्त्व का विकास हो रहा है।

प्रत्येक अनुभव के पश्चात् श्वास संयम का प्रयोग करें। स्वयं को भावित करें। पूरी जागरूकता के साथ, एकाग्रता के साथ प्रयोग करें।

5. अणागयं पच्चक्खामि

मैं भविष्य का प्रत्याख्यान करता हूं।

1 मैं क्रोध नहीं करूंगा।

2 मैं मान नहीं करूंगा।

3 मैं माया नहीं करूंगा।

4 मैं लोभ नहीं करूंगा।

5 मैं भय का संवेदन नहीं करूंगा।

6 मैं शोक नहीं करूंगा।

7 मैं घृणा नहीं करूंगा।

8 मैं काम का सेवन नहीं करूंगा।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

9 मैं मिथ्यात्व का व्यवहार नहीं करूंगा।

प्रत्येक अनुभव के पश्चात् श्वास संयम का प्रयोग करें। स्वयं को भावित करें। पूरी जागरूकता के साथ, एकाग्रता के साथ प्रयोग करें।

6. स्वरूपानुभव

मैं चैतन्यमय हूं – अनुभव करें – मेरी प्रज्ञा जाग रही है।

मैं आनंदमय हूं – अनुभव करें – मानसिक स्वास्थ्य विकसित हो रहा है।

मैं शक्ति संपन्न हूं – अनुभव करें – मेरी सहिष्णुता बढ़ रही है।

7. सप्तधातु प्रेक्षा

मेरा शरीर स्वस्थ बन रहा है। साधना के अनुकूल बन रहा है। रक्तवाही संस्थान पर ध्यान केन्द्रित करें। संकल्प करें–रक्त शुद्ध हो रहा है। मांसपेशियां, मेद, अस्थि, मज्जा, वीर्य, ओज पर ध्यान करें, स्वस्थता का संकल्प करें।

(इन वाक्यों के बाद मैंने अपने लिए 3 वाक्यों को और जोड़ा–1.मैं हास्य नहीं हूं, हास्य मेरा स्वभाव नहीं है। 2. मैं प्रमाद नहीं हूं, प्रमाद मेरा स्वभाव नहीं है। 3. मैं वेदना नहीं हूं, वेदना मेरा स्वभाव नहीं है। तीनों कालों में यथास्थान इनका चिंतन करना।)

वीतरागता का मुख्य बाधक तत्त्व मोहनीय कर्म है। उसके कारण ही आत्मा अनेक कर्मों से आवृत है। आत्मा को अनावृत करने के लिए कायोत्सर्ग-प्रतिमा का प्रयोग बहुत उपयोगी हो सकता है। ऐसा मेरा स्वल्पकालीन अनुभव है।

इस शिविर में एक एकासन खड़े-खड़े करना तथा उसी समय पानी पीना एवं एक प्रयोग अहर्निश अम्बर रहित रहने का भी किया।

कभी-कभी ऐसी स्थिति भी बनी कि केवल बैठे रहना इतना अच्छा लगा कि मन उसमें लीन हो जाता–11,12,1 बजे का समय हो गया, फिर भी शरीर-स्थिर, वाणी-मौन और मन शांत इतना शांत कि सहज समाधि की स्थिति निर्मित हो जाती। कभी-कभी ऐसी जटिल स्थिति भी बनी कि तीव्र प्रयत्न करने के बाद भी मन अपने विकल्पों को छोड़ने के लिए तैयार नहीं होता। ऐसा लगता है कि अपूर्णता की अवस्था में इस प्रकार के आरोह-अवरोह होने के ही हैं। 21 अक्टूबर, 2009 को एकमासिक शिविर अनेक अनुभवों के साथ संपन्न हो गया।

गुरुकृपा से मुनि सुमतिकुमारजी आदि संतों का सहयोग सदा प्राप्त है। दिल्ली के श्रावक समाज का भी उचित सहयोग मिला। सबके प्रति मंगल भावना।

चतुर्मास संपन्न होते ही 3 नवम्बर को विवेक विहार-शाहदरा से प्रस्थान कर कृष्णानगर, लक्ष्मीनगर, अक्षरधाम होते हुए नोएडा (उ.प्र.), फरीदाबाद, गुड़गांव (हरियाणा) के श्रावक समाज को प्रेरणा पाथेय देते हुए अध्यात्म साधना केन्द्र (महरौली) में दो सप्ताह का प्रवास किया। जिसमें शिविर, तेरापंथ प्रोफेशनल फोरम आदि के कई कार्यक्रम आयोजित हुए। वहां स्वामी धर्मानंदजी लम्बे समय से साधना केन्द्र की गतिविधियों का संचालन कर रहे हैं। हम संतों को भी उनके द्वारा कई नई बातों की जानकारी मिली। 14 जनवरी को ग्रीन पार्क में साध्वी यशोधराजी आदि साध्वियों का आतिथ्य स्वीकार कर 15 को अणुव्रत भवन (नई दिल्ली) में प्रवेश किया।

आठवें दशक के अंतिम वर्ष मे प्रवेश

16 जनवरी, 2010, (विक्रम संवत् 2066, माघ शुक्ला एकम) 80वें जन्मवर्ष में प्रवेश हुआ। चौविहार उपवास के साथ एकांत, मौन, स्वाध्याय, ध्यान आदि के द्वारा प्रथम दिन प्रारंभ। गत वर्ष में 'वर्धमान संयम-तप आराधना' का उपक्रम निश्चयानुसार अच्छे ढ़ंग से व्यवस्थित चला। इस वर्ष में भी कुछ संशोधित रूप के साथ आगे बढ़ना है। ध्यान की दृष्टि से कायोत्सर्ग, अन्तर्यात्रा के साथ तीन-तीन माह तक क्रमशः दीर्घश्वासप्रेक्षा, शरीरप्रेक्षा, चैतन्यकेन्द्रप्रेक्षा का विशेष अभ्यास करना है। कायोत्सर्ग-प्रतिमा आदि अनुप्रेक्षा के प्रयोग भी यथावत् रखने हैं। स्वाध्याय की दृष्टि से शेष आगम ग्रंथों तथा अन्य साहित्य का वाचन, प्रतिदिन भक्तामर, चौबीसी का स्वाध्याय तथा निश्चित मंत्रादि का जप। तप की दृष्टि से-यथासंभव हर शुक्ला 13 को उपवास एवं कृष्णा 13 को खड़े-खड़े एकासन और उसी समय पानी पीना। प्रति अष्टमी यथावसर छह विगय वर्जन या पांच विगय वर्जन करते रहना। तीनों समय के आहार में भी यथासंभव ऊनोदरी करना। वाणी संयम-मध्याह्न के लगभग 3:30 बजे से प्रतिक्रमण तक मौन। शेष समय में भी अनावश्यक बोलने से बचना। आवश्यक बोलना हो तो शांत भाव से धीमें-धीमें तथा मधुर बोलने का अभ्यास करना। संतों को, विशेषकर बालमुनि आदित्यकुमारजी को जब भी कुछ कहना आवश्यक हो तो शांत भाव से कहना, मन में भी उत्तेजना के भाव न आएं इसमें विशेष जागरूक रहना।

'शासनश्री' मुनि राकेशकुमारजी का स्वागत

अणुव्रत भवन के कई दिनों के प्रवास में दिल्ली ज्ञानशाला का वार्षिक अधिवेशन, मर्यादा महोत्सव आदि के कार्यक्रम संपन्न कर 27 से 2 फरवरी तक शास्त्रीनगर में आसकरणजी आंचलिया (गंगाशहर) के नवनिर्मित मकान (किरणकुंज) में प्रवास रहा। उसके बाद अनेक कॉलोनियों में रहते हुए मॉडल टाउन के (उत्तर मध्य दिल्ली) तेरापंथ भवन में तथा शालीमार बाग (आस्था भवन) में कई दिनों

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

का प्रवास हुआ। 13 मार्च को पीतमपुरा (खिलौनीदेवी धर्मशाला) में राजस्थान से समागत अणुव्रत प्राध्यापक मुनि राकेशकुमारजी आदि संतों के स्वागत का तथा नवनिर्वाचित दिल्ली सभा का शपथ ग्रहण समारोह आदि कई कार्यक्रम हुए।

एपीजे अब्दुल कलाम के साथ

आचार्यश्री महाप्रज्ञजी का जन्मदिन तारीख के अनुसार 14 जून को पड़ता है। अणुव्रत विश्व भारती के पदाधिकारियों ने यह निर्णय लिया कि इस दिन को हम व्यापक स्तर पर मनाएंगे। तदनुसार दिल्ली के सुप्रसिद्ध फिक्की ओडिटोरियम में भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम की अध्यक्षता में व मेरे तथा अणुव्रत प्राध्यापक मुनि राकेशकुमारजी के सान्निध्य में यह कार्यक्रम आयोजित किया गया। कलाम साहब ने आचार्य महाप्रज्ञ के प्रति श्रद्धापूर्ण विचार व्यक्त किए। अगले दिन अनेकों प्रमुख समाचार पत्रों में उन्हीं विचारों के आधार पर आचार्य महाप्रज्ञ के अवदानों की चर्चा की गई। संघ की अच्छी प्रभावना हुई।

नैतिक कर्तव्य

दिल्ली के विचरण में यह अनुभव हुआ कि कितने दूर-दूर क्षेत्रों में श्रावक समाज फैला हुआ है। उन सबको संभालना कठिन पड़ता है, फिर भी नीतिवान् साधु-साध्वियां अपना नैतिक कर्तव्य मानकर अपने विचरण का कार्यक्रम इस प्रकार नियोजित करते हैं, जिससे अधिक से अधिक श्रावक समाज की प्रतिलेखना हो सके। श्रमशील अग्रणी मुनि सुमतिकुमारजी ने भी कार्यकर्ताओं के माध्यम से वैसा ही उपक्रम निश्चित किया।

आचार्य महाप्रज्ञ चिकित्सालय और आचार्यश्री महाप्रज्ञ का महाप्रयाण

निश्चित कार्यक्रमानुसार 9 मई, 2010 को शालीमार बाग में दिल्ली नगर निगम द्वारा नवनिर्मित आचार्य महाप्रज्ञ चिकित्सालय के उद्घाटन का कार्यक्रम था। जिसमें श्रावक समाज के साथ हम संतों तथा नगर के अनेक प्रबुद्ध लोगों की उपस्थिति थी। कार्यक्रम बहुत ही गरिमामय वातावरण में एवं भव्यता के साथ अच्छी उपस्थिति मे संपन्न हुआ। इसके बाद चिकित्सालय का निरीक्षण कर हम संत पास में स्थित श्री नोरतनमलजी गिड़िया (बीदासर) के बंगले में आए और आहर कर विश्राम कर रहे थे।

अचानक सरदारशहर से समाचार प्राप्त हुआ कि आचार्यश्री महाप्रज्ञजी का महाप्रयाण–स्वर्गवास हो गया है। अकल्पित, अप्रत्याशित संवाद सुनकर सब सन्न और आश्चर्यचकित हो गए। ज्यों-ज्यों श्रावकों को ज्ञात हुआ संतों को बताने एवं दर्शन करने के लिए दूर-दूर से लोग आने लगे। सबके चेहरे गमगीन, वातावरण उदास, एक ही चर्चा, अचानक ऐसे कैसे हो गया? उत्तर कौन दे? सब निरुत्तर थे। अंतिम महाप्रयाण यात्रा में सम्मिलित होने के लिए श्रावक लोग अपनी-अपनी तैयारी में लग गए।

एक महान दार्शनिक, महायोगी, प्रज्ञापुरुष, ऋषितुल्य आचार्य इस धरा धाम से अलविदा कर गया। उन्होंने अपने दीर्घकालीन ध्यान प्रयोगों द्वारा वीतरागता का पथ प्रशस्त किया और जीवनभर अध्यात्म की अमृत वर्षा करते रहे। अपने महान गुरु आचार्यश्री तुलसी के नाम तथा काम को एवं उनके कल्याणकारी अवदानों को फैलाने में अहर्निश लगे रहे। उनकी अहिंसा यात्रा एक ऐतिहासिक धरोहर बन गई।

आचार्यश्री महाप्रज्ञ स्मृति सभा

दिल्ली तेरापंथ सभा द्वारा अणुव्रत भवन में आचार्य महाप्रज्ञ स्मृति सभा का बड़े रूप में कार्यक्रम आयोजित था, जिसमें दिल्ली की मुख्यमंत्री शीला दीक्षित आदि कई गणमान्य व्यक्ति उपस्थित थे। दिल्ली प्रवासी सभी साधु-साध्वियों ने अपने-अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित किए।

प्रो. महेन्द्रमुनि दिल्ली में

नवाचार्यश्री महाश्रमणजी के निर्देशानुसार मुनि महेन्द्रकुमारजी (मुम्बई) आदि चार संतों ने ज्येष्ठ मास की चिलचिलाती धूप में सरदारशहर से प्रस्थान किया और द्रुतगति से चलते हुए सलक्ष्य दिल्ली चतुर्मास के लिए प्रवेश किया। दिल्ली सभा द्वारा अणुव्रत भवन में उनके स्वागत का कार्यक्रम रखा गया। उसमें श्रावक समाज तथा साधु-साध्वियों के वक्तव्यों के बाद दिल्ली प्रवासी साधु-साध्वियों के नाम नवाचार्य श्री महाश्रमणजी द्वारा प्रदत्त संदेशों का वाचन किया गया तथा गुरुकुलवास के अनेक संस्मरण भी सुनाए।

राष्ट्रपति भवन में

प्रेक्षा प्राध्यापक मुनि महेन्द्रकुमारजी के व्यक्तिगत संपर्कों से व भाई श्री जब्बर चिण्डालिया के प्रयास से राष्ट्रपति भवन में राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा पाटिल की अध्यक्षता में व मेरे तथा प्रो. मुनि महेन्द्रकुमारजी के सान्निध्य में राष्ट्रपति भवन में एक कार्यक्रम आयोजित किया गया। कार्यक्रम का विषय था–आचार्य महाप्रज्ञजी की आत्मकथा के प्रथम भाग 'यात्रा एक अकिंचन की' का लोकार्पण। आदरणीया राष्ट्रपति ने आचार्यश्री के प्रति अच्छे विचार व्यक्त किए। कार्यक्रम के बाद पहले मुनि महेन्द्रकुमारजी के साथ व बाद में हम सभी संतों के साथ राष्ट्रपति का वार्तालाप हुआ। जिसमें उन्होंने आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के बारे में व तेरापंथ में चल रहे

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

जन कल्याणकारी कार्यक्रमों के बारे में जानकारी प्राप्त की। राष्ट्रपति ने राष्ट्र-निर्माण में वर्तमान आचार्यश्री महाश्रमणजी जो श्रम कर रहे हैं, उसके प्रति अपना अहोभाव प्रकट किया।

चतुर्मास के दो माह पीतमपुरा में

1 जुलाई, 1 0 को दिल्ली-पीतमपुरा (खिलौनीदेवी धर्मशाला) में चतुर्मास का प्रवेश हुआ। चतुर्मास में होने वाले सारे कार्यक्रम व्यवस्थित चले। प्रतिदिन के प्रवचन में लोगों की उपस्थिति और उत्साह वर्धमान रहा। पर्युषण के सिवाय मैं केवल रविवार को आधा-पौन घंटा बोलता। सारे कार्यक्रमों का संचालन सदा की भांति अग्रणी सुमतिमुनि आदि संतों द्वारा होता। स्थान खुला एवं हवाकारी होने से साताकारी रहा। व्याख्यान के सिवाय साधना की दृष्टि से मैं प्राय: हॉल में ही एक तरफ बैठता, जहां खुला आकाश तथा हरीतिमा सामने रहती। आचार्यश्री के आदेशानुसार आश्विन मास के लिए शास्त्रीनगर और कार्तिक मास के लिए मानसरोवर गार्डन में प्रवास हुआ।

चतुर्मास का एक मास शास्त्रीनगर में

यहां के श्रद्धाशील श्रावक समाज ने बड़े उत्साह के साथ संतों के सान्निध्य का लाभ लिया। प्रात:कालीन प्रवचन के लिए एक सार्वजनिक हॉल में मुनि सुमतिकुमारजी आदि संत जाते और सारे कार्यक्रम 'किरणकुंज' में ही होते। सुमतिमुनि के संसारपक्षीय परिवारवालों को घर बैठे ही सेवा-दर्शन आदि का लाभ मिल गया।

यह आश्विन का पूरा महीना मेरे ध्यान शिविर का रहा। दूसरे तले का एक रूम मेरे लिए आरक्षित था, जो अनुकूल रहा। बार-बार दवा लेने से साधना में कुछ व्यवधान जरूर रहा, क्योंकि हार्ट विशेषज्ञ डाक्टरों के अनुसार धमनियों में कुछ ब्लॉकेज के कारण औषधि लेना जरूरी हो गया था।

चतुर्मास का एक मास मानसरोवर गार्डन में

यहां के प्रवेश दिन से लेकर प्रस्थान दिन तक इतना उत्साह बना रहा कि तीनों समय की उपस्थिति श्रावण-भाद्रपद महीनों जैसी रहीं। इसमें सुमतिमुनि आदि संतों का श्रम तथा संपर्क कारणभूत बना।

रतनगढ़ (राजस्थान) की ओर प्रस्थान

दिल्ली के उपनगरों, कॉलोनियों आदि में विकसित गार्डन-बगीचे बहुत हैं और वहां प्रात: भ्रमण के लिए लोगों का आवागमन बहुत रहता है। हमें भी राजस्थान की ओर विहार करना था। इसलिए डॉक्टरों का विशेष परामर्श था कि आपको प्रतिदिन घूमने के लिए गार्डन में जाना ही है, ताकि चलने का पूर्वाभ्यास हो जाए और दवाओं के बारे में निर्णय करने में सहयोग मिलेगा।

विहार करने से पूर्व हार्ट विशेषज्ञ डॉ. मनचंदा तथा डॉ. विमल छाजेड़ और योगविद्या विशेषज्ञ स्वामी धर्मानंदजी आए। स्वास्थ्य संबंधी चर्चाओं के बाद निर्णय रहा कि आप विहार-यात्रा कर सकते हैं, कुछ बातों का ध्यान रखते हुए। अमुक-अमुक तीन दवाओं को लेना जरूरी रहेगा। रतनगढ़ पहुंचने के बाद एक दवा बंद करके देख लें, स्वास्थ्य पर क्या असर होता है। आगे जब भी यात्रा करें, एक माह तक दवा जरूर लेते रहें, ताकि कोई कठिनाई न आए। डाक्टरों के परामर्श के अनुसार दिल्ली से विहार हो गया।

नव आचार्यश्री से साक्षात्कार

10 जनवरी, 2011 को तेरापंथ धर्मसंघ के 11वें अधिशास्ता आचार्यश्री महाश्रमणजी के रतनगढ़ में प्रथम बार दर्शन कर सब संत प्रसन्न हो गए। आचार्यश्री की सहज विनम्रता की छाप आने वाले सभी साधु-साध्वियों के मन-मस्तिष्क में अंकित हो गई।

रतनगढ़ प्रवास में पूज्य आचार्यवर ने मुझे फरमाया–'साधु-संघ आपके साधनाजनित अनुभवों से लाभान्वित हो सके। साधुओं को आपसे कुछ मार्गदर्शन मिले, इस दृष्टि से आप संतों की एक क्लास लें।' वह क्लास आचार्यवर के सान्निध्य में ही हुई। उसमें जिन-जिन सूत्रों के आधार पर मैंने अपना जीवन जीया, उसकी मैंने चर्चा की। जिसमें से एक सूत्र की चर्चा मैं यहां करना चाहूंगा। मैंने कहा–'आदरणीय संतों! कबीरजी का एक प्रसिद्ध दोहा है–

'गृहस्थ केरा टुकड़ा, लंबा जिणरां दांत। भजन करे सो ऊबरे, नहीं तो काढ़े आंत॥'

इसका भावार्थ है–गृहस्थों के द्वारा हमें जो भोजन मिलता है, उसके लंबे-लंबे दांत हैं। यदि हम भजन करेंगे तो खाया हुआ लाभदायी बनेगा, अन्यथा वे लंबे-लंबे दांत हमारी आंतें निकाल देंगे। अपने जीवन के आदर्श दोहे में गुम्फित भावना को मैंने इस तरह आत्मसात् किया कि संघ के प्रताप से हमें पथ्य भोजन की कहीं पर भी कोई कमी नहीं है। जब कभी भी स्वादु भोजन की प्राप्ति होती है तब मैं अपने आपको व सहवर्ती संतों को भी प्रेरित करता रहता हूं कि आज मनोज्ञ भोजन किया है तो आज विशेष रूप से स्वाध्याय-ध्यान करना है। कोई न कोई त्याग, तप करना है। जाप आदि का अनुष्ठान करना है। ....। आप संतों ने अत्यंत तल्लीनता के साथ मेरी बात सुनकर मुझे जो आदर दिया उसके लिए आभार।'

मेरे निवेदन पर आचार्यश्री ने समय दिया। दो वर्षों के साधना के प्रयोगों की अवगति देने के बाद मैंने अपना अग्रणीपद विसर्जनपत्र प्रस्तुत किया। जो निम्न प्रकार है–

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

श्रद्धेय आचार्यश्री महाश्रमणजी! मेरा दस वर्षीय निवृत्ति प्रधान साधना का उपक्रम 3 फरवरी को परिसंपन्न हो रहा है। इस एक दशक के अंतिम दो वर्षों (79वें व 80वें) में ध्यान, संयम, तप आदि के प्रयोग किए। अब 4 फरवरी, 2011, वि.सं. 2067, माघ शुक्ला एकम से 81 वें जन्मवर्ष प्रवेश के साथ वीतराग साधना का दूसरा दशक तथा जन्म का नवमां दशक प्रारंभ होने जा रहा है।

इस संदर्भ में आचार्यप्रवर से बद्धांजलि प्रणतिपूर्वक नम्र निवेदन है कि मैं आगे का जीवन भी यथासंभव निवृत्ति प्रधान एवं प्रयोग प्रधान बनाना चाहता हूं। यह दृढ़ संकल्प है। उसके लिए अग्रणी की जिम्मेदारी से मुक्त होना जरूरी मानता हूं।

सन् 2009 में बीदासर मर्यादा महोत्सव पर आचार्यश्री महाप्रज्ञजी को यही भावना लिखित रूप में निवेदन की थीं, किंतु भावना पूरी नहीं हुई। अब मुझे विश्वास है कि आपश्री मेरी पद-विसर्जन भावना को साकार रूप प्रदान करवाएंगे। इसके साथ यथासंभव स्वावलंबी जीवन जीने की मनोभावना है। इसमें भी पूज्यश्री की अनुमति अपेक्षित मानता हूं।

12 जनवरी, 2011, रतनगढ़। **निवेदकः साधक मुनि ताराचंद**

पत्र को ध्यान से पढ़ लेने के बाद आचार्यश्री ने कहा–'आपके विचार अच्छे हैं। मैंने सुना था कि दिगम्बर आचार्य जब संलेखना प्रारंभ करते हैं, तब आचार्य पद से मुक्त होकर करते हैं। आपके विचार पढ़े हैं, सुने हैं, किन्तु कुछ चिन्तन के बाद ही कह सकूंगा।'

चिंतन का निष्कर्ष

आचार्यश्री ससंघ मर्यादा महोत्सव के लिए राजलदेसर पधार गए। एक दिन मध्याह्न में साधु-साध्वियों, समण-समणियों की गोष्ठी चल रही थी। पूज्यश्री ने मेरी ओर दृष्टिपात करते हुए कहा–'आपके नाम की क्या दिक्कत है? आपके सहयोगी अग्रणी सुमतिमुनि सारा काम संभाल ही रहे हैं।' मैंने खड़े होकर बद्धांजलिपूर्वक निवेदन किया–'आचार्यश्री! कार्यकारी अग्रगण्य सुमतिमुनि है, फिर केवल मेरे नाम की अपेक्षा क्या है? लोगों की धारणा होती है कि बड़े महाराज तो ये हैं। इस धारणा को मैं बदलना चाहता हूं।' आचार्यश्री ने कहा–'अभी तक यह बात मेरे गले नहीं उतर रही हैं और सुमतिमुनि के भी नहीं।' मैंने कहा–'मैं अपने अन्तःकरण से तो आचार्यप्रवर श्री महाप्रज्ञजी के समय से ही मुक्त था और अब भी यही स्थिति है। मैं चाहता था कि यह व्यावहारिक झमेला ही मिट जाए, किंतु आचार्यश्री का चिंतन इससे और अधिक गहरा हो सकता है।' मेरे निवेदन में जो दूसरी भावना थी–इस 81वें जन्मवर्ष प्रवेश के साथ यथासंभव स्वावलंबी जीवन जीने का अभ्यास करना। इस बात की आचार्यश्री ने उन्मुक्त भाव से अनुमोदना की, अनुमति दी। यह मेरे लिए प्रसन्नता का विषय रहा।

नवमें दशक में प्रवेश

4 जनवरी, 2011 (विक्रम संवत् 2067, माघ शुक्ल एकम) को 81वें जन्मवर्ष में प्रवेश अर्थात् जीवन के नवमें दशक में प्रवेश। नवाचार्य श्री महाश्रमणजी के मंगल आशीर्वाद एवं मंगलपाठ के साथ वीतराग साधना का प्रवहमान क्रम कुछ परिष्कृत तथा परिवर्धित रूप में प्रारंभ हो गया। प्रथम दिन उपवास, जप आदि के द्वारा संपन्न हुआ। बसंत पंचमी के दिन हमारा एकवर्षीय प्रवास, छापर (ताल) सेवाकेन्द्र में वृद्ध संतों की सेवार्थ घोषित हुआ।

सेवा का हस्तान्तरण

14 फरवरी, 2011, आचार्यश्री के आदेशानुसार छापर के लिए प्रस्थान किया और 17 को प्रातः प्रवेश के साथ-साथ सेवाकेन्द्र व्यवस्थापक मुनि आलोककुमारजी आदि संतों द्वारा 'सेवाकेन्द्र फाइल' नव व्यवस्थापक मुनि सुमतिकुमारजी आदि संतों को प्रत्यर्पित हुई। दोनों तरफ से संक्षिप्त वक्तव्य हुए और मंगलपाठ के साथ कार्यक्रम संपन्न हुआ।

आज ही आचार्यश्री का छापर में आगमन और प्रवचन के मध्य आचार्यप्रवर की पावन सन्निधि में उनके आशीर्वाद के साथ दोनों व्यवस्थापकों द्वारा 'फाइल प्रदान के माध्यम' से सेवा के हस्तान्तरण का कार्य संपन्न हुआ। ऐसा अवसर भाग्य से कभी-कभार ही मिलता है।

सेवा नम्बर एक, साधना नम्बर दो

सेवाकेन्द्र के सभी कार्यक्रम व्यवस्थित रूप से सुमतिमुनि के व्यवस्थापकत्व में सभी संतों के सहयोग से उत्साहपूर्ण वातावरण में प्रारंभ हो गए। मैंने भी अपने दिल की बात संतों से कही–'मुझे भी वृद्ध संतों की सेवा का यह तीसरा अवसर मिला है, इसलिए कुछ न कुछ कार्य तो करना ही है। मेरी साधना के प्रयोग नम्बर दो पर हैं, सेवा का नम्बर प्रथम है, अतः जब भी अपेक्षा हो, मैं सदा तत्पर हूं।'

लंबा प्रवास : व्यवस्थित प्रयोग

6 मार्च, फाल्गुन शुक्ला 2, अष्टमाचार्य श्री कालूगणी के मंगलमय जन्मदिवस पर मैंने भिक्षु साधना केन्द्र के नवनिर्मित ऊपरी एकांत भाग में प्रातःकालीन लगभग तीन घंटे के मौन, ध्यान, जप आदि के उपक्रम शुरू किए।

स्वावलंबन के कुछ संकल्प

81 वें जन्मवर्ष से 85 वें जन्मवर्ष की समाप्ति तक यथासंभव–

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

❖ वस्त्र प्रक्षालन अपने आप करना तथा वह पानी परठना।

❖ पीने का पानी यथास्थान जाकर पीना।

❖ कंबल आदि उपकरण ले जाना, लाना।

❖ कहीं दर्शन आदि के लिए जाना हो तो संतों की अपेक्षा नहीं रखना, अकेले चले जाना।

❖ अपने निजी कार्यों को अपने आप करना।

❖ स्थान की सफाई आदि के लिए काशीद आदि को संकेत नहीं करना, अपेक्षा लगे तो स्वयं करना आदि।

यथासंभव का तात्पर्य है–स्वास्थ्य आदि की अनुकूलता। आहार, पानी, औषध, पथ्य आदि की सेवा संतों की ले रहा हूं। जब और अपेक्षा होगी तो संतों की सेवा तो लेना ही है। पांच वर्ष के बाद इनमें कुछ परिष्कार भी हो सकेगा।

23 मार्च से प्रातः 'जयं चरे' की स्मृति के साथ छापर के हिरणों के ताल में (सुजानगढ़ रोड़ के बांई तरफ का ताल) नंगे पैर भ्रमण, अरुण सूर्यदर्शन, आतप, आसन, प्राणायाम, ध्यान आदि के प्रयोग शुरू किए। एक घंटा आने-जाने का और लगभग इतना ही समय प्रयोग में लग जाता। ढ़ाई माह तक यह क्रम चला। उसके बाद वर्षा के कारण ताल हरीतिमामय हो गया। फिर भी सड़क पर गमनयोग पूर्वक भ्रमण का क्रम चलता रहा।

कुछ प्रसंगः अभय की प्रेरणा

जिस दिन ताल में साधना के प्रयोग शुरू किए, उसी दिन दो कौवे आए। सिर पर दो-तीन चक्कर लगाकर कुछ दूरी पर बैठ गए। इसके तत्काल बाद कौवों का समूह आया और शांतभाव से बैठ गया। कुछ क्षणों के बाद एक साथ उड़ान भरते हुए कहीं दूर चले गए। मन में क्षणिक अपशकुन का भाव आया। महामंत्र आदि का जप किया। दूसरे दिन ऊंटों का समूह आस-पास घूमता रहा। कुछ भय भी लगा, किंतु अपनी क्रियाएं यथावत् रखीं। एक दिन दो कुत्ते की जात थोड़ी दूरी पर बैठ गई। आपस में खेलते हुए मेरे पास आ जाते, भय के कारण सावधान होकर अपनी साधना करता रहा। कुछ दिनों बाद, मैं ध्यानस्थ था। दो कुत्ते पास में आकर बैठ गए। ज्योंही आंखें खोली, अचानक कुत्तों को देख रोंगटे खड़े हो गए, फिर धीरे–धीरे नॉर्मल हो गया। कुत्ते भी चले गए। हिरणों के समूह तो प्रायः प्रतिदिन घूमते ही रहते थे। कभी रोझों का समूह भी आ जाता। ये दोनों प्राणी स्वयं ही इतने भयभीत रहते हैं कि चौकन्ने-सावधान होकर इधर-उधर झांकते ही रहते हैं। कहीं कुछ खतरा लगा कि चौकड़ी भरते हुए कहीं के कहीं दूर चले जाते हैं। कभी-कभी उड़ने वाले जीव आकर ऐसे डंक लगाते कि क्रिया से ध्यान हट जाता। चींटियों का परीषह तो कहीं बैठ जाओ, थोड़ी देर में तैयार है। कई बार मन में आया कि जंगल में साधना करने वाले कैसे करते होंगे?

अभय होना कितना जरूरी है, यह इन घटनाओं से ज्ञात हुआ। ये प्रसंग तो छोटे-छोटे उन प्राणियों के हैं, जो मनुष्यों के साथ ही जीने वाले हैं। जहां गहरे जंगलों में हिंसक प्राणी रहते हैं, वहां तो कोई विरला-बहुत बड़ा निर्भय साधक ही साधना कर सकता है।

विकल्पों से मुक्त होना बड़ा कठिन है

28 सितम्बर, नवरात्रि के दिन से ही प्रतिवर्ष की भांति एकमासिक साधना शिविर प्रारंभ हो गया। इस अवसर पर दस प्रत्याख्यान का क्रम भी प्रारम्भ किया। बड़े उत्साह से भिक्षु साधना केन्द्र के ऊपरी एकांत भाग में निर्णीत कार्यक्रम प्रारंभ हो गए। दो दिन बाद ही ऐसी स्थिति बनी कि लगा मन रूपी घोड़े ने अपनी अनियंत्रित दौड़ प्रारम्भ कर दी। जैसे तूफान के समय समुद्र में लहरें उछालें मारती हैं ठीक वैसे ही विविध संकल्प-विकल्प की तरंगें उछालें मारने लगीं। कभी अतीत, कभी अनागत की ओर मुझे धकेलने-बहाने लगीं। मैं हतप्रभ था कि इस जीवन में कभी ऐसे दुर्विचार, दुर्भाव नहीं आए। जिन क्रियाओं को देखा नहीं, सुना नहीं, विचारा नहीं, भोगने का तो प्रश्न ही नहीं। इस प्रकार के तूफानी लहरों के चक्रवात में मैं ऐसा फंसा कि निकलना कठिन हो गया। आगम गाथाओं का आलंबन भी लिया, किंतु काम नहीं बना। नवराात्रि का लगभग पूरा समय इसी प्रकार संकल्प-विकल्पों की उठती-गिरती तीव्र लहरों के चपेटें खाने में ही संपन्न हो गया।

छापर प्रवास के प्रारंभिक दिनों में शासन गौरव साध्वीश्री राजीमतीजी ने ध्यान संबंधी चर्चा प्रसंग में अपने अनुभव की बात बताई–'कैसे भी विचार आएं, उस प्रवाह को रोकना नहीं चाहिए। उन्हें द्रष्टा भाव से देखते रहना चाहिए।' इस प्रयोग से धीरे-धीरे स्थिति सामान्य हो गई। अभी तूफान शांत है, किंतु समाप्त नहीं है।

जन्म-जन्मान्तर के बुरे-असद् संस्कारों को समाप्त करना कठिनतम कार्य है। साधक को या तो अतीत बार-बार अपनी ओर खींचता है या भविष्य अपनी ओर। इस खींचातानी से हटकर ही वर्तमान में जीया जा सकता है। इसके लिए गहरी जागरूकता के साथ भाव-शुद्धि, लेश्या-विशुद्धि का अभ्यास करना होगा।

सोने से पूर्व कुछ पद्यों का स्वाध्याय शुरू किया–'देव दाणव......।' 'चित्रं किमत्र...।' 'णमो थूलभद्दस्स महामुणिस्स आदि।'

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

दुर्लभ पलक की झलक

22 अक्टूबर, आज का प्रात:कालीन 9 से 10:30 बजे तक का ध्यान, एक बहुत पहले के ध्यान की सुखद स्मृति करा गया। शरीरप्रेक्षा में ऐसी तन्मयता की स्थिति बनी कि डेढ़ घंटा बिना तनाव, बिना मानसिक व्यवधान के ध्यान घटित हुआ। कई मिनटों के लिए द्रष्टा भाव की झलक मिल गई। शरीर कायोत्सर्ग की मुद्रा में स्थिर, वाणी अन्तर्मौन में लीन, मन इतना शांत-प्रशांत कि कल्पनातीत। कबीरजी का एक मार्मिक दोहा स्मृति पटल पर उभर आया–

'**तनस्थिर मनस्थिर वचनस्थिर और सुरति निरति स्थिर होय। कहत कबीर ता पलक को, कल्प सके नहीं कोय॥**'

क्या ही अच्छा हो, यह स्थिति लंबे समय तक वर्धमान रहे। भीतर से आवाज आई–'धैर्य रखो।'

24 जनवरी, 2012, (माघ शुक्ला एकम, विक्रम संवत् 2068) आज 82 वें जन्मवर्ष में प्रवेश-यानी जीवन के नवमें दशक के दूसरे वर्ष में प्रवेश। छापर सेवाकेन्द्र। साधना का उपक्रम कुछ और भी प्रयोगों के साथ प्रारंभ हो गया।

ऊर्जा का ऊर्ध्वारोहण (क)

सिद्धासन, बाह्य कुंभक में कल्पना करें कि वीर्य रक्त के साथ मिलकर (वीर्य का भीतरी सार तत्त्व रक्त के साथ मिलकर) समूचे शरीर में घूम रहा है। उसका प्रवाह ऊपर की ओर हो रहा है। जितनी देर सुविधा से कर सकें, यह संकल्प करें, फिर पूरक में मूल बंध के साथ जालंधर बंध लगाईए। पेट को सिकोड़िए और फुलाईए, फिर रेचन करें। यह एक क्रिया हुई। इस अभ्यास को बढ़ाते-बढ़ाते सात या नौ बार दोहराएं।

ऊर्जा का ऊर्ध्वारोहण (ख)

पीठ के बल लेटकर कायोत्सर्ग की मुद्रा में मुंह को बंदकर पूरक करते समय संकल्प कीजिए कि कामशक्ति का प्रवाह जननेन्द्रिय से मुड़कर मस्तिष्क की ओर जा रहा है। मानस चक्षु से देखिए कि वीर्य रक्त के साथ ऊपर आ रहा है (वीर्य का भीतरी सार तत्त्व रक्त के साथ मिलकर ऊपर आ रहा है।)

अन्त:कुंभक, फिर धीरे-धीरे रेचन कीजिए। यह क्रिया बढ़ाते-बढ़ाते 15 से 20 बार करनी चाहिए। वीर्य के ऊर्ध्वारोहण का (वीर्य के भीतरी सार तत्त्व के ऊर्ध्वारोहण का) संकल्प जितना दृढ़ और स्पष्ट होगा, उतनी ही काम-वासना कम होती जाएगी।

(आचार्यश्री महाप्रज्ञ के लेख से संक्षिप्त में उद्धृत। युवादृष्टि मार्च, 2011)

नोटः–प्रयोगों में जो ब्रेकेट में लिखा हैं, वह इसलिए दिया है कि वैज्ञानिकों के अनुसार वीर्य के ऊपर जाने का कोई मार्ग है ही नहीं। कुछ प्रबुद्ध व्यक्तियों का कहना है कि वीर्य के भीतर एक ऐसा सूक्ष्म तत्त्व है, जो रक्त के साथ गति कर सकता है। उसको ओज तथा साइकिक रूप में माना गया है।

इन प्रयोगों के साथ एक हास्ययोग का प्रयोग भी प्रारंभ किया। कहते हैं कि 'उन्मुक्त हास्य' के समय निर्विचारता के क्षण भी आते हैं। स्वास्थ्य प्राप्ति इस प्रयोग का आनुषंगिक फल है।

तेरह माह का छापर प्रवास

तेरापंथ धर्मसंघ की परंपरा के अनुसार प्रत्येक साधु-साध्वी को जीवन में तीन बार (एक-एक वर्ष के लिए) वृद्ध साधु-साध्वियों की सेवा करना अनिवार्य है। अग्रणी बनने के बाद अतिरिक्त तीन सेवाएं और देनी होती हैं। इस दृष्टि से मैं तीन सेवाएं देकर ऋण से मुक्त हो गया। सुमतिमुनि की अग्रणी बनने के बाद एवं देवार्यमुनि तथा आदित्यमुनि की सहगामी के रूप में दो सेवाएं संपन्न हो गईं। अब एक शेष रही है। छापर सेवाकेन्द्र का हमारा 13 माह का सेवा कार्य संपन्न हो गया। इस प्रवास के दौरान मुनि सुमतिकुमारजी तथा देवार्यमुनि की विशेष प्रेरणा से यहां की एक लड़की-सुश्री यशा दुधोड़िया संयम पथ को अपनाने के लिए संकल्पित हुई। वर्तमान में वह पारमार्थिक शिक्षण संस्था में साधनारत है।

अकल्पित आचार्यप्रवर के दर्शन

अग्रणी मुनि सुमतिकुमारजी ने छापर से सिरियारी तक का यात्रा-पथ बनाया। उसमें हमारा सहज ही 1अप्रैल, 2012 को बगड़ी पहुंचना निर्धारित हुआ। आचार्यश्री की विहार तालिका देखने से पता लगा कि पूज्यश्री का प्रवास भी उसी दिन वहीं होने वाला है। आचार्यश्री भिक्षु का अभिनिष्क्रमण कार्यक्रम पहले से ही सुनिश्चित था। आचार्यश्री का उसी दिन मध्याह्न में आगे का विहार भी तय था।

आचार्यश्री के दर्शन, मंत्री मुनिश्री आदि संतों तथा साध्वीप्रमुखाश्रीजी आदि साध्वियों से साक्षात् मिलकर हम संत प्रमुदित थे। वह सात घंटों का सान्निध्य हमारे लिए सात दिनों से भी अधिक कार्यकारी हो गया। वहां से कंटालिया होकर 4 अप्रैल को आचार्य भिक्षु समाधि स्थल परिसर में (हेम अतिथि गृह में) पहुंच गए। वहां प्रवासित अग्रणी मुनि मणिलालजी का आतिथ्य प्राप्त किया। मुनि मणिलालजी के विशेष निवेदन पर आचार्यश्री ने हमें अक्षय तृतीया तक वहां रहने का आदेश दिया।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

लक्ष्य विशेष कर्म निर्जरा का

मैंने अपने 81 वें वर्ष प्रवेश से आचार्यश्री महाश्रमणजी की अनुमति के साथ स्वावलम्बन के कुछ प्रयोग शुरू किये थे। उनको लेकर मेरे सामने नाना प्रकार की प्रतिक्रियाएं आईं। विशेषकर संतों द्वारा। प्रतिक्रिया की शब्दावली को सुनकर मुझे आश्चर्य के साथ क्षणिक पीड़ा का भी अनुभव हुआ कि हमारा साधु जीवन कितना व्यवहार प्रधान बन रहा है। जबकि हमें आचार्यों, रत्नाधिक संतों द्वारा प्रशिक्षण दिया गया कि साधु-साध्वियों को निर्जरार्थी होना चाहिए। यथासंभव अपना कार्य अपने आप करना चाहिए। गुरुदेव श्री तुलसी ने साधुता को उजागर तथा महिमा मंडित करने के लिए अनेक प्रयोग प्रस्तुत किये थे, उनमें एक था 'निज्जरट्ठिए।' मैंने कहीं-कहीं संतों के सामने अपना दृष्टिकोण स्पष्ट भी किया, किंतु वह कइयों के गले उतरा, कइयों के गले नहीं उतरा या कम उतरा।

प्राणवान् समाधि स्थल

सिरियारी में हमारा 21 दिन का प्रवास हुआ। संतों के सौहार्दपूर्ण व्यवहार तथा प्रमोद भावना से वातावरण बड़ा सरस और मधुर रहा। समाधि के हरीतिमा मंडित शांत वातावरण में प्रतिदिन 2 से 3 घंटे तक ध्यान-जप का क्रम अच्छा चला। तेरापंथ इतिहास मनीषी स्व. मुनिश्री सागरमलजी 'श्रमण' आदि संतों एवं कई श्रावकों से सुना था कि आचार्यश्री भिक्षु का समाधि स्थल साधारण नहीं है, यह जीवित तथा प्राणवान् समाधि स्थल है। मुझे भी इसमें यथार्थता लगी।

तेरापंथ की जन्मभूमि मेवाड़ में

25 अप्रैल को मेवाड़ की अरावली पर्वत श्रेणी की ओर विहार कर 27 को मेवाड़ में प्रवेश किया। देवगढ़ में प्रवासित साध्वीश्री राकेशकुमारीजी आदि साध्वियों की भक्ति स्वीकार की। 30 अप्रैल को आमेट शहर के लक्ष्मीबाजार में स्थित तेरापंथ भवन में प्रवेश किया। वहां का 23 दिन का प्रवास श्रावक समाज के लिए आल्हादकारी रहा। अग्रणी सुमतिमुनि का श्रम जहां जाते है, वहां मुखरित होता ही है। 23 मई को आमेट से विहार कर केलवा होते हुए 27 मई को राजनगर भिक्षु बोधि स्थल में प्रवास किया। यह क्षेत्र चिर परिचित होने के कारण भाई-बहिनों का दर्शनार्थ आना जाना रहा। सुमतिमुनि का काफी समय जनसंपर्क में लगता। वहां से धोइंदा में वृद्ध संत मुनि भवभूतिजी आदि मुनियों से मिलने गए। एक दिन का प्रवास उदयपुर हाइवे पर स्थित श्री सुरेन्द्रजी बड़ाला के बंगले में हुआ।

नियति! तुम्हें प्रणाम

चतुर्मास से पूर्व हम कांकरोली के कॉलोनियों में विचरण कर रहे थे। उन्हीं दिनों में आचार्यश्री महाश्रमणजी ने संबोधि उपवन में प्रवासित संघमुक्त मुनि शुभकरणजी को (जो कि कुछ महिनों पूर्व संघ से अलग हुए थे) पुन: संघ में सम्मिलित होने का एक मौका प्रदान किया था। हालांकि इस प्रकरण में मैं कोई मध्यस्थ तो नहीं था, पर चूंकि हम दोनों साथी रहे हैं, शायद यह सोचकर आचार्यश्री ने अपनी ओर से चलाकर इस संदर्भ में मुझे सूचित किया। जो कि उनके उदार चिंतन का द्योतक है। गुरु-इंगित को समझकर मैंने भी अपनी ओर से 'ध्यानयोगीजी' को पत्र लिखकर कहलवाया–'आपको इस अवसर का लाभ उठाना चाहिए।' फिर चतुर्मास में भी एक बार परस्पर मिलना हुआ। इस विषय पर भी बातचीत चली। पर शायद नियति को कुछ और ही मान्य था।

विक्रम संवत् 2069, सन् 2012 का चतुर्मास कांकरोली के तेरापंथ भवन में प्रारंभ हुआ। श्रावक समाज का उत्साह अच्छा रहा। संतों के सान्निध्य में सारे कार्यक्रम शुरू हो गए। चतुर्मास के प्रारंभ होने के साथ-साथ मुनि देवार्यजी ने अठाई की तपस्या की।

परीक्षा की घड़ी

मेरे लिए जून, जुलाई के दो महीने खुजली के कारण अस्वास्थ्य की दृष्टि से पराकाष्ठा के रहे। ऐसे यह बीमारी दक्षिण यात्रा में शुरू हुई थी। दवाओं के बावजूद भी कभी ज्यादा, कभी कम और कभी कई दिनों तक शांत भी रहती, किंतु जड़ से समाप्त नहीं हुई। इन दो महीनों में तो भयंकर रूप धारण कर लिया। पहले ऐसा उग्ररूप कभी नहीं हुआ। खुजलाते-खुजलाते शरीर इतना लहूलुहान हो जाता कि रक्त बाहर आने लगता। 20 मिनट तक इतनी जलन रहती कि जैसा घाव पर नमक छिड़का हो। संकल्प भी किया कि नाखूनों से नहीं खुजलाऊंगा, केवल हथेली से मालिश कर लूंगा। लेकिन चाहते हुए भी संकल्प का पूरा निर्वाह नहीं कर सका। भोक्ता भाव अधिक मुखर हो गया। वह मेरी जागरूकता पर छा गया।

इन दो महीनों के प्रथम तीन सप्ताह तक पानी की पट्टी, प्रेक्षा, अनुप्रेक्षा तथा कुछ मंत्रों का प्रयोग भी किया, किंतु सफलता क्षणिक रही। तेले के तप का प्रयोग भी किया। सुमतिमुनि के कहने पर होम्योपैथिक दवा ली तथा डॉ. सुखलालजी बागरेचा आदि डॉ. ने भी अपना उपचार किया, किंतु खुजली सब पर हावी हो गई, अपना वर्चस्व कायम रखा।

उन दिनों चर्म (स्कीन) रोग विशेषज्ञ डॉ. मेहता जो उदयपुर से हर 15 दिन बाद कांकरोली आकर केम्प लगाते हैं। चिंतन किया गया क्यों नहीं उनको दिखाया जाएं? सभा के मंत्री प्रमोदजी सोनी उनको लेकर आए। डॉ. ने देखा, सारी स्थिति की जानकारी ली और पूर्व दवाओं को निरस्त कर अपने ढ़ंग से लगाने और लेने की दवाएं लिखकर दी। इस 15 दिन के कोर्स में तीसरे दिन से क्रमश: ठीक महसूस होने लगा। इस बीच मे डॉक्टर के कहने पर शुगर आदि की कुछ जांचें भी करवाईं, जो नॉर्मल रहीं।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

संकल्प अखंड रहा

दो वर्षों से स्वावलंबन का जो मेरा संकल्प चल रहा है, वह अखंडित रहा। लगभग दो महीने तक खुजली के कारण ओढ़ने तथा बिछौने के वस्त्र इतने रक्तरंजित हो जाते कि उनकी सफाई आदि के लिए करीब 1 घंटा लग जाता, लेकिन इस श्रमजन्य कमजोरी के बावजूद भी शरीर का इतना सहयोग रहा कि जो काम करने का था, वह होता रहा।

मेरी साधना का एक महत्त्वपूर्ण सूत्र है कि भोक्ता भाव को कम करना और द्रष्टा भाव को विकसित करना। इस अभ्यास से कई बीमारियों को भोगा कम और द्रष्टा भाव का ग्राफ कुछ ऊंचा हुआ, किंतु इस बीमारी की कसौटी पर पूरा खरा नहीं उतर सका।

प्रज्ञा विहार में

पर्युषण का नवाह्निक कार्यक्रम प्रज्ञा विहार के विशाल हॉल में आयोजित हुआ। प्रतिदिन वर्षा के बावजूद पर्व के अनुरूप उपस्थिति रही। मैंने साश्चर्य सुमतिमुनि से पूछा–'क्या यह सारी परिषद कांकरोली की है?' परिषद को प्रेरणा पाथेय प्रदान करने के लिए संतों ने पूरा पुरुषार्थ किया। मैं तो केवल संवत्सरी तथा खमतखामणा के दिन बोला।

पर्युषण के रात्रिकालीन कार्यक्रम मुनि सुमतिकुमारजी के सान्निध्य में अनेक प्रतियोगिताओं के साथ अच्छी उपस्थिति में संपन्न हुए। कांकरोली की सभा, महिला मंडल, युवक परिषद सभी सक्रिय हैं।

प्रज्ञा विहार साधना की दृष्टि से अच्छा उपयोगी है। चारों ओर हरीतिमा से मंडित एवं शुद्ध हवा, प्रकाश से आपूरित है। मैंने पर्युषण के दिनों में साधना की दृष्टि से सहज शांत वातावरण का पूरा उपयोग करने का प्रयास किया।

एकमासिक जागरूकता शिविर

16 अक्टूबर को सोनेरी सूर्य की किरणों के साथ ही जागरूकता पूर्वक मंगल पाठ से शिविर आरंभ हो गया। इसमें प्रत्येक क्रियाओं को सजगता के साथ करने का अभ्यास करना है। अच्छे-बुरे, आवश्यक-अनावश्यक जो भी विचार आएं, उनको तटस्थ भाव-मध्यस्थ भाव से केवल देखते रहना और विचार न आएं, उस समय लक्षित ध्यान पर चित्त को केन्द्रित करना।

आचार्यश्री महाप्रज्ञ के मेरे लिए प्रदत्त अंतिम तीन संदेशों में एक संदेश प्रतिदिन प्रेरणा प्रदान करता है। अत: अपने शिविरों में उसका विशेष अभ्यास करता हूं–'सुभेणं परिणामेणं, सुभेणं अज्झवसाएणं, लेस्साए विसुज्झमाणीए, भाव क्रिया अभय का सिंहद्वार है, एगो मे सासओ अप्पा, आदि। शिविर की संपन्नता के कुछ दिन बाद चतुर्मास भी संपन्न हो गया।

शेषकाल का प्रवास

आचार्यश्री के आदेशानुसार स्वास्थ्य की दृष्टि से भीलवाड़ा में साढ़े तीन माह का प्रवास रहा। डॉक्टरी जांच के बाद दवा और पथ्य का क्रम चला। आत्मा के पोषण के लिए राग, द्वेष, कषाय आदि की मंदता के प्रयोग चल ही रहे हैं। शहर के अनेक उपनगरों, कॉलोनियों आदि में प्रवासी श्रावक समाज ने संतों के प्रवास का अच्छा लाभ लिया। मर्यादा महोत्सव, श्रावक सम्मेलन आदि के कई कार्यक्रम अच्छी उपस्थिति में आयोजित हुए।

उम्र के 82 वर्ष पूर्ण; 83वें वर्ष में प्रवेश

11 फरवरी, 2013 (विक्रम संवत् 2069, माघ शुक्ला एकम) को 83 वें जन्मवर्ष में प्रवेश अर्थात् जीवन के नवमें दशक के तीसरे वर्ष में प्रवेश। उपवास, मौन आदि अनेक उपक्रमों के साथ प्रथम दिन को सार्थक बनाया। गतवर्ष की चर्या में कुछ संशोधन किए। पंचवर्षीय स्वावलंबन के संकल्प यथावत्। इस वर्ष एक नियम लिया–मध्याह्न में जिस शाक-व्यंजन में तेल-घी का प्रयोग कम हुआ हो, वह या यदि उपलब्ध होता हो तो बिना तेल-घी का व्यंजन काम में लेना। सायं भूख लगे तो हल्का आहार करना।

भीलवाड़ा प्रवास के पश्चात् पुर में 29 दिन, गंगापुर में 34 दिन, लावासरदारगढ़ में 25 दिनों का प्रवास किया। मुनि सुमतिकुमारजी आदि संतों के श्रम एवं प्रेरणा से अच्छा कार्यक्रम रहा। तीनों ही क्षेत्रों में भक्ति-भावना वर्धमान रही।

मेरी साधना की दृष्टि से पुर में तेरापंथ भवन के भीतर ही भ्रमण, आसन, ध्यान आदि के प्रयोग भलीभांति चले। गंगापुर में प्रात: प्रतिदिन पूज्यश्री कालूगणी के समाधि परिसर में भ्रमण, आसन आदि का क्रम चला। इन वर्षों में भ्रमण का क्रम यथासंभव 45 मिनट का रहता है। लावासरदारगढ़ में तेरापंथ भवन के पीछे बहुत बड़ा पीपल का वृक्ष है। उसकी शाखाएं-प्रशाखाएं भवन की छत पर फैली हुई है। वहां पीपल के शुद्ध आक्सीजन युक्त वायुमंडल में भ्रमण, आसन, ध्यान आदि के लगभग तीन घंटों के प्रयोग तृप्तिदायक रहे। सुमतिमुनि आदि संतों ने भी उसका लाभ लिया।

लावासरदारगढ़ के इसी प्रवास के दौरान दिल्ली से भाई पुखराज डागा तीन बच्चों को लेकर आया। जिसमें दो तो उसी के पुत्र (पारस व हर्ष) व एक उसके छोटे भाई जुगराज का पुत्र (मनन) था। भाई पुखराज सांसारिक दृष्टि से मेरी भाणजी का पुत्र है। उसने निवेदन किया–'ये तीनों ही भाई दीक्षा लेने की कह रहे हैं। आप इनकी परीक्षा लें।' तदनुसार वे तीनों ही भाई बिना अभिभावकों के कुछ दिन वहां रहें। उनमें साधना के संस्कार पुष्ट हो, इस दृष्टि से मैं भी उन्हें समय देता। आज उनमें से दो (मुनि नमन कुमार एवं मुनि पार्श्व कुमार) दीक्षित होकर गुरुसेवा में रत हैं।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

विक्रम संवत् 2070, सन् 2013 का आमेट (मेवाड़) चतुर्मास। उसमें श्रावक समाज की उत्तरोत्तर भक्ति भावना वर्धमान रही। ज्ञान-दर्शन-चारित्र-तप की अच्छी आराधना हुई। संतों के प्रयास और सभा, महिला मंडल, तेयुप के सहयोग से सारे कार्यक्रम सुव्यवस्थित रूप से संचालित हुए। मेरी साधना भी निर्धारित क्रमानुसार व्यवस्थित चली। स्थान, पथ्य आदि की अनुकूलता रही। श्रावकों, संतों द्वारा मेरे चरण स्पर्श के क्रम को मैंने निषिद्ध रखा। व्याख्यान-समाप्ति पर मैं स्वयं जाकर सामूहिक दर्शन दे देता। अन्य समय में कोई भी आते तो मौनपूर्वक दूर से दर्शन कर लेते।

निश्चय और व्यवहार

इस प्रवास में भाई सत्यम् (गंगापुर) द्वारा उपलब्ध दिगम्बर-साहित्य के वाचन का एक अच्छा अवसर मिला। समयसार पर आचार्यश्री विशुद्धसागरजी के प्रवचन कई भागों में प्रकाशित हुए हैं। उनमें निश्चय और व्यवहार का विस्तार से विवेचन किया है। इसके साथ योगसार, समाधितंत्र, पुरुषार्थसिद्धि उपाय आदि ग्रंथों का विवेचन भी साधक की साधना में प्रेरणादायी तथा पथदर्शन देने वाला है। इस निश्चय प्रधान स्वाध्याय की निष्पत्ति मेरे एकमासिक निजी शिविर की भूमिका बन गई।

त्रैकालिक ध्रुव-शुद्ध आत्मसाधना शिविर

विक्रम संवत् 2070, सन् 2013 का शिविर। आत्मा का स्वरूप तीन ही काल में ध्रुव-सदा रहने वाला है। (न उत्पन्न होता है और न नष्ट) उस आत्मा के शुद्ध स्वरूप में मोह-राग-द्वेष, कषाय के कारण पौद्गलिक कर्मों का मिश्रण हो गया। अन्योन्याभाव हो गया। जैसे–सोने में मिट्टी, दूध में पानी। संवर, निर्जरा की प्रक्रिया द्वारा आत्मा से कर्मों को हटाने से आत्मा अपने शुद्ध स्वरूप में आ जाती है। द्रव्यार्थिक नय से-निश्चयनय से ज्ञायक स्वभावी आत्मा त्रैकालिक शुद्ध ही है, किंतु पर्यायार्थिक नय से रागादि के कारण अशुद्ध है। आत्मसाधना का तात्पर्य यही है कि साधक उन रागादि भावों को मिटाने के लिए अपने पुरूषार्थ को नियोजित करे।

संस्कृत का एक सुन्दर श्लोक है–

'रागद्वेषादिकल्लोलै, रलोलं यन्मनोजलम्। सपश्यत्यात्मनस्तत्त्वं, तत्तत्वं नेतरो जनः॥'

जिसका मन एकदम शांत है, जिसमें राग-द्वेष की तरंगें नहीं उठती हैं, वह व्यक्ति जिस आत्मतत्त्व को देखता है, उसे दूसरा देख नही सकता। जिसका मन निस्तरंग बन गया है, वह व्यक्ति अमृत-पान कर सकता है।

शुद्ध क्षणों की निष्पत्ति

इस शिविर में लक्ष्य बनाया कि रागादि रहित शुद्ध क्षणों को बढ़ाने का अभ्यास करना है। मन का पूरा सहयोग नहीं मिला, फिर भी मेरे अन्तःकरण का उत्साह मंद नहीं हुआ। यह महसूस भी होता रहा कि संकल्प-विकल्पों के कल्पनाजाल को तोड़ना कितना कठिनतम है। अनंत धैर्य के साथ जन्म-जन्मान्तरों के रागादि संस्करों का शोधन करते रहने से ही आत्मा परभाव से हटकर अपने शुद्धस्वभाव में प्रतिष्ठित हो सकेगी।

मेरे इस शिविर की निष्पत्ति कही जा सकती है–'रागादि रहित अनेक क्षणों की उपलब्धि।' जहां एक क्षण की विशुद्धि भी महत्त्वपूर्ण होती है, वहां अनेक क्षणों की शुद्धि उपलब्धि क्यों नही होगी? विशुद्ध क्षण के अनुभव को पकड़ना भी एक गहरी एवं सूक्ष्म बात है।

आमेट से विहार और सिरियारी में प्रवास

आचार्यश्री के आदेशानुसार आमेट चतुर्मास के बाद गुरुदर्शनार्थ यात्रा प्रारंभ हुई। आमेट से देवगढ़, टॉडगढ़ होते हुवे 30 नवम्बर को सिरियारी आचार्यश्री भिक्षु समाधि स्थल परिसर में पहुंचे। अग्रणी मुनि मणिलालजी आदि संतों से मिलन हुआ। आचार्यश्री के निर्देशानुसार अहमदाबाद (गुजरात) से मुनि धर्मेशकुमारजी आदि संतों के यहां आने के बाद ही हमारी यात्रा पुनः प्रारंभ हो पाई।

इस 24 दिन के प्रवास में समाधि स्थल पर करीब 2 घंटा तक ध्यानादि का क्रम अच्छा चला। शुक्ला 13 से तेले के तप के साथ '**ॐ ह्रीं अर्हं नमः**' का सवा लाख जप आचार्य भिक्षु स्वर्ग गमनस्थल, पक्की हाट के ठीक सामने तेरापंथ भवन में प्रारंभ किया। जो आचार्य भिक्षु समाधि स्थल पर पूर्ण हुआ। इसके साथ 8 दिन में 'ॐ भिक्षु-जय भिक्षु' का सवा लाख का जप भी किया।

कई सिंघाडों के साथ धर्मेशमुनि का सिंघाड़ा भी पहुंच गया। 24 दिसम्बर को पुनः गंगाशहर की ओर यात्रा प्रारंभ हो गई। पहला पड़ाव आचार्यश्री भिक्षु की जन्मभूमि कंटालिया में हुआ। सिरियारी से मुनि धर्मेशकुमारजी यहां तक हमारी भक्ति के लिए साथ आए। उस समय चेन्नई प्रवासी व कंटालिया निवासी भाई राजेश और उसकी पत्नी दोनों आए हुए थे। राजेश मरलेचा स्वर विज्ञान का ज्ञाता है। मैंने कुछ प्रश्न पूछे। उसने स्वर देखकर उत्तर दिए। वे काफी रूप में सही निकले। पूना-खड़की प्रवासी अशोक मरलेचा और राजेश दोनों निकट के भाई हैं। ये दोनों ही तीनों प्रकार की औषधियों के अच्छे अनुभवी हैं। यात्रा में कई प्रकार की दवाएं आदि साथ में भी रखते हैं। जब कभी आते हैं तो हम संतों के लिए एक डॉक्टर जैसा काम कर देते हैं। दोनों ही मरलेचा परिवार के श्रद्धाशील युवक हैं। उनके विशेष निवेदन पर दो दिन का प्रवास हुआ। आचार्यश्री भिक्षु के जन्म स्थल पर जाकर जप का प्रयोग भी किया।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

गंगाशहर की इस 422 कि.मी. की यात्रा में 14-15 कि.मी. तक के विहार भी बिना किसी कठिनाई के संपन्न हुए। प्रात:काल का पूरा समय यात्रा में चला जाता। उसमें सदा की भांति गमनयोग का अभ्यास चलता रहा, किंतु जो प्रयोग चतुर्मास में व्यवस्थित चल रहे थे, उसमें व्यवधान आ गया, फिर भी 'तथाता' जो जैसा हो रहा है, वह स्वीकार है–इन भावों के कारण संवेदन से बचा रहा, मध्यस्थ भावना का आलंबन कायम रहा।

24 जनवरी, 2014 को आचार्यश्री महाश्रमणजी के दर्शन कर संत प्रमुदित हो गए। अनेक क्षेत्रों से गुरुकुल में समागत साधुओं से मिलन तथा विचारों का आदान-प्रदान प्रारंभ हो गया। अनेक गोष्ठियों के माध्यम से आचार्यश्री द्वारा साधु-साध्वियों एवं समण-समणियों को प्रेरणा-पाथेय प्राप्त हुआ। मर्यादा महोत्सव का त्रिदिवसीय कार्यक्रम चतुर्विध संघ के लिए श्रद्धा, भक्ति-भावना को प्रोत्साहित करने वाला था।

मैंने 24 जनवरी को ही अपनी अग्रिम साधना को (84 वें जन्मवर्ष प्रवेश से-31 जनवरी, 2014 से) एक और नए मोड़ के साथ प्रारंभ करने का नम्र निवेदन आचार्यश्री के करकमलों में प्रस्तुत किया। जो निम्न प्रकार है–

ॐ ह्रीं अर्हं नमः

तेरापंथ धर्मसंघ के अनुशास्ता, महातपस्वी, अध्यात्म मनीषी आचार्यश्री महाश्रमणजी को सादर-सभक्ति अभिवादन के साथ नम्र निवेदन–

आचार्यप्रवर! आमेट (मेवाड़) चतुर्मास के एकमासिक शिविर के मध्य तीव्रता के साथ एक चिंतन उभरा कि जीवन के इस 84वें जन्मदिन से प्रवहमान आत्मसाधना को एक ओर नया मोड़ देते हुए और अधिक जागरूकता के साथ आगे बढ़ना है, क्योंकि अब शारीरिक क्षीणता का कुछ अनुभव होने लगा है। इसलिए गतिमान विहार में परिवर्तन करना अपेक्षित है। इसके लिए पूज्यश्री का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं।

❖ आगे के लिए एक स्थान में रहकर साधना के प्रयोग करना।

❖ इसके लिए अतिरिक्त स्थान की अपेक्षा नही रहेगी। धर्मसंघ में जो संतों के लिए सेवाकेन्द्र चल रहे हैं, उनमें से जहां भी आपश्री उचित समझें, वहां व्यवस्था करवाएं।

❖ इतना जरूर अपेक्षित रहेगा कि एक कमरा एकांत मिल जाए।

❖ सेवाग्राही बनकर साधना के प्रयोग करने का भाव है।

❖ कई वर्षों से सह-अग्रणी मुनि सुमतिकुमारजी आदि संतों का मुझे आत्मीय सहयोग प्राप्त है, किंतु मेरे लिए एक अच्छे कार्यकारी अग्रगामी को क्यों रोका जाए?

❖ एक यह भी बात है कि 35 वर्षों के लंबे सहप्रवास में कुछ रूप में रागात्मक भाव हो जाना मनुष्य की दुर्बलता है। उसको निरस्त करने का अवसर मिल जाएगा।

❖ सेवाकेन्द्र में प्रतिवर्ष नए-नए सेवादायी संत आऐंगे। सहज ही उनके साथ राग का अनुबंध नहीं होगा। उजला-उजला जय जिनेन्द्र रहेगा। पूर्ण जिम्मेदारी से मुक्त तथा निश्चिंत होने से साधना में नया निखार आएगा। ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

❖ मंगल भावना है कि आचार्यश्री द्वारा व्यवस्था प्राप्त होने के बाद यथासंभव जल्दी ही प्रारंभ में छह मास का मौन लेकर कुछ सुचिंतित साधना के प्रयोग शुरू कर देना है। गुरूदेव श्री तुलसी, आचार्यश्री महाप्रज्ञजी का मुझे सदा आशीर्वाद प्राप्त हुआ है। वर्तमान में आपश्री का भी आशीर्वाद प्राप्त है। पूज्यवरों की प्रेरणा, प्रोत्साहन एवं पथदर्शन से इसी जन्म में वीतरागता के निकट पहुंच जाऊं, जीवन के इस संध्याकाल में बस, अब वैसा ही प्रयास करना है। '**गण में रहूं निरदाव अकेलो**' परमाराध्य आचार्यश्री भिक्षु के इस कल्याणकारी वाक्य को चरितार्थ करूं, ऐसी अन्त:करण की अभिलाषा है।

वैचारिक स्पष्टता की दृष्टि से निवेदन की शब्दावली कुछ लंबी हो गई है, इसलिए इस बृहद् मर्यादा महोत्सव पर आपके अतिव्यस्त क्षणों में आपका अतिरिक्त समय लेने के लिए क्षमाप्रार्थी हूं।

24 जनवरी, 2014, गंगाशहर,(बीकानेर) निवेदक–**वीतरागता का साधक-मुनि ताराचन्द**

निर्णय आचार्यश्री को ही करना है

निवेदन पत्र पूरा पढ़ लेने के बाद आचार्यश्री ने कहा–'आपका चिंतन मेरे ध्यान में आ गया है। एक बार आप और सुमतिमुनि दोनों के साथ बात करने के बाद हमारा निर्णय आपको बता देंगे।' दो दिन बाद अर्हत् वंदना के पश्चात् आचार्यश्री ने हम दोनों को याद किया। हम गए और वंदना कर सम्मुख बैठ गए। आचार्यश्री ने सुमतिमुनि से पूछा–'मुनिश्री की साधना के बारे में तुम क्या कहना चाहते हो?' बद्धांजलिपूर्वक सुमतिमुनि बोले–'आचार्यप्रवर! गुरुदेव श्री तुलसी एवं आचार्यश्री महाप्रज्ञजी की कृपा से हमें मुनिश्री का सुखद

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

सान्निध्य मिला। अब आपश्री भी हमें मुनिश्री की सेवा का अवसर प्रदान करवाएं, जिससे हम आगे भी साधना में सहयोगी बन सकें।' मैंने कहा–'आचार्यप्रवर! इनकी सेवा तो लंबे समय से प्राप्त है, किंतु अंतरंग साधना की दृष्टि से इसमें परिवर्तन करना अपेक्षित लगता है, जिसकी चर्चा मैंने पत्र में आचार्यश्री को निवेदित की थी।' आचार्यश्री ने प्रसन्नता और अपनी सहज मुस्कान के साथ कहा–'अच्छा आप एक काम करें। आप चारों परस्पर चर्चा कर लें, फिर हमें बता दें।' मैंने निवेदन किया–'आचार्यश्री! आमेट चतुर्मास के अंतिम दिनों में ही अपने चिंतन की अवगति संतों को दे दी थी, किन्तु सहमति उस समय भी नहीं थी, अब भी होने की नहीं है। निर्णय आपश्री को ही करना है।'

31 जनवरी, 2014 को उपवास आदि के साथ जन्म के 84वें वर्ष में प्रवेश।

चतुर्मासों की घोषणाएं

6 फरवरी, 2014 के मर्यादा महोत्सव के दिन आचार्यश्री द्वारा साधु-साध्वियों तथा समणियों के आगामी चतुर्मासों की घोषणाएं हो रही थीं। उस क्रम में मेरा तथा सुमतिमुनि का नाम आया। हम दोनों खड़े हुए। आचार्यश्री ने कहा–'आप सरदारशहर की ओर विहार की वंदना करें।' आचार्यश्री ने सुमतिमुनि को निकट बुलाकर कहा–'क्षेत्र आदि के संभाल की जिम्मेदारी तुम्हारी रहेगी। मुनिश्री अपनी साधना में रहेंगे।' तहत् कहकर हमने गुरु चरणों में वंदना की।

रात्रि प्रतिक्रमण के बाद मैंने निवेदन किया–'आचार्यप्रवर! आप मुनि सुमतिकुमारजी को स्वतंत्र अग्रगण्य बनाने की तथा साथ वाले संतों को उनके साथ नियोजित करने की कृपा करवाएं। इससे मुझे अपनी साधना में निश्चिंतता रहेगी।'

अग्रणी के दायित्व से मुक्ति

11 फरवरी को रात्रि में अर्हत् वंदना के समय आचार्यश्री महाश्रमणजी ने मुनि सुमतिकुमारजी को निकट बुलाकर फरमाया–'अब तुम स्वतंत्र (फुलप्लॅश) अग्रगामी की वंदना करो।' उसी समय मुनि देवार्यकुमारजी एवं मुनि आदित्यकुमारजी को नए स्वतंत्र अग्रगामी के साथ वंदना करवाई। मैंने खड़े होकर बद्धांजलिपूर्वक निवेदन किया–'आचार्यप्रवर! आपश्री ने महती कृपाकर मुझे दायित्व से मुक्त कर मेरे साधना पथ को एक प्रकार से प्रशस्त कर दिया।' आचार्यश्री ने कहा–'तुम तीनों को मुनिश्री की साधना में सहयोगी बनकर सेवा करना है।'

12 फरवरी को रात्रि में अर्हत् वंदना के बाद पूज्यश्री ने अपना सान्निध्य हम संतों को प्रदान किया। मैंने अपनी भावी साधना की रूप-रेखा लिखित रूप में निवेदित की। आचार्यश्री ने ध्यानपूर्वक पढ़कर अपनी शुभाशंसा व्यक्त की। अग्रगण्य मुनि सुमतिकुमारजी आदि संतों को आगम स्वाध्याय, संस्कृत अध्ययन आदि की प्रेरणाएं प्रदान कीं। आचार्यश्री ने साधना के लिए स्थान आदि के चर्चा प्रसंगों में फरमाया–'आपके लिए हाजरी (परिषद में मर्यादावली का वाचन) आदि में उपस्थिति अपेक्षित नहीं रहेगी।'

इस स्वल्पकालीन गुरुकुलवास में मैंने अपने प्रवहमान मौन में कुछ परिवर्तन किया। रात्रि में अर्हत् वंदना के बाद एक-डेढ़ घंटे का समय संतों के साथ विचार-विमर्श के लिए सुरक्षित रखा। जहां अनेक संतों के साथ साधना संबंधी विचारों का आदान-प्रदान हुआ वहां मंत्री मुनिश्री सुमेरमलजी (लाडनूं), बहुश्रुत परिषद के सदस्य मुनिश्री राजकरणजी एवं आगम मनीषी मुनि महेन्द्रकुमारजी (मुम्बई) आदि वरिष्ठ संतों द्वारा मुझे अनेक जिज्ञासाओं का समाधान भी प्राप्त हुआ।

एक नया प्रयोग प्रारंभ

आचार्यश्री की आज्ञा से जन्म के 84 वें वर्ष की पैदल यात्रा गंगाशहर से 16 फरवरी को सरदारशहर प्रवास के लिए प्रारंभ हुई। तब से गमनयोग के साथ एक नया प्रयोग भी प्रारंभ किया कि ज्ञान आत्मा देख रही है, मुनि ताराचंद का शरीर चल रहा है यानी काय आत्मा चल रही है। चलते-चलते विचित्र स्थितियां बन रही हैं। कभी शीत लहर की हवा लग रही है, कभी नाक से पानी गिर रहा है, ताराचन्द का हाथ कपड़े से नाक को साफ कर रहा है, कभी पदत्राणों से पैरों में असुविधा हो रही है, फिर भी चेहरे पर भीतर की सहज मुस्कान है। क्यों? ज्ञान आत्मा कह रही है कि ये सब प्रवृत्तियां काय आत्मा में हो रही है। मैं तो त्रैकालिक ध्रुव-शुद्ध-द्रव्य आत्मा का-ज्ञायक आत्मा का अन्तेवासी हूं। इस काय आत्मा–योग आत्मा से मेरा कोई संबंध नहीं है। यह काय आत्मा (शरीर) अध्रुव है, अशाश्वत है। मैं द्रष्टा हूं, यह दृश्य है। मैं सदा कायम रहने वाला हूं, यह तो मरणधर्मा है। **इस प्रयोग से 'आत्मा भिन्न, शरीर भिन्न' इस भेदज्ञान का अनुभव किया जा सकता है।**

27 फरवरी को श्रीडूंगरगढ़ पहुंचे। वहां विराजित मंत्री मुनिश्री सुमेरमलजी (लाडनूं) आदि संतों का आतिथ्य प्राप्त हुआ। 13 दिनों के प्रवास में मंत्री मुनिश्री ने उदारतापूर्वक हम संतों को अपना समय दिया। अनेक जिज्ञासाओं का समाधान मिला। 'कृतज्ञोऽस्मि'– मैं आपका आभारी हूं।

चली काय आत्मा, साक्षी थी ज्ञान आत्मा

14 मार्च को प्रात: आडसर से मोमासर की सड़क पर चले। रेतीले धोरों के कारण सड़क भी ऊंची-नीची, दाएं-बाएं घूम रही थी। सूर्य भी कभी सड़क के दांई ओर, कभी बांई ओर, कभी सामने हो जाता तो अपनी प्रात:कालीन किरणों से शरीर को अभिस्नात करा

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

देता। आज का 11 कि.मी. विहार 14 कि.मी. जैसा ही हो गया। 84वें वर्ष में भी बिना किसी विशेष थकान के काय आत्मा चली और इसकी साक्षी रही ज्ञान आत्मा।

मोमासर में प्रवासित शासनश्री मुनि वत्सराजजी का भक्तिभरा आतिथ्य स्वीकार किया। होली चतुर्मास के चार दिनों के प्रवास में विचारों का अच्छा आदान-प्रदान हुआ।

सरदारशहर में आचार्य महाप्रज्ञ समाधि स्थल पर

21 मार्च, 2014, (विक्रम संवत् 2070, चैत्र कृष्णा 5) शुक्रवार को सरदारशहर में प्रवेश किया। वहां विराजित शासनश्री मुनिश्री सुमेरमलजी 'सुदर्शन', अग्रणी मुनि जयकुमारजी आदि संतों से मिलन तथा तीन दिनों का सह प्रवास सरस रहा। मंत्र जप एवं ध्यान के विशेष प्रयोक्ता जयमुनि के साथ साधना संबंधी परिचर्चा मेरे लिए लाभदायी रही।

24 मार्च को रतनगढ़ हाईवे पर स्थित आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के समाधि स्थल पर प्रवास हुआ। ध्यान योगीराज की स्मृति के साथ जप, ध्यान आदि के प्रयोग अच्छे ढ़ंग से चले।

मंगल पाठ मंगलकारी

साधना की दृष्टि से यहां पर हमारा लंबे समय तक प्रवास संभावित था। इसलिए मन में आया कि एकांत, मौन साधना से पूर्व जितने भी अस्वस्थ, वृद्ध श्रावक-श्राविकाएं हैं, उनको यथासंभव कम से कम एक बार दर्शन देने चाहिए। इसके लिए सुमतिमुनि ने व्यवस्था की और दो-तीन भाइयों को मेरे साथ घर बताने के लिए नियोजित कर दिया। लगभग एक घंटे में जितने व्यक्तियों को दर्शन दे सकता, दे देता। 21 दिन तक यह मेरा प्रात:कालीन कार्यक्रम जैसा ही हो गया। प्राय: मौन मंगल पाठ सुनाता। कुछ परिवारों में मौन खोलकर अति आवश्यक शब्दों में बोलना भी आवश्यक लगा।

26 मार्च को श्री समवसरण के पश्चिमी तरफ के कमरे में मैंने अपना आसन जमा लिया। 29 मार्च को मंत्री मुनिश्री सुमेरमलजी (लाडनूं) आदि संतों का आगमन एवं प्रवास जहां श्रावक समाज के लिए प्रेरणादायी रहा, वहां हम संतों के लिये भी ज्ञानवर्धक रहा। 11 अप्रैल को मैंने मंत्री मुनिश्री से निवेदन किया कि आप मेरे निश्रित एकांत कक्ष में पधारें और विराजकर वहां के परिसर को निर्बाध बनाने की दृष्टि से कुछ अनुष्ठान करवाएं। मंत्री मुनि ने व्याख्यान के बाद पधारकर पौन घंटे तक मौन अनुष्ठान किया। मेरी साधना के प्रति यह उनकी मंगल भावना थी।

एकांत साधना की रूपरेखा

13 अप्रैल, 2014 को मेरे लिए षट्मासिक एकांत मौन प्रवेश का समय था–10:20 से 10:40 तक का। महावीर जयंती के कार्यक्रमानुसार मंत्री मुनिश्री आदि संतों को 9:15 पर परिषद में पधारना निश्चित था। मैं 9 बजे हॉल में मंत्री मुनिश्री के पास गया। सब संतों की उपस्थिति में खड़े होकर निम्नलिखित पत्र पढ़ा–

- ❖ आज से षट्मासिक मौन, एकांत के साथ साधना के उत्कर्ष के लिए कुछ नए प्रयोग प्रारंभ करने जा रहा हूं।
- ❖ मौन काल में आगम गाथाओं, अर्हत् वंदना, प्रतिक्रमण आदि के उच्चारण का अपवाद रहेगा।
- ❖ आवश्यक होने पर अपने विचारों को लिखकर अग्रणी, व्यवस्थापक मुनि सुमतिकुमारजी आदि संतों को बताया जा सकेगा।
- ❖ आगम ग्रंथों का यथासंभव स्वाध्याय का लक्ष्य रहेगा।
- ❖ प्रमाद और कषाय के उपशम, क्षयोपशम के लिए निरंतर सजग रहना।
- ❖ प्रमाद आत्मा की विस्मृति है और अप्रमाद आत्मा की सतत स्मृति है।
- ❖ कषाय अशांतिदायक है और अकषाय शांतिप्रदायक है।
- ❖ इन्द्रियों की प्रतिसंलीनता का अभ्यास।
- ❖ भाव क्रिया का अभ्यास।
- ❖ सालंबन ध्यान से निरालंबन ध्यान का अभ्यास।
- ❖ श्वासप्रेक्षा, शरीरप्रेक्षा आदि तथा कायोत्सर्ग-प्रतिमा आदि अनुप्रेक्षाओं के चल रहे प्रयोगों को और अधिक गति प्रदान करना।
- ❖ आसन, प्राणायाम, सहज कुंभक, गमनयोग, हास्ययोग आदि को यथावत् रखना है।
- ❖ 'जयं चरे, जयं चिट्ठे .... ।' यह आगम गाथा मेरी साधना का मूल आधार है, जो 81 वें जन्मवर्ष प्रवेश से गतिशील है। इससे द्रष्टा भाव तथा जागरूकता का विकास संभावित है।
- ❖ फिलहाल एक महीने के लिए यथासंभव प्रात:-सायं अन्न का वर्जन रखना।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

❖ स्वास्थ्य और साधना के अनुकूल रहने पर कुछ अपवादों के साथ उसे आगे भी बढ़ाया जा सकता है।

❖ पंचवर्षीय स्वावलंबन के जो संकल्प हैं, वे इस चौथे वर्ष में भी यथावत् रहेंगे।

नोट :—तीसरे वर्ष के अंतिम दो माह तथा चौथे वर्ष के प्रथम दो माह तक हथेली में घाव हो जाने के कारण मेरे वस्त्रों का प्रक्षालन मैं नहीं कर सका। इस निर्जरा का लाभ मुनि सुमतिकुमारजी ने प्राप्त किया।

❖ उपवास आदि का क्रम स्वास्थ्य की अनुकूलता पर रहेगा।

❖ एकांत कक्ष से बाहर आहार-पानी आदि के लिए संतों के कक्ष—कमरे में तथा गर्मी में बाहर छप्परे में शयन के लिए आने-जाने का क्रम गतिमान रह सकेगा।

❖ स्वास्थ्य और साधना की दृष्टि से खान-पान तथा औषध, पथ्य आदि के प्रति सजग रहने का भाव है।

❖ इसके अतिरिक्त और भी प्रयोग भावनानुसार यथावसर किये जा सकते हैं।

आध्यात्मिक अनुष्ठान

वीतराग साधना के प्रथम दिन चौविहार उपवास के साथ—

❖ मंगलभावना—श्री संपन्नोऽहं स्याम्...........। आरोग्ग ....। चंदेसु निम्मलयरा............ का कुछ समय तक जप।)

❖ महामंत्र की दसों दिशाओं में दस माला।

❖ नौ ग्रहों की नौ माला।

❖ काले धागे के मनकों पर उल्टे महामंत्र की माला।

❖ एक घंटा खड़े-खड़े ध्यान।

❖ एक घंटा शरीरप्रेक्षा।

❖ एक घंटा कायोत्सर्ग-प्रतिमा की अनुप्रेक्षा।

❖ चार दिशाओं में सात-सात लोगस्स का स्वाध्याय।

❖ आगम गाथाओं, भक्तामर, आत्मरक्षा कवच स्तोत्र, वज्रपंजर स्तोत्र, तिजयपहुत्त स्तोत्र, विघ्नहरण की ढ़ाल, भिक्षु स्मृति आदि का स्वाध्याय।

इसके बाद संतों से क्षमा और मंगल भावना का आदान-प्रदान हुआ। उस समय उदितमुनि तथा सुमतिमुनि आए और कहा— 'मुनिश्री! जब आप एकांत कक्ष में पधारेंगे, तब हम संतों की एकांत कक्ष के बाहर तक पहुंचाने की भावना है। कृपया आप मनाई नहीं करेंगे।' मैं मौन रहा। उन्होंने श्रव्य कार्यक्रम के साथ दृश्य क्रम भी बना दिया।

मंत्री मुनिश्री आदि संतगण महावीर जयंती के कार्यक्रम में पधार गए। मैंने वहीं पर हॉल में एक घंटा तक इष्ट का जप और ध्यान किया। परिषद में जाकर बोलने की भावना नहीं थी। मंत्री मुनिश्री की आज्ञा लेकर एकांत कक्ष में प्रवेश करने का मेरा मनोभाव पहले से ही था, किंतु संतों की भावना रही कि कुछ समय के लिए ही सही, मुझे कार्यक्रम में आना चाहिए व थोड़े शब्दों में ही सही, अपनी भावना व्यक्त करनी चाहिए। संतों के सुझाव को सम्मान देते हुए ठीक 10:18 मिनट पर मंच पर पहुंचा। मंत्री मुनिश्री को वंदना की और खड़े होकर लिखा हुआ निम्न पत्र पढ़ा—

त्रैकालिक ध्रुव—शुद्ध आत्मा की ओर प्रस्थान

13 अप्रैल, 2014, (विक्रम संवत् 2071, चैत्र शुक्ला 13) रविवार, समय 10 बजकर 20 मिनट।

'अधिष्ठायक मातंगसिद्धायिकासहिताय वर्धमानाय नमो नम:'

आज चिर प्रतीक्षित महावीर जयंती का पावन दिन उपस्थित हो गया है। मेरे लिए स्वर्णिम सूर्य का उदय हो रहा है। मेरे शरीर का कण-कण, रोम-रोम पुलकित तथा आतुर हो रहा है—आसनसिद्धि के अभ्यास के लिए, वाणी का मौन उस आसन-सिद्धि के अभ्यास को गतिशील बनाने में मुखरित एवं तत्पर दीख रहा है। आश्चर्य तो यह है कि अब मन भी मित्र बनकर उसमें चार चांद लगाने में उत्सुक दिखाई दे रहा है। इतना हो जाने के बाद, किस मोहकर्म की सेना की ताकत है कि वह मुझे वीतरागता के प्रशस्त पथ से परास्त कर सके?

तीर्थंकर महावीर का आदर्श जीवन मेरे सामने है। उनकी आगमवाणी मेरी आत्मसाधना का मूल आधार है।

पूर्ववर्ती सभी आचार्यों तथा वर्तमान आचार्यश्री महाश्रमणजी का आशीर्वाद मुझे प्राप्त है। षट्मासिक मौन, एकांत साधना की इस मंगल बेला में अभी यहां विराजित धर्मसंघ के दूसरे मंत्री मुनिश्री सुमेरमलजी (लाडनूं), अग्रणी मुनि विजयकुमारजी, अग्रणी मुनि

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

उदितकुमारजी, अग्रणी मुनि सुमतिकुमारजी आदि 13 संतों की उपस्थिति, उनमें वर्तमान में आचार्यश्री महाश्रमणजी के अनेक बाल शैक्ष मुनियों में एक मुनि रम्यकुमारजी भी है, जो मंत्री मुनिश्री एवं उदितमुनि के संरक्षण में अपना विकास कर रहे हैं। इन सब प्रबुद्ध श्रमणों की मुझे सद्भावना, मंगल कामना प्राप्त हो रही है। इससे अधिक और क्या आध्यात्मिक उपहार हो सकता है?

आभार अत:करण से

आचार्यत्रय की महती कृपा से मुझे दीर्घकाल से अग्रणी मुनि सुमतिकुमारजी एवं उनके सहयोगी मुनि देवार्यकुमारजी, मुनि आदित्यकुमारजी का साधना में आत्मीय सहयोग मिला, मिल रहा है और गुरुकृपा से मिलता रहेगा।

श्रावक समाज के प्रति मंगल भावना

आचार्यश्री के आशीर्वाद एवं अग्रगण्य मुनि सुमतिकुमारजी आदि संतों के सद् प्रयत्न से सरदारशहर प्रवास में श्रावक समाज की भक्ति-भावना, ज्ञान, दर्शन, चारित्र तथा तप आदि प्रतिदिन प्रवर्धमान रहें, यह मेरी मंगल भावना है।

साक्षी भाव से देखें

यहां विराजमान सकल त्रैकालिक ध्रुव-शुद्ध आत्मा को बद्धांजलिपूर्वक भावभरा वंदन करता हूं। सरदारशहर में स्थिरवासी तेरापंथ धर्मसंघ के प्रथम मंत्री मुनिश्री मगनलालजी, घोर तपस्वी मुनिश्री सुखलालजी, प्रथम शासन गौरव मुनिश्री बुद्धमल्लजी आदि यहां स्वर्गवासी अनेक साधु-साध्वियों की भावांजलिपूर्वक स्मृति करता हूं।

वर्तमान में यहां विराजित दूसरे मंत्री मुनिश्री सुमेरमलजी की बद्धांजलि एवं प्रणतिपूर्वक आज्ञा लेकर और अग्रणी मुनि सुमतिकुमारजी के व्यवस्थापकत्व में बहुत-बहुत प्रसन्नता, जागरूकता तथा 'जयं चरे'—गमनयोग के साथ मेरे लिए आरक्षित एकांत कक्ष में जा रहा हूं। आप सभी शांत भाव एवं साक्षी भाव से अवलोकन करेंगे।

प्रवेश के साथ सुनिश्चित मंगल अनुष्ठान तथा षट्मासिक एकांत, मौन, ध्यान आदि का उपक्रम प्रारंभ हो गया।

पहला कदम दूसरे कदम के लिए

साधक के लिए जनता की भीड़ से दूर रहना कठिन है भी, नहीं भी, किंतु विचारों की भीड़ से निजात पाना कठिनतम साधना है। विचारों की भीड़ का व्यावहारिक कारण एक से दो होना—यानी जनसंपर्क बनता है। आचार्य पूज्यपाद स्वामी (दूसरा नाम आचार्य देवनंदी) ने समाधि तंत्र में लिखा है—

'जनेभ्यो वाक्, ततः स्पन्दो, मनसश्चित्तविभ्रमाः।
भवन्ति तस्माद् संसर्गं जनैर्योगी ततस्त्यजेत्॥

जनेभ्यो-लोगों के संसर्ग से वचन की प्रवृत्ति होती है। चित्त चलायमान होता है। तस्मात्-चित्त की चंचलता से, चित्त विभ्रमा: भवंति-चित्त में नाना प्रकार के संकल्प उठने लगते हैं। मन क्षुभित हो जाता है। ततः इसलिए योगी-योग में संलग्न होने वाले, अन्तरात्मा साधु को चाहिए कि वह जनै:संसर्गं त्यजेत्-लौकिकजनों के संसर्ग का परित्याग करे। ऐसे स्थान में योगाभ्यास करने न बैठे, जहां पर लौकिक जन जमा हों।

अनावश्यक विचार के प्रवाह को रोकने के लिए पहला कदम है—बाह्य जनता की भीड़ से मुक्त होना और दूसरा कदम है—विचारों की भीड़ को क्रमशः समाप्त करने के लिए ध्यानादि का अभ्यास करना।

पट्टी क्यों बंधी हुई है

एक राजस्थानी लोकोक्ति है—'आज ही माथो मुंडायो, आज ही ओला पड़ग्या।' 13 अप्रैल से मौन, एकांत प्रारंभ किया और 16 अप्रैल को ही दाएं पैर की पिंडली के प्रारंभ में तेज खुजली के साथ एक कठोर चकता-सा उभरा। मैंने तीन दिन तक उस पर पानी का प्रयोग किया, किंतु शांत होने की अपेक्षा वह मवाद से भर गया। इतना दर्द शुरू हुआ कि पैर जमीन पर रखना मुश्किल हो गया। फिर भी जैसे-तैसे चलने का क्रम चलाए रखा। मैं लिखकर संतों को बताने वाला ही था, उससे पूर्व ही सुमतिमुनि ने पूछ लिया—'आपके पैर में क्या हुआ? पट्टी क्यों बंधी हुई है?' मैंने तीन-चार दिन का घटनाक्रम लिखकर बताया, तब डॉ. जतनजी बैद की देख-रेख में कम्पाउन्डर से चीरा लगाकर मवाद बाहर निकाला और दवा लगाकर पट्टी लगा दी। दवा के साथ चार दिन इंजेक्शन भी लगाए। पैर की नॉर्मल-सहज स्थिति होने में एक महीना लग गया। इससे ध्यान आदि के प्रयोगों में कठिनाई तो रही, किंतु मैं संवेदन से लगभग मुक्त रहा, वेदना को देखने का अभ्यास किया। एक माह तक प्रातः एवं सायं अन्न-वर्जन का जो संकल्प था, उसको स्थगित करना पड़ा, क्योंकि अधिकांश एलोपैथिक दवाएं अन्न खाने के बाद ली जाती हैं। ऐसे मैं संकल्पों में प्रायः अपवाद रखता हूं, इसलिए संकल्प खंडित होने की स्थिति नहीं बनती। इस एक माह में मुनि सुमतिकुमारजी आदि संतों को मेरे कारण अतिरिक्त श्रम हुआ। इसके लिए क्षमा....।

सन् 2001 से प्रतिवर्ष होने वाला मेरा एकमासिक ध्यान शिविर 13 वर्ष के बाद अब इस एकांत मौन, ध्यान साधना के अन्तर्गत आ गया है।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

दैनिकचर्या

प्रातः तीन से चार बजे के बीच उठना और सूर्योदय तक की चर्या-महामंत्र आदि का जप, स्वाध्याय, आधा घंटा खड़े होकर ध्यान, आसन, अर्हत् वंदना, लेखपत्र, गुरु-वंदना, प्रतिक्रमण, प्रतिलेखन आदि। उसके बाद शौच आदि शारीरिक क्रियाएं। गमनयोग के साथ भ्रमण, नाश्ता-दुग्धाहार आदि। लगभग 8:30 से 11:30 तक ग्रहों पर नवकार मंत्र की नौ माला, कायोत्सर्ग-प्रतिमा, कायोत्सर्ग के साथ 15-15 मिनट के ध्यान आदि के प्रयोग। उसके बाद आहार, विश्राम आदि। 2 से 4 बजे तक आगम ग्रंथों तथा प्रेरणादायी अन्य साहित्य का स्वाध्याय-वाचन तथा आत्मकथा लेखन आदि। उसके बाद प्रतिलेखन, कुछ व्यायाम, हास्ययोग, दुग्धाहार, प्रत्याख्यान। रात्रि में गुरु-वंदना, प्रतिक्रमण, अर्हत् वंदना, कुछ मंत्र जप, ध्यान, कायोत्सर्ग आदि के साथ शयन करीब 10 बजे।

इस दैनिकचर्या में छोटे-बड़े दिनों के कारण तथा स्वास्थ्य आदि को लेकर भी कुछ परिवर्तन हो सकेंगे।

प्रथम छह माह के कुछ प्रयोग

13 अप्रैल से ही मन में एक संकल्प किया कि यथासंभव जो बैठने, सोने, ध्यान आदि का स्थान अभी निश्चित है (जहां पट्ट लगा हुआ है) उसको इस वर्ष की गर्मी, वर्षा तथा सर्दी में भी न बदला जाए। केवल गर्मी में बाहर शयन के लिए संतों ने दूसरे पट्ट की व्यवस्था की, लगभग तीन माह तक उसका उपयोग किया।

एकांत कक्ष में रहते चोलपट्टे के सिवाय शरीर पर वस्त्र नहीं रखना। (चार माह के बाद यह प्रयोग स्थगित कर दिया।)

अक्षय तृतीया से तीन प्रयोग

एकांत कक्ष के बाहर खुला आकाश, उन्मुक्त हवा, खेजड़ी के वृक्ष की छाया तथा तुलसी के पौधे के सामने बैठकर एवं खड़े होकर भी 2 से 3 घंटे तक अन्य प्रवहमान प्रयोगों के साथ तीन और प्रयोगों को 15-15 मिनट के लिए आरंभ किया।

पहला प्रयोग–श्वासों के बीच के अन्तराल को देखना। श्वास के भीतर या बाहर के लिए मुड़ने से पहले एक क्षण है, जब तुम श्वास नहीं लेते तो संसार में नहीं होते। भीतर आती श्वास एक नया जन्म है, बाहर जाती श्वास मृत्यु है। दोनों के बीच का अन्तराल बहुत छोटा है, परन्तु तीक्ष्ण तथा निष्ठापूर्ण अवलोकन और सजगता से तुम उस अन्तराल का अनुभव प्राप्त कर पाओगे। फिर कुछ नहीं चाहिए। तुम धन्य हुए, तुमने जान लिया, घटना घट गई।

बस, भीतर आती हुई श्वास को, उसके मार्ग को देखो। जब श्वास तुम्हारे नासापुटों को छूए, उसे वहां महसूस करो, फिर श्वास को भीतर जाने दो। पूरी सजगता के साथ उसके साथ बढ़ो। जब श्वास के साथ गहरे और नीचे उतरो तो श्वास का साथ मत छोड़ो। उसके साथ युगपद होकर चलो। श्वास व चेतना एक हो जाए, तभी उस बिंदु को पकड़ पाना संभव होगा। श्वास न तो बाहर जा रही है, न भीतर आ रही है। श्वास पूरी तरह ठहर गई है। उस ठहरने में ही मंगल क्षण घटता है।

दूसरा प्रयोग मनोदशाओं को बाहर फेंकना

जब कभी तुम अनुभव करते हो कि मन शांत नहीं है, वह तनावपूर्ण है, चिंतित है, शोर से भरा है, निरंतर सपने देख रहा है तो यह प्रयोग करना–पहले गहरी श्वास छोड़ना। सदा प्रारंभ करना श्वास छोड़ने के द्वारा। जितना संभव हो श्वास को बाहर निकाल देना। पेट को भीतर की ओर खिंचना और उसी तरह बने रहना, कुछ सैकंड के लिए श्वास नहीं लेना, फिर शरीर को श्वास लेने देना। गहराई से श्वास भीतर लेना। जितना तुमसे हो सके, फिर दोबारा ठहर जाना, कुछ सैकंड के लिए। छोड़ने के बाद जितने रुको, उतना लेने के बाद भी रुको। समग्रता से श्वास छोड़ो और समग्रता से लो और एक लय बना लो।

अनुभव करो कि एक परिवर्तन तुम्हारे सम्पूर्ण अस्तित्व में उतर रहा है। वह मनोदशा जा चुकी होगी। एक नई आबो-हवा तुममें प्रवेश कर चुकी होगी। (ये दोनों प्रयोग ओशो ध्यान विधियों से साभार।)

तीसरा प्रयोग एकाग्रता तथा स्वास्थ्य के लिए

निम्नलिखित मंत्रों का उल्लिखित केंद्रों पर ध्यान करना।

मंत्र	स्थान	केन्द्र	परिणाम	नोट
ॐ	मस्तक (चोटी) का	ज्ञान केन्द्र	ज्ञान विकास हेतु	ई-सन् 1 0 के गंगाशहर मर्यादा महोत्सव पर श्रद्धेय आचार्यश्री महाप्रज्ञ ने संत समुदाय को इस मंत्र का प्रायोगिक प्रशिक्षण दिया। तभी से मेरा यह प्रयोग प्रायः प्रतिदिन अनवरत रूप से चल रहा है।
ह्रां	कंठ	विशुद्धि केन्द्र	गले की बीमारी हेतु	
ह्रीं	हृदय व फेफड़े	आनंद केन्द्र	हृदय तथा श्वास की बीमारी हेतु	
ह्रूं	पेट व लीवर	तेजस केन्द्र	दुर्बल लीवर व पाचन संस्थान हेतु	
ह्रौं	पेडू का स्थान	स्वास्थ्य केन्द्र	प्रोस्टेट, मूत्राशय की बीमारी हेतु	
ह्रः	पूरा चेहरा		पवित्र आभामंडल हेतु	

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

'**अ.सि.आ.उ.सा.नम:**'–पहले एक-एक मंत्र का उच्चारण तन्मयता से लयबद्ध करना, फिर एक साथ उच्चारण करना। (आचार्यश्री महाप्रज्ञजी द्वारा निर्दिष्ट)

नोटः– (यह प्रयोग तीन महीने तक किया। अब भी समय-समय पर चलता है।) दोनों दृष्टियों से उपयोगी लगा। जो प्रयोग बाहर खुले में चल रहे थे, वे अनवरत रूप से अभी भी चल रहे हैं।

भावना का असर होता है

वैद्य मुन्नालालजी सेठिया ने मेरी नाड़ी देखकर एक मास के लिए औषधि दी। उसका उपयोग किया तथा सुमतिमुनि, बजरंगजी जैन, उनकी धर्मपत्नी लताजी के विशेष कहने पर कुछ दिनों के लिए घी का प्रयोग शुरू किया। इन दोनों के सेवन से पूर्व तथा पश्चात् यह भावना करता कि यह औषधि और घी दोनों मेरे स्वास्थ्य एवं साधना में सहयोगी बने, क्योंकि भावना का भी असर होता है।

दूसरे छह माह के दो प्रयोग

आचार्यश्री को ज्ञात करवाकर छह माह के एकांत प्रवास को बारह माह में परिवर्तित कर दिया गया। इस दौरान विशेष लक्ष्य के साथ निम्नांकित प्रयोग किए।

पहला प्रयोग–'**णमो अरहंताणं**' का ज्ञान केन्द्र पर सफेद रंग में तन्मयता से उच्चारण करना। इसकी तरंगों द्वारा ज्ञान केन्द्र सक्रिय होता है और मस्तिष्क की कोशिकाएं शक्तिशाली बनती है। सफेद रंग के ध्यान के साथ यह प्रयोग किया जाता है तो निःसंदेह ऊर्जा का–शक्ति का भंडार बढ़ता है।

दूसरा प्रयोग–ऐसे तो **मूल बंध** तथा **ज्ञानमुद्रा** का प्रयोग वर्षों से चल रहा है, किंतु अब अधिक समय तक अभ्यास करने का लक्ष्य बनाया है।

❖ **सर्वोच्च लक्ष्य सिद्ध**-'**सिद्धा**' मंत्र का दसों दिशाओं की प्रत्येक दिशा में छह-छह माला का जप संपन्न किया। यह प्रयोग 21 दिनों तक चला।

आचार्यश्री तुलसी जन्म शताब्दी का समापन

25 अक्टूबर, 2014 को आचार्यश्री तुलसी की जन्म शताब्दी का मुख्य आयोजन पूरे धर्मसंघ में चल रहा था। मैं भी अपने एकांत कक्ष में उपवास के साथ परम उपकारी, परम श्रद्धेय गुरुदेव श्रीतुलसी की स्मृति में लंबे समय तक ध्यान में बैठा। परम शांति का अनुभव हुआ। उस रात्रि की नींद भी योगनिद्रा जैसी बन गई।

पूज्यश्री की यात्रा मंगलकारी हो

8 नवम्बर, 1 03, आचार्यश्री महाश्रमणजी की सुदीर्घ 'अहिंसा यात्रा' निर्विघ्न हो, इस दृष्टि से मंगल भावना अनुष्ठान पूरे धर्मसंघ में आयोजित हुआ। जिसमें निश्चित समय तथा निश्चित मंत्र जप का कार्यक्रम चला। मैंने भी उपवास के साथ अपने एकांत कक्ष में पौन घंटे तक निश्चित मंत्र का जप किया।

भाव क्रिया तथा भाव-शुद्धि का अभ्यास

21 जनवरी, 2015, (विक्रम संवत् 2071, माघ शुक्ला एकम, बुधवार) आज मेरा 85 वें जन्मवर्ष में उपवास, इष्ट जप आदि के साथ प्रवेश हुआ। 84 वर्ष तो समाप्त हो गए, किंतु चार गति, चौरासी लाख जीव योनि का जो चक्कर है, वह समाप्त हो, तब साधना से सिद्धि मिले। इसके लिए प्रयास किया और संकल्पित हुआ कि इस 85 वें जन्मवर्ष में भाव-विशुद्धि का विशेष अभ्यास करना है। शुद्ध ध्यान में बड़ी बाधा आ रही है। सबसे बड़ी बाधा तो अनावश्यक विचारों तथा उन्हीं विचारों का बार-बार आते ही रहना तथा अशुभ–बुरे विचारों के सिलसिले की है।

आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने मेरे लिए प्रदत्त एक संदेश में लिखा था–भाव क्रिया एवं भाव-विशुद्धि अप्रमाद का सिंहद्वार है।' इस वर्ष में भाव-शुद्धि के लिए भाव क्रिया एवं भाव सत्य, इन दोनों का अभ्यास करना है। इसका परिणाम आएगा भाव-विशुद्धि। इस संबंध में आचार्यप्रवर महाप्रज्ञजी के विचार बड़े उपयोगी हैं–भाव शुद्धि का अभ्यास सर्वोत्तम है। भाव-शुद्धि का हेतु है, भाव सत्य। पूछा गया–'भंते! भाव सत्य द्वारा जीव क्या प्राप्त करता है?' 'गौतम! भाव सत्य से जीव भाव-शुद्धि प्राप्त करता है।' वीतरागता की साधना वही व्यक्ति कर सकता है, जो भाव-शुद्धि में रहता है। इसके लिए भाव सत्य को समझना भी जरूरी है।

गोम्मटसार में कहा है दो कारणों से स्पंदन होता है–एक मोहकर्म के उदय से और दूसरा मोहकर्म के विलय से। जो मोहकर्म के उदय से स्पंदन होता है वह भाव असत्य है। कर्मशास्त्रीय भाषा में इसे कहा जाता है 'औदयिक भाव।' मोह कर्म के विलय से जो चेतना में स्पंदन होता है, वह है 'क्षायोपशमिक भाव'–भाव सत्य। वीतरागता की साधना का क्रम यह बनता है कि मोह के विलय से कषाय, नोकषाय तथा राग-द्वेष का क्रमशः पूर्ण विलय–क्षय होगा, तभी वीतरागता उपलब्ध होगी।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अभी तो हमें इस छट्ठे गुणस्थान में भाव-विशुद्धि के लिए भाव क्रिया तथा भाव सत्य को (क्षायोपशमिक भाव) बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए। भाव-शुद्धि का परिणाम आएगा शुभ लेश्या, शुभ परिणाम, शुभ अध्यवसाय से कार्मण शरीर का कमजोर होना व क्रमशः उसका पूर्ण विलय होना। फिर आत्मा अपने शुद्ध स्वरूप में प्रतिष्ठित हो जाएगी।

हे! ध्रुव आत्मा (प्लुत स्वर में)

हमारे जन्म-जन्म के ममत्व के संस्कार कितने गहरे जमे हुए हैं, चाहने पर भी नहीं छूटते। उनमें एक संस्कार है–जब भी कोई बीमारियां, अन्य कोई अप्रिय स्थिति आती है तो हमारे मुंह से तत्काल सीधा शब्द निकलता है–हे मां! हे मावड़ी। व्यवहार दृष्टि से मां की स्मृति होना कोई बुरा नहीं, किंतु जो व्यवहार से ऊपर उठकर निश्चय का जीवन जीना चाहता है, उसके लिए सतत आत्मा की ही स्मृति रहनी चाहिए। इसके लिए पुराने संस्कारों को मिटाने तथा नए संस्कारों के निर्माण के लिए कुछ नया अभ्यास करना चाहिए।

इस संदर्भ में मेरे मन में एक भाव पैदा हुआ कि हे मां! के स्थान पर हे! ध्रुव आत्मा! बोलने का अभ्यास किया जाए तो हमारा निश्चय का पक्ष बलवान बन सकेगा। इस वर्ष में सजगता के साथ इसका भी अभ्यास करने का लक्ष्य बनाया है।

सागारी संथारा

जैन धर्म की एक प्राचीन प्रशस्त परंपरा रही है कि आपात स्थिति में तथा प्रतिदिन सोने से पूर्व सागारी संथारा करके शयन करना चाहिए। इसमें कोई व्यावहारिक कठिनाई भी नहीं आती और चारों आहार के त्याग का सहज ही बड़ा लाभ मिल जाता है। सागारी संथारे का पाठ है–

'**आहार शरीर उपधि, पचखुं पाप अठार। मरण पाऊं तो वोसिरे, जीऊं तो आगार।।**'

इस 85 वें जन्मवर्ष में इसका भी प्रयोग करने की भावना है।

सतत स्मृति के लिए

हर क्रिया से पूर्व जागरूकता तीन-तीन बार बोलना। इससे द्रव्य क्रिया भाव क्रिया बन जाएगी। इसकी सतत स्मृति बनी रहे, इसके लिए 'जागरूकता' से अंकित एक छोटा पन्ना पास रखता हूं और उसका अवलोकन करता रहता हूं।

एक कल्पना ने साकार रूप लिया

एकवर्षीय एकांत मौन, ध्यान आदि के जो प्रयोग 13 अप्रैल, 2014, चैत्र शुक्ला 13 को महावीर जयंती के पावन अवसर पर प्रारंभ किये थे, वे आज 2 अप्रैल, 2015, चैत्र शुक्ला 13 को सानंद संपन्न हुए। इसके साथ चिर-इच्छित भावना का एक भाग पूर्ण हुआ। इस साधनाकाल में आचार्यश्री का आशीर्वाद, अग्रणी तथा व्यवस्थापक मुनि सुमतिकुमारजी तथा उनके सहयोगी संतों एवं सरदारशहार के श्रावक समाज का भक्ति प्रधान सहयोग सदा प्राप्त हुआ। सबके प्रति कल्याण भावना।

प्रवास स्थान का परिवर्तन

आचार्यश्री को ज्ञात कर प्रवहमान साधना को आगे भी गतिशील रखते हुए इसी महावीर जयंती के अवसर पर ही श्रीसमवसरण से विहार कर नाहटा भवन (जो किशनलालजी आदि चार भाइयों का है) में प्रवेश किया। विशाल भवन के ऊपर के पूर्व दिशा के एक रूम में मेरा रहना हुआ। शांत वातावरण एवं वहां से ऊगता हुआ सूर्य प्रायः प्रतिदिन दिखाई देता। उसका बहुत अच्छा उपयोग किया।

तीन माह का एक नया प्रयोग

नाहटा भवन के ग्रीष्मकालीन साढ़े तीन महीनों के प्रवास में हिन्दी अनुवादित भगवती आगम का वाचन किया। ध्यानाभ्यास का क्रम कुछ परिवर्तित रूप में 15-15 मिनट के चार भागों में किया। श्वासप्रेक्षा, शरीरप्रेक्षा, मुद्राप्रेक्षा (जिस मुद्रा में शरीर अडोल स्थित है, केवल उसको भावचक्षु से देखना और 'एगो मे सासओ अप्पा' का ध्यान। इस अल्पकालीन ध्यान में अतीत, अनागत के बार-बार आने वाले अनावश्यक विचारों पर कुछ नियंत्रण हुआ, ऐसा अनुभव किया।)

इन चार माह के प्रवास में प्राय9शारीरिक सुस्ती एवं खाने की अरुचि बनी रही। कमर का दर्द तथा बाएं पैर के घुटने के नीचे के भाग का दर्द कभी अधिक-कभी कम रूप में चलता रहा। दर्द का संवेदन कम किया तथा औषधि के स्थान पर वेदनाप्रेक्षा का अभ्यास चालू रखा। अब ये शारीरिक स्थितियां सहज रूप में आ गई हैं।

चातुर्मासिक प्रवेश

आचार्यश्री के आदेशानुसार विक्रम संवत् 2072, द्वितीय आषाढ़ शुक्ला एकम , शुक्रवार, 17 जुलाई, 2015 को तेरापंथ भवन में प्रवेश किया। मेरी एकांत साधना की दृष्टि से इस विशाल भवन के नीचे के पूर्वी-दक्षिणी भाग के कमरे आरक्षित थे।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

उपवन का उपयोग

तेरापंथ भवन से सटा हुआ ही श्री मूलचंदजी मालू का विशाल पार्क है। उसमें मैंने प्राय: प्रतिदिन भ्रमण, आसन, प्राणायाम एवं ध्यान का उपक्रम प्रारंभ किया। लगभग 1 घंटा यह क्रम चलता और उपवास के दिन 3 से 4 घंटा पार्क तथा पार्क-स्थित पिरामिड में अच्छा क्रम जम गया। ऐसे हरीतिमा मंडित स्थान मेरी साधना में सहज सहयोगी बन जाते हैं।

अठारह भक्त का तप

द्वितीय आषाढ़ शुक्ला 13 से श्रावण कृष्णा 6 तक, (29 जुलाई से 5 अगस्त तक) पहली बार अठाई-आठ दिन तप का अनुष्ठान किया, जो बिना किसी बाधा के संपन्न हुआ। उसके कुछ सहयोगी कारण बने हैं, जैसे–स्वयं का संकल्प, संतों की सद्भावना, पास वाले पार्क में 3-4 घंटा स्वाध्याय, ध्यान। इनके सिवाय एक बड़ा निमित्त बना स्वमूत्र पान का प्रयोग। चार दिन तक 3-4 बार पानी तथा स्वमूत्र पान का क्रम चला। चौथे दिन उल्टी-वमन हुई। पांचवें दिन बहुत तीव्रता से दो बार उल्टी हुई। जिससे कफ, पित्त बाहर निकले। उससे 15-20 मिनट तक बहुत सुस्ती रही, फिर नॉर्मल स्थिति बन गई। दंत-प्रक्षालन से मुंह की सफाई भी अच्छी रही। छठे, सातवें दिन 2-4 घूंट से अधिक मूत्र पान नहीं कर सका, उबाक आने लगी, जी मचलाने लगा। आठवां दिन बिना मूत्र पान के गया। इन आठ दिनों में शौच क्रिया भी तीन-चार बार हो जाने से अच्छा रहा। जीवन में एक नया अनुभव हुआ। स्वाध्याय, ध्यान आदि का क्रम भी प्राय: यथावत् चलता रहा। यह लिखने का इतना ही तात्पर्य है कि कोई पढ़कर किसी समय लाभान्वित हो सके।

मैं एकत्व विभक्त आत्मा हूं

समयसार की 49 तक की गाथाओं का हिन्दी टीका सहित दूसरी बार वाचन के बाद 16 नवम्बर, 2015, सोमवार को अपने आप चिन्तन-मनन चालू हो गया, जो दिन-रात चलता रहा। फिर उसका निष्कर्ष निम्न शब्दावली में नितरकर सामने आया।

निश्चयनय–द्रव्यार्थिकनय के अनुसार यह ज्ञायक स्वभावी (जिसका स्वभाव केवल जानना ही है) ध्रुव जीव द्रव्य, अन्य सर्व द्रव्यों, सर्व कर्मों, सर्व कर्मजन्य अवस्थाओं और नवतत्त्वों, 14 गुणस्थानों आदि से सर्वथा भिन्न है एवं अपने आप से सर्वथा अभिन्न है। जिसको समयसार में 'एकत्व-विभक्त आत्मा' कहा गया है। (एकत्व-स्व से, निज से अभिन्न, विभक्त-पर से भिन्न) यह एक अखण्ड, अविनाशी, ध्रुव आत्मा है। अनन्तकाल से यह जीव-आत्मा पर द्रव्यों के साथ एक क्षेत्रावग्राही होकर रहने पर भी अपने परम पारिणामिक भाव के कारण तीनों ही काल में अपने शाश्वत चिन्मय स्वरूप में विराजमान है। किंचित् मात्र भी अजीवत्व को-जड़त्व को प्राप्त नहीं किया।

'आत्मस्वभावं, परभावभिन्नं'–इस भेद ज्ञान की सही समझ ही निश्चय सम्यग्दर्शन है।

जिस समय यह जीव द्रव्य विजातीय तत्त्वों से–कर्मों से आबद्ध–अशुद्ध होता है, उसी समय में निश्चयनय के अनुसार कर्मों से मुक्त-शुद्ध भी होता है। कहा है–'सिद्धां जैसो जीव है' ......भगवान आत्मा का सिद्ध भगवंतों जैसा ही शुद्ध स्वरूप है। अशुद्धता पर द्रव्य के संयोग से आती है। उसमें मूल द्रव्य तो अन्य रूप नहीं होता, मात्र परद्रव्य के निमित्त से अवस्था मलिन हो जाती है। पर्याय (अवस्था) दृष्टि से मलिन दिखाई देता है। जीव का ज्ञायक स्वभाव तो सदा शुद्ध ही रहता है, किंतु मोह-रागादि परभावों की मिलावट हो जाने से अशुद्ध दिखाई देता है। पानी स्वभाव से तो निर्मल ही है, किंतु कीचड़ मिलने से मैला-मलिन दिखाई देता है। जैसे फिटकरी आदि के प्रयोगों से मैलापन दूर हो जाने से पानी अपने निर्मल रूप में आ जाता है। वैसे ही भेद ज्ञान तथा ज्ञान-दर्शन-चारित्र की साधना से रागादि के मलिन भाव तिरोहित हो जाने से आत्मा का शुद्ध स्वरूप प्रगट हो जाता है।

चिन्मय-ज्ञानमय आत्मा की अखंड ज्योति भीतर तो निरंतर जल ही रही है, किन्तु उस पर विजातीय तत्त्वों का आवरण आ गया। जैसे–पानी पर काई का आवरण। काई हटने से पानी प्रगट हो जाता है, वैसे ही विजातीय तत्त्व हटने से आत्मज्योति अनावृत हो जाती है।

इस सारे संदर्भ में व्यवहारनय ही उपयोगी बनता है। उसके बिना परम निश्चय का लक्ष्य प्राप्त नहीं हो सकता। नव तत्त्वों पर श्रद्धा होना ही व्यवहार सम्यक्दर्शन है, इसके साथ सम्यक् ज्ञान, सम्यक् चारित्र होने से ही मोक्ष का मार्ग प्रशस्त होता है। जैसे म्लेच्छ (अनार्य) की भाषा के बिना म्लेच्छ (अनार्य) को समझाया नहीं जा सकता, उसी प्रकार व्यवहारनय के बिना परमार्थ (निश्चय) को नहीं जाना जा सकता। इसलिए समयसार में निश्चयनय के साथ व्यवहारनय को भी एक सीमा तक परम उपयोगी माना है।

समयसार में निश्चयनय-शुद्धनय को भूतार्थ–सत्यार्थ (विद्यमान अर्थ को बताने वाला) कहा गया है और व्यवहारनय को अभूतार्थ-असत्यार्थ (अविद्यमान अर्थ को बताने वाला) कहा गया है। परन्तु जब मुख्य रूप से व्यवहारनय का प्रतिपादन होता है, तब निश्चयनय गौण हो जाता है और वह अभूतार्थ–असत्यार्थ की श्रेणी में आ जाता है एवं व्यवहारनय भूतार्थ–सत्यार्थ बन जाता है। ऐसा मुख्य-गौण की अपेक्षा से कहा गया है। निश्चय और व्यवहार इन दोनों के बारे में जितनी भी मेरी धारणा-जानकारी थी, वह इस ग्रंथ के वाचन से और अधिक स्पष्ट एवं परिपुष्ट हो गयी।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

पुनः श्रीसमवसरण में

सन् 2015 का तेरापंथ भवन का चातुर्मासिक प्रवास संपन्न कर 27 नवम्बर को पुनः श्री समवसरण में प्रवेश किया। जहां 2014 में मेरी एकांत साधना का एकवर्षीय अनुष्ठान संपन्न हुआ था। इस बार मेरा एकांत कक्ष बना दक्षिण की ओर का ऊपर का कमरा। स्थान आदि की अनुकूलता-प्रतिकूलता इन दोनों में मध्यस्थ भाव रखना मेरी साधना का लक्ष्य है। इसलिए दोनों की संवेदनाओं से मुक्त रहकर केवल जैसा है, वैसा जानना-अनुभव करना है।

अविलम्ब करते रहो; करते रहो

29 से 31 दिसम्बर, इन तीन दिनों में गैस का इतना उग्ररूप उत्पन्न हुआ कि उबासियां पर उबासियां, डकारें पर डकारें और छाती पर इतना भयंकर दबाव-तनाव कि सोने में, बैठने में कठिनाई हो गई। स्वाध्याय, ध्यान आदि की क्रियाएं भी सुचारू रूप से नहीं कर सका। आगम की यह गाथा पुनः-पुनः स्मृति पटल पर उभरने लगी–

'जरा जाव न पीलेई, वाही जाव न वड्ढई।
जाविंदिया न हायंति, ताव धम्मं समायरे॥'

तीन दिन बाद वैद्य श्री मुन्नालालजी सेठिया द्वारा प्रदत्त दवा से गैस पर क्रमशः नियंत्रण हुआ। वस्तुतः यह शरीर बीमारियों का घर है। कब कौनसी बीमारी का विपाकोदय हो जाए, कोई पता नहीं चलता। इसलिए आत्महित के लिए जो करने का है, वह अविलम्ब करते रहो-करते रहो। इसमें ही जीवन का सार है। इस बीमारी के बाद पथ्य की दृष्टि से भी और अधिक जागरूक बना हूं।

86 वें जन्मवर्ष में प्रवेश

'अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः।'

1 फरवरी, 2016, विक्रम संवत् 2072, माघ शुक्ला एकम, मंगलवार। उपवास आदि मंगल अनुष्ठानों के साथ 86 वां वर्ष प्रारंभ हुआ। गत वर्षों के एकांत प्रवास-साधना का सिंहावलोकन तथा इस वर्ष में करणीय साधना का निर्णय-इन्द्रिय प्रतिसंलीनता एवं कषाय प्रतिसंलीनता का और अधिक सजगता के साथ अभ्यास करना। ये दोनों ही अन्तर्मुखी-आत्मोन्मुखी बनने के महान माध्यम हैं। इन्द्रिय प्रतिसंलीनता के अन्तर्गत चक्षु-संयम, संकेत-संयम, खाद्य-संयम आदि। कषाय उपशांति के लिए–ध्यान, अनुप्रेक्षा-भावना आदि के प्रयोग।

मन की मूर्च्छा तोड़ने वाले विषयों का अनुचिंतन करना अनुप्रेक्षा है और स्वयं को अनुप्रेक्षा से बार-बार भावित करना भावना है। आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के शब्दों में ' अनुप्रेक्षा का मूल तत्त्व है–प्रेक्षण-चिंतन के द्वारा लक्ष्य के अनुरूप चित्त का निर्माण करना। भावना का मूल तत्त्व है–भाव्य के अनुरूप चित्त का निर्माण करना। जो हम होना चाहते हैं, वैसे चित्त का निर्माण करना। तात्पर्य की दृष्टि से दोनों बहुत निकट आ जाती हैं।' मोहावृत आत्मज्योति को अनावृत करने के लिए दोनों का अभ्यास अनिवार्य है।

अनुप्रेक्षा के प्रयोग

कुछ प्रयोग पहले से चल रहे हैं, कुछ शुरू किये जा रहे हैं।

1. 'विषमता विसर्जित, समता प्रतिष्ठित' इस शब्दावली का वाचिक, मानसिक उच्चारण करना। 5 मिनट।

(आधुनिक शब्दों में–'नकारात्मक भावों का विसर्जन, सकारात्मक भावों का संवर्धन।')

2. बार-बार आने वाले असद् विचार, अनावश्यक विचार तथा कषाय, वासना की मलिन तरंगें, ये क्रमशः उपशांत, शांत-प्रशांत, समाप्त हों-समाप्त हों। 5 मिनट तक दोहराना। जिससे वीतरागता का पावन पथ प्रशस्त होता जाए।

अभिनव-अनुप्रेक्षा

'सिद्धा-सिद्धा---।' का दशों दिशाओं में जप करने के बाद निम्न अनुप्रेक्षा को उच्चारित करना–'आगे सिद्ध, पीछे सिद्ध, दाएं सिद्ध, बाएं सिद्ध, विदिशाओं में सिद्ध, ऊपर सिद्ध, नीचे सिद्ध।' सिद्धों के मध्य में स्थित साधक मुनि ताराचन्द की यह योग आत्मा, उपयोग-ज्ञान आत्मा के सहयोग से, कषाय आत्मा का क्षयकर निकट भवों में ही वीतरागता तथा सिद्धत्व को प्राप्त करेगी। इसके लिए योग आत्मा को इस जीवन के अंतिम श्वासोच्छ्वास तक वीतरागता के निकट पहुंच जाने का अहर्निश अभ्यास करते रहना है–करते रहना है।' (तन्मयता से कम से कम एक बार उच्चारित करना)

अनेक प्रबुद्ध व्यक्तियों ने कहा–' जो व्यक्ति जैसा विचार करता है, वैसा बन जाता है।'

भीतर के शत्रु, भीतर का युद्ध

इस प्रकार तैयारी के साथ एक योद्धा की भांति 'एगे जिए जिया पंच..।' इस आगम गाथा के अनुसार आत्म-समरांगण में शूर-वीरता के साथ तत्पर हूं। बाहर का युद्ध एक सीमा तक चलता है, फिर विराम हो जाता है, किंतु यह भीतर का युद्ध अपने द्वारा अपने से ही लड़ा जाता है। जो जीवनभर अविराम चलता है। इसके लिए अनंत धैर्य तथा प्रबल पुरूषार्थ चाहिए। यह मैं भलीभांति जानता हूं।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

मध्याह्न सूर्य आतप का प्रयोग

युगप्रधान आचार्यश्री तुलसी के युग में देखा कि घोर तपस्वी मुनिश्री सुखलालजी चोलपट्टे की लंगोट, आंखों पर एक मोटे कपड़े के सिवाय पूरे निर्वस्त्र शरीर से राजस्थान की चिलचिलाती धूप में, तपती शिलाओं पर लेटकर लंबे समय तक सूर्य आतापना लेते थे। उस महान तपस्वी के सामने मेरा जो यह सूर्य आतप का प्रयोग चला, वह तो केवल 20 से 30 मिनट का बहुत ही लघुतम प्रयोग था।

1 मार्च, 2016 से मध्याह्नकालीन सूर्य आतप का आसेवन शरीरप्रेक्षा के साथ 20 से 30 मिनट तक (2:15 से 3 बजे के मध्य) शुरू किया। ऐसे प्रातःकालीन सूर्य-ऊर्जा के सेवन का क्रम तो कई वर्षों से चल रहा है। प्रतिदिन नहीं, किन्तु अनुकूलता के आधार पर। इस प्रयोग में चोलपट्टे की लंगोट, सिर पर एक मोटा कपड़ा, पैरों के नीचे कार्टून का टुकड़ा रहता। शरीर के आगे, पीछे, दाएं, बाएं भाग से आतप लेता। कुछ समय के लिए हाथों को ऊपर आकाश की ओर भी रखता।

प्रयोग का मुख्य लक्ष्य तो कर्म निर्जरा ही है, किंतु वर्षों से शरीर में जो खुजली का क्रम चल रहा है (कभी ज्यादा, कभी कम, कभी नहीं भी, जिससे आगम-स्वाध्याय तथा साधना दोनों में बार-बार बाधा उपस्थित हो रही है। इसलिए मन में आया कि इस आतप के प्रभाव से यह समस्या भी समाहित हो जाए तो अच्छा ही है।) 1 अप्रैल से इसका समय 10:15 से 10:45 बजे का रहा।

महाप्रयाण स्थल पर

21 मार्च, 2016, फाल्गुन शुक्ला 13, उपवास होने के कारण प्रातः 8:15 बजे ही आचार्य महाप्रज्ञ महाप्रयाण स्थल पर (गोठीजी की हवेली) मैं और मुनि सुमतिकुमारजी गए और उनकी पावन स्मृति में जप किया। मैंने बाहर हॉल में 4 बजे तक अपना स्वाध्याय, ध्यान किया। फिर एक मास तक प्रतिदिन आहार के बाद जाता और 4 बजे आ जाता। चैत्र कृष्णा 13 को उपवास के साथ 1 घंटा उसी महाप्रयाण स्थल में खड़े-खड़े कायोत्सर्ग की मुद्रा में आचार्य महाप्रज्ञ के फोटो के सामने कुछ समस्याओं के साथ उनका स्मरण किया।

एकांत साधना का तीसरा वर्ष

19 अप्रैल 2016, संवत् 2073, चैत्र शुक्ला 13, सोमवार। आज महावीर जयंती है। मेरे एकांत साधना के दो वर्ष संपन्न हो गए। 1 फरवरी, 2016 को जन्म के 86 वें वर्ष प्रारम्भ में जो साधना के प्रयोग प्रारंभ किए, वे इस तीसरे वर्ष के प्रयोग ही हैं।

नई विधि से ध्यानाभ्यास

मई, जून 2016 में-ध्यान का पहला चरण-कायोत्सर्ग 5 मिनट, दूसरा चरण-अन्तर्यात्रा 5 मिनट , तीसरा चरण-श्वासप्रेक्षा, दीर्घ श्वासप्रेक्षा 30 मिनट, ध्यान की पूर्व तैयारी तथा समापन विधि 5 मिनट।

जुलाई, अगस्त में पहला, दूसरा, अंतिम चरण पूर्ववत्। चौथा चरण–शरीरप्रेक्षा 30 मिनट, सातवां चरण-ज्योति केन्द्रप्रेक्षा 5 मिनट।

सितम्बर, अक्टूबर में तीन व सातवां चरण पूर्ववत्, पाचवां चैतन्य केन्द्रप्रेक्षा-30 मिनट।

नवम्बर, दिसम्बर में चार पूर्ववत्, छठा चरण-लेश्याध्यान 30 मिनट। (इस लक्ष्य को पूरा करना है।)

संकल्प की पूर्णाहुति

जन्म के 70 वें वर्ष प्रवेश से (3 जनवरी, 1 00) जो पंचवर्षीय स्वावलंबन का संकल्प स्वीकार किया था, वह 74 वें वर्ष की संपन्नता के साथ 8 फरवरी, 2016 को संपन्न हो गया था, किंतु इसको तीन मास आगे इसलिए बढ़ाया कि इन पांच वर्षों के मध्य शारिरिक कारण विशेष से मेरा वस्त्र-प्रक्षालन का कार्य तीन मास तक मुनि सुमतिकुमारजी ने किया। इसलिए अब 1 मई, 2016 की अक्षय तृतीया पर उस संकल्प की पूर्णाहुति मान रहा हूं। आगे के लिए यह भावना है कि उन संकल्पों में से केवल दो कार्य-बड़े वस्त्रों का प्रक्षालन तथा उसका पानी परठने आदि का कार्य, यदि संत चाहें तो कर सकते हैं।

स्वास्थ्य आदि की दृष्टि से जब भी अपेक्षा लगेगी तो कोई भी कार्य संतों को कहकर (लिखकर) भी करवाने का भाव रखता हूं।

योग आत्मा को साधुवाद

ज्ञान आत्मा के परामर्श से योग आत्मा ने जो स्वावलंबन का संकल्प लिया था, उसमें 85 वर्षीय मुनि ताराचन्द की योग आत्मा श्रम की कसौटी पर खरी उतरी, इसलिए ज्ञान आत्मा ने प्रसन्नता के साथ योग आत्मा को साधुवाद दिया।

चार मास का प्रयोग संपन्न

सूर्य आतप का जो प्रयोग मार्च 2016 से प्रारम्भ किया था, वह 6 जुलाई को संपन्न हो रहा है। इसमें सूर्य आतप के साथ कभी ज्यादा, कभी कम हवा भी चलती, कभी उमस रहती तो कभी-कभी मेघाच्छन्न सूर्य आतप का अनुभव भी किया। वर्षा के कारण दो-तीन बार प्रयोग स्थगित भी रहा।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

चत्तारि सरणं पवज्जामि

गर्मी के महीनों में अत्यधिक शारीरिक सुस्ती रही। जिसके कारण साधना के प्रवहमान प्रयोगों पर असर हुआ। वैद्य श्री मुन्नालालजी सेठिया की दवा से अब कुछ ठीक महसूस कर रहा हूं। 6 जुलाई, 2016 से कुछ संशोधन के साथ पुन: प्रयोग प्रारंभ कर रहा हूं। चत्तारि सरणं पवज्जामि के साथ।

सन् 2016 का चतुर्मास

13 जुलाई, 2016, विक्रम संवत् 2073, आषाढ़ शुक्ला नवमी को श्री समवसरण का लगभग 8 मास का प्रवास संपन्न कर तेरापंथ भवन में चतुर्मास के लिए प्रवेश किया।

15 जुलाई से मालू पार्क में प्रात:भ्रमण तथा आसन आदि का क्रम प्रारंभ किया। उपवास आदि तपस्या में 4 से 5 घंटा ध्यान आदि का क्रम गत चतुर्मास की भांति मालू पार्क में तथा पार्क में स्थित पिरामिड में चलता है। 17 जुलाई से 23 तक सात दिन की तपस्या की। इसमें स्वमूत्र पान का क्रम भी रहा। निर्विघ्न तप संपन्न हुआ। दैनिकचर्या यथावत् गतिमान रही।

तीन वर्षों की समीक्षा

एकांत साधना के इन तीन वर्षों में जो-जो प्रयोग किए, उनकी निष्पत्ति भी पांच प्रतिशत से पचहत्तर प्रतिशत अनुभव में आई, किन्तु शत प्रतिशत नहीं। इसका कारण भी स्पष्ट है कि मन की अपेक्षित एकाग्रता का अभाव रहा।

आगम में एकाग्रता के सात प्रकार निर्दिष्ट हैं–1. तच्चित्ते तद्गतचित्त–उसी में चित्त वाला 2. तम्मणे–उसी में मन रखने वाला 3.तल्लेसे–तद्विषयक परिणाम वाला 4. तदज्झवसाणे–तद्विषयक अध्यवसाय वाला 5. तदट्ठोवउत्ते–उसकी प्राप्ति के लिए उपयुक्त उपयोग वाला 6. तदप्पियकरणे–उसी में समस्त इन्द्रियों को अर्पित करने वाला 7. तब्भावणाभाविए–उसी में भावना करने वाला विपाकसूत्र। अभ्यास करने पर भी इस समग्रता को प्राप्त नहीं कर सका, यह मेरी, अपनी कमजोरी रही।

जन्म का 86 वां वर्ष तथा एकांत, मौन, ध्यान साधना के तीन वर्ष संपन्नता की ओर हैं। देव, गुरु, धर्म एवं वर्तमान आचार्यश्री महाश्रमणजी के प्रताप से अगले वर्षों में वीतरागता की ओर द्रुतगति से और अधिक आगे बढ़ूं , यही अन्त:करण की अभिलाषा है।

❖ ❖ ❖

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

कुछ अपनी बात

मेरी स्वस्थता के रहस्य

ईस्वी सन् 2007 के गंगाशहर मर्यादा महोत्सव का प्रसंग है। हम मुम्बई से अत्यंत द्रुतगति से विहार करते हुए श्रीचरणों में पहुंचे थे। उस समय मैं जीवन के 78वें वर्ष में प्रवेश करने जा रहा था। महोत्सव के अवसर पर गुरु-सन्निधि में होने वाली साधु-साध्वियों की गोष्ठियों में एक दिन 'हस्तचालित साधन' का विषय चला। तब आचार्यवर ने फरमाया–'मुनि ताराचन्दजी इस उम्र में बिना साधन के इतनी लंबी यात्रा व लंबे-लंबे विहार कर रहे हैं।' और भी अन्य अवसरों पर, समय-समय पर स्वास्थ्य के बिन्दु को लेकर पूज्यवरों द्वारा मेरे नाम का उल्लेख किये जाने से साधु-साध्वियों में जिज्ञासा का भाव पैदा हुआ। परिणामतः समय-समय पर संघ के अनेकों साधु-साध्वियों ने मुझे कई बार पूछा–'जीवन के आठवें दशक में भी आपने अपने स्वास्थ्य को मेंटेन कर रखा है। इसके पीछे रहस्य क्या है?' मेरी दृष्टि में निम्नलिखित कारण हो सकते हैं।

(1) आचार्य महाप्रज्ञजी की जीवन शैली को मैं स्वस्थतम जीवन-शैली मानता हूं। मैंने उसी जीवन-शैली का अनुसरण करने का हर संभव प्रयास किया है।

(2) भावशुद्धि को मैं स्वास्थ्य का मूलाधार मानता हूं।

(3) आसन-प्राणायाम-मुद्राओं का नियमित व व्यवस्थित प्रयोग–आसन-प्राणायाम आदि के प्रयोग आध्यात्मिक विकास में सहयोगी तो बनते ही हैं, साथ-साथ वे शारीरिक स्वास्थ्य की दृष्टि से भी अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं। मैं इस शरीर को अपनी मोक्ष साधना के अनन्यतम सहायक तत्त्वों में से एक तत्त्व मानता हूं, तो भला इसे उपेक्षित कैसे किया जा सकता है? अपने जीवन में मैंने निम्नलिखित आसन-प्राणायाम आदि के प्रयोग किये हैं–

I. आसन- शीर्षासन, सर्वांगासन, हलासन, उत्तानपादासन, मत्स्यासन, पवनमुक्तासन, पश्चिमोत्तासन, भुजंगासन आदि।

II. प्राणायाम-चार प्राणायाम संघमुक्त साधक मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) से द्वारा प्राप्त हुए हैं–

(क) सुखपूर्वक प्राणायाम-(अनुलोम-विलोम) 15-20 बार दोहराना।

(ख) समवेत प्राणायाम-दोनों छिद्रों से धीरे-धीरे श्वास लेना-छोड़ना। कुछ समय बाद दोनों प्रकार के कुंभक जोड़ देना।

(ग) मूर्च्छा प्राणायाम-दोनों छिद्रों से श्वास लेना। नाक बन्दकर अन्त:कुंभक में भ्रूमध्य नमोमुद्रा करना। श्वास न रुके तब मूल स्थिति में आकर रेचन करना। (5-7 बार दोहराएं।) इससे आज्ञा चक्र जागृत होता है।

(घ) चतुर्थ प्राणायाम-दोनों छिद्रों से धीरे-धीरे रेचन, पूरक समान गति से करना। (3-4 बार दोहराएं।) इससे चेतना भीतर ही रहती है।

(ङ) इसके अलावा कपालभाति (3 से 5 मिनट), उज्जाई प्राणायाम (पूरक के साथ कंठ से ध्वनि करना व रेचन बाएं छिद्र से ही करना।) आदि करता हूं।

III. मुद्रा–ज्ञानमुद्रा, वायुमुद्रा, आकाशमुद्रा, शून्यमुद्रा, पृथ्वीमुद्रा, सूर्यमुद्रा, वरुणमुद्रा, प्राणमुद्रा, अपानमुद्रा (प्राण-अपानमुद्रा करने से योग सधता है) अपानवायुमुद्रा, लिंगमुद्रा आदि। (मुद्राओं के ये प्रयोग 'मुद्रा विज्ञान' पुस्तक से लिए गये हैं।)

मैं अपनी प्रकृति का आभार मानता हूं, जिसने मुझे इन चीजों में नियमित बनाए रखा। मेरी यह प्रकृति ही रही है कि मुझे नाश्ता वर्जन मंजूर है, पर इन प्रयोगों को छोड़ना मंजूर नहीं है। शायद इसी कारण आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने एक बार टिप्पणी की-'इनके नियम शाश्वत हैं।' इसी नियमितता के कारण जीवन के उत्तरार्द्ध में भी पश्चिमोत्तासन, हलासन आदि कठिन आसन काफी हद तक कर लेता हूं।

हां, यह अवश्य है जीवन में की उत्तरार्द्ध अवस्था में अपनी यात्राओं (विहारों) के दौरान मैं आसनों के स्थान पर प्रायः प्रेक्षाध्यान में वर्णित यौगिक क्रियाएं दो बार (सुबह-शाम) किया करता था। इन दशकों में विहारों में मेरा यह निश्चित-सा क्रम था कि मैं सायं प्रतिक्रमण के बाद अपने ही हाथों से पैरों के (एक्यूप्रेशर के) प्वॉइंट्स कुछ समय तक दबाया करता था। किसी के पूछने पर मैं कहता–'शरीर के सहयोग के कारण ही इतना चल पाते हैं, अतः कुछ समय शुद्ध रूप से शरीर की सेवा के लिए भी देना चाहिए। ऐसा मेरा मानना है।' इन प्रयोगों का ही प्रभाव मानता हूं 26-27 कि.मी. के विहार प्रतिदिन करने के बावजूद भी अगले दिन सुबह जब उठता, शरीर को पूरी तरह हल्का पाता, तनावमुक्त पाता।

IV. खाद्य-संयम–मात्रा-बोध–'शरीर को षड्रसों की अपेक्षा है' जितना मैं इस बात को मानता हूं, उतना ही यह भी मानता हूं–'पथ्य भोजन भी अतिमात्रा में घातक होता है।' स्वस्थ जीवन के लिए मात्रा-बोध अत्यंत अपेक्षित है।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

❖ भूख बिना नहीं खाना। ❖ विरुद्ध प्रकृति का (बेमेल) भोजन नहीं करना ❖ उतावलेपन में तथा बार-बार नहीं खाना–ये प्रयोग दिखने में तो बहुत छोटे व सामान्य-से दिखाई देते हैं, पर मेरा व्यक्तिगत अनुभव है कि स्वास्थ्य-रक्षा की दृष्टि से ये प्रयोग बहुत ही महत्त्वपूर्ण हैं। मैं बड़ी आस्था के साथ या यों कहूं बड़ी कट्टरता के साथ इन नियमों का पालन करता आया हूं।

❖ गरिष्ठ भोज्य पदार्थ खाने की मानसिकता कम ही रहती है, पर संतों के आग्रह के कारण जब कभी भी गरिष्ठ भोज्य पदार्थ खाता हूं, तब सायं आहार का वर्जन या उनोदरी तप का प्रयोग करता हूं।

❖ मैं ऊनोदरी तप का पक्षधर हूं। मेरी स्वयं की हार्दिक भावना रहती है कि इस तप से संबंधित विभिन्न प्रयोग व्यवस्थित व नियमित रूप से करूं और करता भी हूं। पर बीच-बीच में सुमतिमुनि के भक्ति-मनुहार से परिपूर्ण आग्रह के कारण उनकी भावना रखनी पड़ती है। परिणामत: जैसा मैं चाहता हूं, वैसा रूप नहीं बन पाता। पर अब जीवन के 85वें जन्मदिन पर मैंने दृढ़ संकल्प कर लिया है कि मुझे ऊनोदरी तप की विशेष साधना नियमित व प्रतिदिन करनी ही है। इसी प्रकार भोजन-शुद्धि के संदर्भ में भी जागरूक रहना अपेक्षित है। इस विषय में मेरे अन्यान्य नियमों में से एक नियम की चर्चा करना चाहूंगा–

गांधीधाम का एक प्रसंग है–वर्षों पूर्व मैं वहां गया। वहां के एक प्राकृतिक चिकित्सक (जो जैनेतर थे) हमारे संपर्क में आए। उन्होंने कहा–'समाज में फुलके आदि खाद्य पदार्थों को जानबूझकर 'आकरा' किया जाता है। उन्हें ज्यादा सेंका जाता है। जिससे फुलकों आदि पर काली-काली पपड़ी-सी बन जाती है। वह काली पपड़ी एक तरह से डाम्बर का-सा रूप धारण कर लेती है। जो स्वास्थ्य के लिए अत्यंत हानिकारक होती है। तब से मैं प्राय: काली पड़ चुकी फुलके की पपड़ी के उस भाग को निकालकर खाता हूं।

5. प्रायोगिक जीवन–मेरा जीवन प्रयोग प्रधान रहा है। मैं मानता हूं कि नये-नये प्रयोग करते रहने से जीवन सरस बना रहता है। अत: जब कभी भी किसी विशेषज्ञ के निर्देशन में कोई प्रयोग करने का अवसर मिलता, मैं तत्पर रहता हूं। मेरे द्वारा किये गये कुछ चयनित प्रयोगों की मैं यहां चर्चा करना चाहूंगा–

❖ पिछले लंबे समय से चैत्र व आश्विन माह में 9-9 दिनों के लिए महासुदर्शन चूर्ण लिया करता हूं। मान्यता है निर्दिष्ट कालखंड में महासुदर्शन चूर्ण लेने से रक्तशुद्धि होती है। फलत: बुखार आदि बीमारियों से सहज ही बचा जा सकता है।

❖ ऑयल-पुल्लिंग का अर्थ है–तेल से कुल्ला करना। प्रात: खाली चाय के दो चम्मच रिफाइन्ड सूर्यमुखी तेल मुंह में लेकर 15-20 मिनट तक मुंह में घुमा-फिराकर धीरे-धीरे कुल्ला करके थूक देना चाहिए। फिर हलके गर्म पानी से मुंह साफ कर लेना चाहिए। यह प्रयोग मैंने बेंगलुरू में श्री मांगीलालजी छाजेड़ की देख-रेख में लगभग वर्षभर किया। कालान्तर में श्री चंचलमलजी चोरड़िया की पुस्तकों में से पढ़कर दूसरे अन्य प्रयोग भी किए। 84 वें, 85वें जन्मवर्ष में (साधना के एकान्त प्रवास में) तीन-तीन मास के ध्यानादि के कुछ नये-नये प्रयोग करने का अवसर मिला। उनकी कुछ निष्पत्तियों का अनुभव हुआ है। यह क्रम आगे भी प्रवहमान है।

❖ ❖ ❖

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

लेखन का आधार

इस एकान्तवास में कुछ भी लिखने का मेरा लक्ष्य नहीं था, किन्तु सुमतिमुनि, देवार्यमुनि आदि संतों के कहने से स्वाध्याय का कुछ समय लेखन में लगाया।

जन्म के 71 वें वर्ष प्रवेश से जब मैंने मुनि जीवन को एक नया मोड़ दिया था, तब से साधना के विशेष प्रयोगों तथा उनके अनुभवों के बारे में संक्षिप्त लेखन-कार्य प्रारंभ कर दिया था। वह भी प्रतिदिन का नहीं, कभी-कभी जब आवश्यक समझता डायरी में लिख लेता। वह क्रम अभी भी चल रहा है।

इस लेखन में मेरी स्मृति में जितने घटना प्रसंग सुरक्षित थे, उनको मैंने लिपिबद्ध कर दिया।

विक्रम संवत् 2035 के राजलदेसर मर्यादा महोत्सव से 2071 तक, आज तक के लेखन में, मुनि सुमतिकुमारजी की दीर्घकालीन स्मृतियों का बड़ा सहयोग मिला। जिन घटना प्रंसगों को मैं भूल चुका था, सुमतिमुनि की स्मृति ने उनको तरोताजा कर दिया। इससे मेरा लेखन कार्य सुगम हो गया। यदि उनका सहयोग नहीं मिलता तो कुछ अधूरापन रह जाता।

मेरे अनन्य सहयोगी

आचार्यश्री तुलसी ने दीक्षा लेने के चार मास बाद ही मुनि सुमतिकुमारजी को एक सहयोगी के रूप में मेरे साथ भेजा था। संवत् 2035 से आज संवत् 2071 तक मेरे अनन्य सहयोगी बने हुए हैं। जब मैंने विशेष साधना का क्रम शुरू किया, तब से ही अग्रणी की लगभग सारी जिम्मेदारी वे ही संभाल रहे हैं। 1 जुलाई, 2002, विक्रम संवत् 2059 में आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने सह-अग्रणी बनाकर मुझे और निश्चिन्त बना दिया। अब सन् 2014 में गंगाशहर मर्यादा महोत्सव के शुभ अवसर पर आचार्यश्री महाश्रमणजी ने कृपा कर मुनि सुमतिकुमारजी को पूर्ण अग्रणी बनाकर साथ वाले संतों को उनको वंदना करा दी।

अब मैं पूर्णतः जिम्मेदारियों से मुक्त होकर अग्रणी मुनि सुमतिकुमारजी तथा उनके सहयोगी मुनि देवार्यकुमारजी, मुनि आदित्यकुमारजी के आत्मीय सहयोग से अपने जीवन के इस संध्याकाल को सफल, सार्थक बनाने में दृढ़ संकल्पित होकर सतत सजगता के साथ प्रयत्नशील हूं।

इस लेखन में यथार्थ घटना-प्रसंगों से कुछ भी अधिक, न्यून तथा अतिरिक्त लिखने में आया हो तो 'तस्स मिच्छा मि दुक्कड़' उससे संबंधित निष्फल हो मेरा दुष्कृत।

26 सितम्बर, 2014, श्री समवसरण , सरदारशहर। **आत्मसाधक–मुनि ताराचन्द**

❖ ❖ ❖

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

प्रथम – परिशिष्ट

मेरे पथदर्शक

युगप्रधान आचार्यश्री तुलसी :–

मेरे धर्माचार्य, धर्मगुरु, मुनि दीक्षा प्रदाता आचार्यश्री तुलसी का आध्यात्मिक पथदर्शन सदा प्राप्त होता रहा। आज जो कुछ हूं, वह सब उनकी कृपा-प्रसाद का ही सुपरिणाम है।

पूज्यश्री ने कई बार फरमाया–'मुझे मुनि ताराचंद की स्वावलंबी साधना इसलिए आकर्षक लगती है कि उसका जीवन एकांगी नहीं है। अपनी साधना के साथ यात्राओं के माध्यम से जहां भी गए, वहां अपने पुरुषार्थ के द्वारा संघीय गरिमा को भी सदा उजागर किया है।' सद्गुरु के अमृत वाक्य सुशिष्य के लिए पथदर्शन का ही कार्य करते हैं।

प्रेक्षा प्रणेता आचार्यश्री महाप्रज्ञ

आचार्यश्री स्वयं प्रयोगधर्मा धर्माचार्य थे। मुनि जीवन से आचार्यकाल के अन्तिम समय तक नाना प्रयोग अविच्छिन्न चलते रहे। उन्होंने अपने साधना प्रयोगों के साथ मुझे भी कभी-कभी साथ में प्रयोग करने का मौका प्रदान किया। साधना के विशेष प्रयोगों के मेरे इस सफर में जब भी अपेक्षा हुई, आपश्री का पथदर्शन प्राप्त हुआ।

साधु-साध्वियों के शिविरों के अतिरिक्त हम कई चुने हुए साधु-साध्वियों को वे स्वयं ध्यान का प्रशिक्षण देते। योगक्षेम वर्ष के सारे कार्यक्रम ही एक दृष्टि से चतुर्विध धर्मसंघ के लिए प्रशिक्षण के ही थे।

महातपस्वी आचार्यश्री महाश्रमणजी

दोनों पूज्यवरों की परमकृति है–आचार्यश्री महाश्रमण। जो वर्तमान में धर्मसंघ को अपना नेतृत्व प्रदान कर रहे हैं और उनके निर्देशन में धर्मसंघ प्रगति पथ पर अग्रसर है। वर्तमान में मेरी साधना की व्यवस्था आदि में आपश्री का परम सहयोग मुझे प्राप्त है।

सक्रिय प्रशिक्षण

आचार्यश्री तुलसी की कृपा से ही मुझे एक साधनाशील साधक मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) का सान्निध्य मिला। वह दीर्घकालीन प्रवास मेरे लिए चित्त-समाधि के साथ अनेक दृष्टियों से विकासकारी रहा। उनकी अष्टवर्षीय योग साधना–जिसमें इन्द्रिय एवं कषाय प्रतिसंलीनता आदि के विशिष्ट प्रयोग समाविष्ट थे, अपने आप में वह नवीन, आकर्षक साधना पद्धति थी। उनका साधनाशील जीवन मेरे लिए सक्रिय प्रशिक्षण का ही था।

1अप्रैल, 1973, विक्रम संवत् 2029, चैत्र कृष्णा 13 को लाडनूं से जब वे संघमुक्त होकर एकाकी साधना के लिए माउन्ट आबू की ओर प्रस्थित हुए, तब से वे यश, नाम, पूजा-प्रतिष्ठा आदि से विरत होकर अपने ढ़ंग से अपनी साधना में ही संलीन हैं। वैसे अब वे संत अमिताभ के नाम से पहचाने जाते हैं।

सहज-सौम्यता संपन्न हैं–साध्वीप्रमुखाजी

आचार्यश्री तुलसी एवं आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के समय से ही जब हम गुरुकुलवास से बहिर्विहार में जाते, तब महाश्रमणी साध्वी प्रमुखाश्री कनकप्रभाजी का सान्निध्य मिलता और 'संघ तेजस्वी कैसे बना रहे?' इस प्रकार के विषयों पर परिचर्चा अवश्य होती ही। हमने देखा–उनके शब्दों में उनके मन की पीड़ा तथा प्रेरणा दोनों किस प्रकार व्यक्त हो रही है। उन प्रेरणाओं ने भी हमारे लिए पथदर्शन का काम किया हैं। उनका जीवन सहज सौम्यता संपन्न एक आदर्श महाश्रमणी का जीवन है, जो सबके लिए अनुकरणीय है।

योग साधिका साध्वीश्री राजीमतीजी

आचार्यद्वय की आज्ञा से समय-समय पर मुझे शासन गौरव साध्वीश्री राजीमतीजी के सान्निध्य में बैठने का अवसर मिला तथा उनकी साधनाजन्य अनुभूतियों से मैं लाभान्वित भी हुआ। दूसरों की अनुभूतियां अपनी अनुभूतियां कैसे बने? इस ओर प्रयत्नशील हूं। साध्वीश्री का एक वाक्य आज भी मुझे प्रेरणा दे रहा है–'हम पदार्थ रसिक नहीं, आत्म रसिक बनें।'

अहोभाव

इस तेरापंथ धर्मसंघ में जन्मा, जीया और बहुत कुछ प्राप्त किया–विशेषकर वीतरागता का पावन पथ। संघ और संघपति का उपकार बहुत है। उसको शब्दों द्वारा पूरा व्यक्त तो किया ही नहीं जा सकता, किंतु उनके द्वारा प्राप्त शिक्षा को जीया जा सकता है। उसी प्रयास में सतत संलग्न हूं।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

आचार्यश्री तुलसी और आचार्यश्री महाप्रज्ञ मेरी आत्मसाधना के आलोक पुंज रहे हैं। उन्होंने उन्मुक्त भाव से मेरे भीतर की सुप्त ज्ञान चेतना को जागृत करने में सदा सहयोग दिया।

प्रेरणास्रोत-साहित्य

❖ आगम-साहित्य, प्रेक्षा-साहित्य, विपश्यना-साहित्य, ओशो-साहित्य, दिगम्बर साहित्य–समयसार आदि।

❖ इसके अतिरिक्त तीर्थंकरों, आचार्यों, मुनियों तथा श्रावक-श्राविकाओं का जीवन-वृत्त तथा जैनेतर प्रबुद्ध व्यक्तियों, साधकों आदि के जीवन-प्रसंग भी कुछ न कुछ रूप में मेरे लिए प्रेरणादायी बने हैं। उन सबके प्रति आभार तथा कल्याण-भावना।

❖ ❖ ❖

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

द्वितीय – परिशिष्ट

पूज्यवरों के प्रेरक संदेश

यह महानता है

पूज्यवरों के अति व्यस्तता के मध्य उन्हें संदेश के लिए निवेदन करना या करवाना–ये दोनों ही बातें मुझे कभी पसंद नहीं रहीं। फिर भी कुछ श्रावक अपनी इच्छा से निवेदन कर देते हैं तो कभी-कभी आचार्यश्री एवं युवाचार्यश्री संदेश प्रदान करवा भी देते हैं। यह उनकी महानता है।

❖ आचार्यश्री तुलसी के कृपापूर्ण संदेश ❖

अर्हम्

अध्यात्म साधनारत मुनि मीठालालजी!

पुनः पुनः सुखपृच्छापूर्वक शुभाशीर्वाद। मुने! तुमने हमारे धर्मसंघ के सामने एक नया मार्ग प्रस्तुत कर शासन की अपूर्व सेवा की है। आज अनेक साधु-साध्वियां इस दिशा में सोचने लगे हैं। इस बार हमने भी समूचे संघ में 2 घंटा स्वाध्याय तथा 1 घंटा ध्यान की साधना अनिवार्य रूप में चले, ऐसी घोषणा की है तथा जनसम्पर्क को सीमित करने का उपक्रम किया है। हम आशा करते हैं कि एक दिन हमारा धर्मसंघ ध्यान-साधना में अग्रगामी हो सकेगा और–औरों का पथदर्शन करेगा।

मेरे अपने स्वास्थ्य को लेकर अबकी बार सरदारशहर आना सम्भव नहीं लगता, अन्यथा मिलने की जरूर इच्छा थी। शिष्य ताराचन्द और रवीन्द्र दोनों ही तुम्हारे इस कार्य में अनन्य सहयोगी एवं 'पगइभद्दए, पगइउवसंते, मिउमद्दवसम्पन्ने' आगम वाक्य को चरितार्थ करने वाले विनीत साधु हैं। इस बात की मुझे बहुत प्रसन्नता है।

इस बार शिष्य मुनि मानमल (श्रीडूंगरगढ़) को तुम्हारे पास फिर भेज रहा हूं। तीनों ही साधु बड़े प्रेम से रहेंगे और तुम्हारी साधना में यत्किंचित् उपयोगी बनकर आत्मलाभ की उपलब्धि करेंगे , ऐसा विश्वास है। मेरा शरीर प्रायः स्वस्थ है। तुम अपने शरीर के बारे में भी बिल्कुल निसंग बन रहे हो, बड़ा आश्चर्य है। तुम्हारे सर्वथा आध्यात्मिक स्वास्थ्य की कामना करते हुए।

वैशाख बदि 12,सं. 2027, छापर। **आचार्य तुलसी**

(मुनिश्री मानमलजी (श्रीडूंगरगढ़) द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

शिष्य ताराचन्द! मुझे बहुत प्रसन्नता है तेरी साधना, सेवा एवं श्रमनिष्ठा से मुनि मीठालालजी की साधना में जैसा सहयोग दिया है, और साथ ही क्षेत्र को भी संभाला है। आश्चर्य-सा होता है–'वहां के बारे में किसी की भी कोई शिकायत तो है नहीं, बल्कि सब में प्रसन्नता है।' उत्तरोत्तर इन गुणों में तुम विकास करो, यह मेरी शुभाकांक्षा है। तुम जैसे एकनिष्ठ व्यक्ति विरले मिलते हैं। शिष्य रवीन्द्र भी सहज, सरल, शुद्ध व्यक्ति है। सबको यथायोग्य।

मीठा. के प्रति बार-बार आशीः संप्रेषण।

22.4.1972. राजलदेसर। **आचार्य तुलसी**

(मुनि बालचन्दजी (गंगाशहर) द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

शिष्य ताराचन्द! तुम ध्यान साधना में रस लेते हो, यह बहुत मूल्यवान है। तुम्हारी साधना में मुझे अधिक आकर्षण इसलिए है कि तुम एकांगी बनकर नहीं, अन्यान्य संघीय साधनाओं के साथ-साथ ध्यान रसिक भी हो। तुम्हारी वृत्तियां शांत हों, निर्विकार हों, तुम प्रेक्षाध्यान के द्वारा वीतरागता की ओर गति कर रहे हो। यह अत्यन्त आल्हाद का विषय है। तुम्हारा सविनय समर्पण भाव हमारे धर्मसंघ में अनुकरणीय बने, यह मेरी शुभाशंसा है।

माघ सुदी 12, संवत् 2035, राजलदेसर। **आचार्य तुलसी**

(मालवा यात्रा के अवसर पर स्वयं मुझे प्रदान करवाया।)

अर्हम्

मुनि ताराचन्द ने बड़ी जिम्मेदारी से पंजाब में अच्छा काम किया है। काफी परिश्रम उठाया है। कभी-कभी 2-2 संत रहकर भी निष्ठापूर्वक सफलता से कार्य किया। तुम पर जिम्मेदारी है। मुझे तुम्हारे काम से संतोष है। मेरी धारणा की गई है। उसका चिन्तन नहीं

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

करते हुए पंजाब में तुम्हारी दृष्टि से किन-किन का चतुर्मास किस जगह किया जाए? तुम्हारा दृष्टिकोण क्या है? तुम्हारा चतुर्मास कहां ठीक है? क्या नाभा में ठीक रहेगा?

मुनि सुमेरमलजी 'सुमन' वहां आ रहे हैं। उनका चतुर्मास कहां ठीक रहेगा? सब चतुर्मासों के बारे में चिन्तन कर तुम आज बताओ या 10 दिन बाद भी बता सकते हो।

टालोकर (संघ से बहिर्भूत साधु) कुछ भी हल्ला करें, हमें अपना काम शांति से करना है। उनके बारे में इनको (प्रवीण, सेवंती) बताना वे लोग कहां चतुर्मास करेंगे? क्या धारणा है? आस-पास के क्षेत्रों को संबल मिले, इस दृष्टि से इनको कहां भेजना आदि मार्ग-दर्शन देना।

18-4-0872- **आचार्य तुलसी**

(प्रवीण भाई और सेवंती भाई (बाव) द्वारा प्राप्त)

लुधियाना में पंजाब प्रान्तीय श्रावक सम्मेलन के अवसर पर।

अर्हम्

पंजाब में विहरमान मुनि ताराचन्दजी! रोशनलालजी! सुमेरमलजी 'सुमन' आदि साधु और गुलाबांजी आदि साध्वियां यथा-संभव परिश्रम करके शासन की सेवा कर रहे हैं। मुनि ताराचन्दजी के सहगामी मुनि मिश्रीलालजी इस गर्मी के समय में बेले-बेले, तेले-तेले की तपस्या कर साधना कर रहे हैं, उससे कर्म निर्जरा तो है, वह एक विशेष बात है। यहां से प्रवीण भाई, सेवंती भाई दूसरी बार पंजाब आ रहे हैं। वे तुमसे मिलकर सारी बात करेंगे। अब चतुर्मास निकट है। किसका चतुर्मास कहां उपयुक्त रहेगा? इसका चिंतन करके प्रवीण आदि को बतला देना। हम उसी दृष्टि से सोच लेंगे। भटिंडा से साध्वी रामकुमारीजी का विहार सम्भव है। पर वह बहुत दूर नहीं जा सकेगी। भटिंडा के आस-पास ही चतुर्मास हो या थोड़ी दूर हो तो साधन का उपयोग किया जा सकता है। कहां ठीक रहेगा? मुनि सुमेरमलजी अभी सरसा है, उनका भटिंडा ही ठीक रहेगा या संगरूर आदि क्षेत्रों मे ठीक रहेगा? संगरूर में आवश्यक हो तो भटिंडा वालों को समझाना पड़ेगा, अन्यथा संगरूर किसका हो। भवानीगढ़, भीखी, कोटला आदि क्षेत्रों में कहां–कहां चातुर्मास अत्यन्त जरूरी है? वहां का चिन्तन कर बाकी के बारे में सोचना है। कमलश्री का लुधियाना ठीक रहेगा या अन्यत्र? तुम्हारे लिए तो धूरी वाले दृढ़ मत हैं। जैसा भी हो पंजाब के सभी सिंघाड़ों की संभावित पूरी लिस्ट बनाकर इनको धरा देना है। इस वर्ष चातुर्मास कुछ कम अवश्य हैं, जो हैं उनमें से निर्णय करना है। गोरांजी, मोहनांजी को शीघ्रता करने के लिए यहां से कह दिया गया है। तुमने अपनी अंतरंग साधना को गौण करके शासन का दायित्व निभाया है। यह सबके लिए अनुकरणीय है। इसलिए पंजाब के लोग तुमसे बहुत प्रभावित हैं। शेष शुभम्!

15.6.1983. बालोतरा। **आचार्य तुलसी**

(प्रवीण भाई और सेवंती भाई (बाव) द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी ने अपना दायित्व बहुत अच्छी तरह से सम्भाला। दूसरे-दूसरे कामों को गौण करके जो संघ की सेवा की, प्राथमिकता दी, यह औरों के लिए अनुकरणीय है। अब भी उनको संभाल रखना ही है, पर दायित्व मुनि सुमेरमलजी 'सुमन' पर रहेगा। मुनि सुमेरमलजी मुनि ताराचन्दजी की तरह ही पंजाब का पूरा दायित्व निभाएं। मुनि ताराचन्दजी एवं अन्य साधु-साध्वियों का भी यथासंभव योगदान रहेगा।

2.9.1983. अणुव्रत नगर, बालोतरा। **आचार्य तुलसी**

(रतनलालजी चोपड़ा द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

शिष्य मुनि ताराचन्दजी, सुमेर, रोशन!

पंजाब प्रदेश विहारी सभी संतों से सादर सुखपृच्छा। अपरंच! तुम लोगों ने पंजाब में बहुत सामयिक श्रम किया, अच्छी संभाल रखी। पंजाबी श्रावकों के मनोबल को उचित आलंबन दिया। अपने कष्टों, तकलीफों की परवाह किए बिना शासन की सेवा की, यह सबके लिए अनुकरणीय है। वर्तमान टालोकरों का क्रम आधारहीन और अध्यात्मशून्य–केवल प्रचार मात्र है। भिक्षु स्वामी के प्रति भी जिनकी आस्था दृढ़ नहीं और तेरांपथी कहलाएं, यह कैसी विडम्बना है? पुराने परिचय के कारण या ऊपरी आकर्षण से एक बार कोई बहकावे में भले आ जाए, पर अन्ततोगत्वा निराश होकर उन्हें वापस लौटना ही पड़ेगा। इसके सिवा कोई चारा नहीं। अत: हमारा कर्तव्य है कि पूरी जागरूकता के साथ लोगों को सम्भालें। मुनि ताराचन्द ने इसे अपनी साधना मानी। मुनि मिश्री ने तपस्या के श्रम की चिन्ता नहीं की। मुनि सुमेर ने अपने स्वास्थ्य को गौण किया। मुनि रोशन व वर्धमान ने अथक परिश्रम किया। शासननिष्ठा का ही यह परिणाम

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

है। अबकी बार का मर्यादा महोत्सव अत्यधिक प्रभावकारी व सफल रहा। यह सब मुनि विनयकुमार यहां से आ रहा है, वह सुनाएगा। सब प्रसन्न रहना। चित्त-समाधि रखना। शेष कुशलम्।

15.2.1984. बीदासर। **आचार्य तुलसी**

(मुनि विनयकुमारजी द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी का कच्छ में प्रवेश और प्रवास बहुत शुभ है। जहां भी गए और रहे अच्छा प्रभाव रहा और अधिक प्रभाव रहेगा। मुनि मिश्रीलाल की तपस्या भी अट्ठम-अट्ठम की तपस्या कच्छ के लिए प्रभावशाली रहेगी। हमने सुना है कि कच्छ में अट्ठम-अट्ठम की बारी शुरू हो गई है। कच्छ प्रदेश के हमारे श्रावक-श्राविकाएं पूरा लाभ उठाएंगे और नये-नये लोगों को भी संपर्क में लाएंगे तो वे भी लाभान्वित होंगे।

17-6-0875- **आचार्य तुलसी**

(कमलेशजी चतुर्वेदी के पत्र द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी आदि संतों से सुखपृच्छा! स्वास्थ्य ठीक होगा? तुम्हारी ध्यान-साधना और शासन-सेवा दोनों हृदयग्राही है। कच्छ में अच्छा काम हुआ है। संघ की प्रभावना बढ़ी है। यहां रतनगढ़ मर्यादा महोत्सव सानंद हुआ है। यह महोत्सव अनेक दृष्टियों से बड़ा महत्त्वपूर्ण रहा। तुम्हारा कच्छ में रहना आवश्यक था। इस बार स्वाध्याय योग की विशेष व्यवस्था की है। साध्वी सोनांजी तुम्हें बताएगी और भी विचार सुन पाओगे। खूब प्रसन्नता से कार्य करना।

12.2.1987. रतनगढ़। **आचार्य तुलसी–महाप्रज्ञ**

(साध्वी श्री सोनांजी (डीडवाना) द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

ताराचन्दजी! लाडनूं से एक ही मंजिल में बिहार पंहुच गए। श्रम तो काफी पड़ा है और वहां अच्छा काम हो रहा है। और भी अच्छा काम करना है। अभी तो आस–पास विचरना है। बाकी निर्णय तो बाद में करेंगे। स्वास्थ्य का ध्यान रखके अच्छा काम करना है।

10-8-088 - **आचार्य तुलसी**

(समण श्रुतप्रज्ञ द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी भी सम्भव हो तो समुचित शिक्षा देकर उपयुक्त स्थिति बनाने में एक बार और प्रयत्न करें। यदि ऐसा करना सम्भव न हो तो कलकत्ते की तरफ विहार कर दें और मुनि सुमेरमल से मिल लें। वहां मिलकर यथोचित व्यवस्था कर लें। इसमें हमारे विनीत मुनि गुरु इंगित की आराधना करेंगे। इसी विश्वास के साथ।

17.11.1990. पाली। **आचार्य तुलसी**

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी ने एक दृष्टि से साहस का काम किया है। दो ठाणों से रहना और प्रसन्नतापूर्वक रहना, यह एक साधना का ही प्रयोग है। मानसिक संकल्प प्रबल है, वहां हर काम सफल है। ठीक, तुम्हारी भावना है तो शिखरजी होते हुए उधर बिहार-नेपाल की तरफ आ जाओ। चक्कर तो पड़ेगा, पर साधुओं का क्या चक्कर है? यात्रा ही जिनका जीवन व्रत है। सानन्द, सकुशल और परम प्रसन्नता से विहार करो। मुनि सुमतिकुमार का दायित्व है कि वे अग्रगण्य मुनि की विशेष सजगता से, विनम्रता से सेवा करे।

7.1.1991. सोजत रोड़। **आचार्य तुलसी**

(श्री रतनलाल चोपड़ा द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी असम में बहुत प्रसन्नता से उल्लासपूर्ण वातावरण में विचर रहे हैं। लोग कहते हैं–मुनिजी इतने शांत हैं, सारे वातावरण में शांति की वर्षा कर देते हैं। हमारे धर्मसंघ के अच्छे साधक साधु हैं। मुनि सुमतिकुमार उनका सहयोगी है। दो ही ठाणे जिस पुरुषार्थ से काम कर रहें हैं, वह सबके लिए अनुकरणीय है। अब गौहाटी की ओर विहार हो रहा होगा। सानन्द विचरें और धर्मसंघ की विशेष प्रभावना करें। स्वास्थ्य का ध्यान रखें।

18-1-0881- **आचार्य तुलसी**

(विजय भरूंट (बंगाईगांव) द्वारा प्राप्त)

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी का यात्रा संवाद हमको मिलता रहा है। उनकी यात्रा बड़ी सफल रही। अब गौहाटी में चतुर्मास है। यद्यपि गौहाटी के समाज का वातावरण अभी सौहार्दपूर्ण नहीं हुआ है, जब योग होगा तब होगा। अपने को अपना काम करना है। दो ठाणों ने भी जिस तरह का स्वस्थ वातावरण बनाए रखा है और जनभावना को प्रभावित किया है, वह हमारे संघ के लिए गौरव की बात है।

19.7.1992. लाडनूं। **आचार्य तुलसी**

(समणी कुसुमप्रज्ञा द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी का गौहाटी चतुर्मास सफल चतुर्मास कहा जा सकता है। मुनि ताराचन्द कम बोलते हैं, बात कम करते हैं और अंतर आत्मा से अबोल प्रेरणा देते हैं। वहां उनकी तटस्थ प्रेरणा ने समाज पर असर किया लगता है।

गौहाटी का संघ यहां आया और हमारा काफी समय लिया। हमने भी उनको केवल समय ही नहीं दिया है, बल्कि सम्बल और बल दोनों दिया है। निष्पक्ष व तटस्थ काम करने की प्रेरणा भी दी है और उन्होंने भी ऐसा ही अपना मानसिक संकल्प जाहिर किया है। इससे वातावरण प्रसन्न बना है।

अब गौहाटी श्रावक समाज को तुम ऐसी प्रेरणा दो, जिससे इस वर्तमान सभा की कार्यकारिणी को मुक्त रूप से काम करने का मौका दे। केवल मौका ही नहीं, अपनी सद्भावना और शुभकामना भी दे। अपने-अपने व्यक्तिगत विचारों को गौण करके समाज के संगठन को मुख्यता दे, एकीकरण को मुख्यता दे और युवकों का उत्साह बढाए, ताकि गौहाटी श्रावक समाज की छवि और प्रतिष्ठा को विकसित होने का मौका मिले।

12.10.1992. जैन विश्व भारती, लाडनूं। **आचार्य तुलसी**

(श्री जसकरण फूलफगर द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

इस साल असम में दो चतुर्मास, मुनि ताराचन्दजी का गौहाटी, साध्वी जयश्रीजी का खारूपेटिया।

मुनि ताराचन्दजी का चतुर्मास कैसा सफल रहा, यह वहां से आने वाले जन-जन की आवाज से जाना जाता है। मुनि ताराचन्दजी हमारे संघ के विशिष्ट साधक साधुओं में एक है। उन्होंने जिस मानसिक प्रसन्नता से, खुशहाली से काम किया है, उसकी सर्वत्र महक है। इस सफलता में अनुगामी मुनि सुमतिकुमार का विशिष्ट सहयोग रहा है। इससे मुनि ताराचन्दजी को निश्चिन्तता रही है।

साध्वी जयश्री को जाना बंगाल था, पर कारणवश वहां नहीं जा सकीं। इस बात की तनिक भी चिन्ता की जरूरत नहीं है, क्योंकि मेरे मन में साधु-साध्वियों के प्रति इतना भरोसा है कि वे केन्द्र की दृष्टि का स्वप्न में भी अतिक्रमण नहीं करते, परिस्थितियां आ जाती हैं, उसमें वैसा करना पड़ता है।

साध्वी जयश्री का चतुर्मास अनेक दृष्टियों से बहुत सफल रहा। वहां के जन-जन में जो भावना बढ़ी है ,संघ के प्रति आस्था सुदृढ़ हुई है। यह कहने की बात नहीं है। सभी साध्वियां अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखते हुए दूसरा निर्देश न हो, तब तक असम में विचरें और संघ की गौरव गरिमा बढ़ाएं।

12.10.1992. जैन विश्व भारती, लाडनूं। **आचार्य तुलसी**

(श्री जसकरण फूलफगर द्वारा प्राप्त आचार्यश्री का मुनि ताराचन्दजी व साध्वी जयश्रीजी के लिए संयुक्त संदेश)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी दो वर्ष से असम प्रवासी हो गए हैं। वे जहां भी गए हैं, वहां के लोगों में बहुत बड़ी प्रसन्नता हुई है। अब समणियां आ रही हैं। यों तो वो स्वयं भी कार्य करेंगी और मुनि ताराचन्दजी भी उनका मार्गदर्शन करेंगे ही। सानन्द स्वस्थ रहो। भिक्षु चेतना वर्ष का क्रम सब जगह चलाना है। असम में भी उसकी अच्छी प्रक्रिया चलनी चाहिए।

9.4.1993. सरदारशहर। **आचार्य तुलसी**

(समणी परमप्रज्ञा द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी असम में अविश्रम-श्रम कर रहे हैं। इनकी सहज साधनावृत्ति का जनता पर जो प्रभाव पड़ रहा है, इसकी यहां तक गूंज है। सहयोगी मुनि सुमतिकुमारजी का सहज सेवाभाव भी लोगों के आकर्षण का केन्द्र बना हुआ हैं। इस साल असम में एक

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

समणी केन्द्र भी बन गया है। मुनि ताराचन्दजी स्वास्थ्य के प्रति जागरूक रहते हुए जनता को अनवरत उद्‌बोधन देते रहें और धर्मसंघ की प्रभावना करते रहें।

27.4.1993. राणासर। **आचार्य तुलसी**

(कोकिलादेवी, कुंडलिया द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

असम से जो लोग आते हैं, वे मुनि ताराचन्द की तारीफ करते हैं। उनका श्रम संघीय भावना भरने की वृत्ति हर श्रावक को आकृष्ट करती है। मुनि तारा जहां जाते हैं, वहां सारा जनसमुदाय उनके प्रति नत हो जाता है। यह उनकी साधना का परिणाम है। इस बार तेरांपथ प्रबोध घर-घर गूंजना चाहिए और जैन जीवन शैली का अधिक से अधिक प्रचार होना चाहिए। जैन जीवन शैली का एक विशेष लेख जैन भारती 'भिक्षु चेतना' विशेषांक में छपा है,वह पढ़ना और बार-बार जनता को पढ़ाना है।

12.7.1993. राजलदेसर। **आचार्य तुलसी**

(दिलीप दूगड (तेजपुर) द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी सुदूर असम में विहार कर रहे हैं और नागालैण्ड पहुंच गए हैं। जहां कहीं भी जाते हैं, वहां की जनता में धर्मभावना साकार हो जाती है। जनता को बड़ा लाभ मिलता है। उनकी तरफ से दो अध्यात्म से परिपूर्ण पत्र मिले हैं। उन पत्रों का वाचन हमने सभी साधु-साध्वियों की सभा में किया। सबका मन आनन्दित हुआ। मुनि ताराचन्दजी आत्मसाधना को वृद्धिंगत कर ही रहे हैं, और साथ में संघ का गौरव भी बढ़ा रहे हैं। सहयोगी संत मुनि सुमतिकुमार भी बहुत समाधिकारक है, इसकी हार्दिक प्रसन्नता है।

समणी सरलप्रज्ञा आदि चार समणियां वहां (असम) पहुंच रही हैं। उनको कहां-कहां घूमना, रहना उचित रहेगा, पथदर्शन कर देना और वहां क्या-क्या करना है, वह भी बतला देना। समणियां वहां अच्छा काम करेंगी। सबके लिए विशेष समाधि की शुभाशंसा।

4.6.1994. महरौली (दिल्ली) **आचार्य तुलसी**

(समणी सरलप्रज्ञा द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी! 'अपने क्षेत्र में तुम्हारा अच्छा श्रम चल रहा है और संघीय भावना को बल मिल रहा है,' ऐसे संवाद हम बराबर सुनते रहते हैं। ख्याल है उत्तरोत्तर धर्म प्रभावना के कार्यक्रम वृद्धिंगत होते रहेंगे। इस बार जैन धर्म और तेरापंथ धर्मसंघ के प्रभावी कार्यक्रमों के अलावा अणुव्रत के कार्यक्रमों को थोड़ा अधिक बल देना है।

अणुव्रत यात्रा के फोल्डर को पढ़कर कुछ मुद्दों पर विशेष ध्यान देना है।

❖ व्यसन-मुक्ति।

❖ शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षकों एवं विद्यार्थियों को अणुव्रत शिक्षक संसद के साथ जोड़ा जा सके, इसका सक्रिय प्रयत्न केवल प्रचारात्मक नहीं, किंतु कुछ गहराई में जाकर काम करना है।

❖ अणुव्रत के 5-10 ऐसे कार्यकर्ता तैयार हों, जो वहां तो कार्य करें ही, केन्द्रीय अणुव्रत शिविर में भी भाग ले सकें।

❖ अणुव्रत परिवार योजना पर विशेष बल। यह ध्यान रहे कि भीड़ इकट्ठी न हो। फोल्डर में जैसा निर्देश है, वैसे ही परिवारों को जोड़ना है। केवल संख्या पर दृष्टि न रहे।

4.7.1994. अध्यात्म साधना केन्द्र, नई दिल्ली। **गणाधिपति तुलसी**

(ललित गर्ग द्वारा प्राप्त)

❖ आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के प्रेरणा-प्रदायी संदेश ❖

अर्हम्

मुनिश्री ताराचन्दजी के प्रति आचार्यश्री महाप्रज्ञजी द्वारा रचित आशीर्वादात्मक संस्कृत श्लोक।

गौरवं स्वगुणैः प्राप्तं, आत्मस्थः स्वावलंबनः।
ताराचन्दः स्वचंद्रेण, प्रवरां शांतिमृच्छति॥

ताराचन्द मुनि ने अपने गुणों से ही शासन गौरव पद को प्राप्त किया है। ये आत्मस्थ एवं स्वावलंबी हैं। अपनी चंद्रता से ही वे ताराओं में चन्द्र के समान हैं तथा प्रवर शांति का अनुभव कर रहे हैं।

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी! सुखपृच्छा। तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक होगा? तुम साधना और मानसिक प्रसन्नता का जीवन जीते हो, यह बहुत शुभ है। इस बार पंजाब में तुमने जिस शासननिष्ठा और सूझ-बूझ से काम किया, वह ध्यान आकर्षित करने वाला है। तुम्हारा पत्र पढ़ा। जिस अतीत की यात्रा कर तुमने लिखा ऐसा लगा जैसे वह साक्षात् हो गया। तुम्हारा साधनामय जीवन निरन्तर विकसित बने। खूब-खूब प्रसन्न रहना।

मुनि मिश्रीलालजी और सुमतिकुमार से सुखपृच्छा। स्वाध्याय, ध्यान आदि में विकास चले। विनय, अनुशासन, सौहार्द और सेवाभाव बढ़े।

विक्रम संवत् 2040, फाल्गुन कृष्णा 6, चाड़वास। **युवाचार्य महाप्रज्ञ**

(मुनिश्री सागरमलजी 'श्रमण' द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी आत्मनिष्ठ और शासननिष्ठ मुनि हैं। उनके साथ तपस्वी मुनि मिश्रीलालजी का भी एक सहज सुन्दर योग है। छोटे मुनि सुमतिकुमारजी भी विनम्र और सेवारत हैं। मुनि ताराचन्दजी के प्रवास से कच्छ सचमुच धार्मिक दृष्टि से भी कच्छ बन गया। कच्छ के श्रद्धालु श्रावक उनके ज्ञान और ध्यान का अधिक लाभ लें।

17-6-0875- **युवाचार्य महाप्रज्ञ**

(कमलेशजी चतुर्वेदी के पत्र द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी अपने सहवर्ती संतों के साथ गुलाबबाग में चातुर्मासिक प्रवास कर रहे हैं। काफी सफलता के साथ कार्यक्रम चल रहे हैं। वे अपनी साधना के साथ-साथ शासन की प्रभावना में पूरी शक्ति लगा रहे हैं। यह संतुलन बहुत महत्त्वपूर्ण है।

उनकी सहजता सहज ही लोगों को आकर्षित करती है। योगक्षेम वर्ष में बहुत प्राप्त किया हैं। उसका पूरा-पूरा प्रयोग कर रहे हैं और करते रहें। उनकी अध्यात्म यात्रा जनता में आध्यात्मिक चेतना जगाने में निमित्त बने।

10-8-088 - **युवाचार्य महाप्रज्ञ**

(समण श्रुतप्रज्ञ द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी असम में यात्रा कर रहे हैं। उनके तथा मुनि सुमतिकुमार के मनोबल ने इस यात्रा को अधिक उपयोगी बनाया। उनकी यात्रा सब के लिए कल्याणकारी हो।

29.2.1992. दोपहर-3:16 बजे। **युवाचार्य महाप्रज्ञ**

(विजय भरूंट (बंगाईगांव) द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी में वैराग्य, निस्पृहता, सेवाभाव और समर्पण इन सबका योग सहज ही मिला और मुनि सुमतिकुमारजी का भी अनुकूल योग मिला। गौहाटी बड़ा क्षेत्र है। श्रम रहेगा, पर उनकी आध्यात्मिक वृत्ति और सहिष्णुता इसे झेल लेगी। उनकी निर्मल लेश्या का प्रभाव आस-पास के वातावरण में पड़े, यह अभीप्सा है।

1 -6-0881- **युवाचार्य महाप्रज्ञ**

(समणी कुसुमप्रज्ञाजी द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी विनम्रता, आध्यात्मिक भावना, सहजता, सरलता और समर्पण के प्रतीक हैं। उन्होंने जिस अभय व निष्ठा के साथ कार्य किया है, वह आनन्द का विषय है। वे यहां की स्मृति करते रहते हैं। मुनि सुमतिकुमारजी का भी उन्हें सम्यक् योग मिला है। उनकी विकास यात्रा आगे बढ़ती रहे। मंगलकामना। प्रसंगवश यहां भी उनकी स्मृति होती रहती है।

9.4.1993. सरदारशहर। **युवाचार्य महाप्रज्ञ**

(समणी परमप्रज्ञाजी द्वारा प्राप्त)

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी ने साधना का कंबल नहीं ओढ़ा है, किंतु उसका जीवन जीया है। उनकी प्रकृति और प्रवृत्ति को आरम्भ से मैं जानता रहा। प्रकृति में सहज विनम्रता और प्रवृत्ति में सहज जागरूकता दोनों उन्हें उपलब्ध हैं। दूर रहते हुए भी वे सदा हमारे निकट हैं। उन्होंने इस यात्रा में लोकमानस पर जो छाप छोड़ी है, वह उनकी सहज साधना का ही परिणाम है। मुनि सुमतिकुमार ने भी मुनि ताराचन्दजी का अनुगमन किया है और उनकी सफलता में योग दिया है। वह निरन्तर चलता रहे।

13.7.1993. राजलदेसर। **युवाचार्य महाप्रज्ञ**

(दिलीप दूगड़ (तेजपुर) द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी और मुनि सुमतिकुमार की साधना मौन रहती है, पर कभी-कभी मुखर हो जाती है। तुम्हारी साधना ने असम में जो वातावरण बनाया है, वह अद्‌भुत है। तटस्थ और निरपेक्ष व्यक्ति कितनी गति से काम कर सकते हैं, उसे देखने का अवसर मिला है। तुम्हारी साधना निरन्तर गतिशील बने। जनता को उससे पथदर्शन मिले। मंगलभावना। समणी वर्ग की यात्रा अधिक सार्थक बने, चिन्तनपूर्वक सुझाव देना है और पथदर्शन करना है।

4.6.1994. महरौली (दिल्ली) **आचार्य महाप्रज्ञ**

(समणी सरलप्रज्ञाजी द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी लंबे समय से असम में विहार कर रहे हैं। उनका विहार एक प्रेरणा है। जब साधना बोलती है,तब व्यक्ति को बहुत बोलना जरूरी नहीं है। उनकी साधना हमारे धर्मसंघ के लिए एक पवित्र आभामंडल तैयार कर रही है। मुनि सुमतिकुमार का पूरा-पूरा सहयोग मिल रहा है। मुनिद्वय की यात्रा असम के श्रावक समाज और जनता के लिए और अधिक कल्याणकारी बने।

1.8.1994. अध्यात्म साधना केन्द्र, महरौली, नई दिल्ली। **आचार्य महाप्रज्ञ**

(सीतारामजी सेठिया(नौगांव) द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी! तुमने आत्मनिष्ठा और शासननिष्ठा दोनों का जैसा समन्वय किया है, वह दुर्लभ कोटि की उपलब्धि है। वैराग्य और मनोबल दोनों के साथ जो काम कर रहे हो, वह मन को आल्हादित करता है।

मुनि सुमतिकुमारजी इस कार्य में तुम्हारे सहयोगी बने हुए हैं। बिहार व नेपाल यात्रा अधिक उपयोगी बने। जो नए जैन बने हैं और कर्मणा जैन बने हैं, उनमें स्थिरता आए इस पर ध्यान देना है।

3.5.1995. बीदासर। **आचार्य महाप्रज्ञ**

(श्री धूड़चन्दजी सिंघी (गुलाबबाग) द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी की समता, संतुलन और आध्यात्मिक साधना मन को प्रसन्न करनेवाली है। हम भी न जाने कितनी बार उनको याद करते हैं। उनकी साधना असम में बहुत गतिशील बनी है। नेपाल में भी उसकी गति आगे बढ़े और उसका स्पर्श हम तक पहुंचे। मुनि सुमतिकुमारजी भी उन्हीं के पदचिन्हों पर चलने का प्रयत्न करें। विराटनगर का श्रावक समाज उनसे लाभान्वित हो।

05-7-0884- **आचार्य महाप्रज्ञ**

(समणी कुसुमप्रज्ञाजी द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

'शासन गौरव' अलंकरण

तुमने अपनी सहज साधना और आंतरिक समर्पण वृत्ति एवं संघनिष्ठा से धर्मशासन की उल्लेखनीय गरिमा बढ़ाई है। गुरुदेव के इंगित के अनुरूप इसका मूल्यांकन करते हुए 132वें मर्यादा महोत्सव के अवसर पर मैं तुम्हें 'शासन गौरव' अलंकरण से अलंकृत करता हूं।

26.1.1996. जैन विश्व भारती, लाडनूं। **आचार्य महाप्रज्ञ**

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

(पूर्वांचल की छः वर्षीय यात्रा में विक्रम संवत् 2052 का छठा चतुर्मास विराटनगर (नेपाल) में किया। वहां से 60 दिनों में 1600 कि.मी. की यात्रा संपन्न कर गणाधिपति गुरुदेव श्रीतुलसी एवं आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के दर्शन विक्रम संवत् 2052, माघ कृष्णा एकम, ता. 7 जनवरी,1996, भिक्षु विहार, जै. वि. भा. लाडनूं में किए।

गुरुदेव श्री तुलसी के इंगितानुसार आचार्यप्रवर श्री महाप्रज्ञजी ने ता. 8.1.1996 को 'शासन गौरव' अलंकरण प्रदान किया, सुधर्मा सभा, जै.वि.भा. लाडनूं में प्रातः प्रवचन के समय। विधिवत् 'शासन गौरव' अलंकरण पत्र प्रदान किया, दिनांक : 26.1.1996. मर्यादा महोत्सव के अवसर पर।)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी का चतुर्मास जनता के लिए लाभदायी बन रहा है। महाराष्ट्र को और अधिक ध्यान से संभालना है। वह अच्छा क्षेत्र बन सकता है।

12-0 -0887- **आचार्य महाप्रज्ञ**

(श्री विजयराजजी छल्लाणी (जयपुर) द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी जिस प्रदेश में जाते हैं, उसी प्रदेश के हो जाते हैं। दो वर्षों से महाराष्ट्र की यात्रा पर हैं। अनेक क्षेत्रों को संभाला है, काफी बार संभाल की है। पता चला है कि बुरहानपुर जा रहे हैं। इस गर्मी में काफी लम्बा रास्ता होगा। यद्यपि मनोबल खूब है, फिर भी स्वास्थ्य का ध्यान रखना जरूरी है। एक साथ 20-22 किलोमीटर का विहार करने पर भी विचार करना होगा। इतना लम्बा विहार हो सके, तब तक टाला जाए। मुनि सुमतिकुमारजी एवं मुनि देवार्यजी, जो भुसावल के ही है, सभी निष्ठा और श्रमपूर्वक कार्य कर रहे हैं। क्षेत्रीय संभावना का अध्ययन करना है और कर्मणा जैन लोगों का ध्यान देना है।

29.5.1999. अध्यात्म साधना केन्द्र, महरौली, नई दिल्ली। **आचार्य महाप्रज्ञ**

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी! तुमने जो विवेक का परिचय दिया, उससे सचमुच हमें हर्ष ही नहीं, सात्त्विक गर्व का अनुभव हुआ है। तुम्हारे संघीय संस्कार तुम्हारे पास रहने वाले मुनि सुमतिकुमारजी आदि में भी संक्रात होते रहें। जैसे ही दूसरी व्यवस्था हो जाएगी, वैसे ही तुम यहां की दिशा में विहार कर दोगे।

7.2.2000. तारानगर। **आचार्य महाप्रज्ञ**

(श्री रतनलालजी चोरड़िया (लाछूड़ा)द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी! तुम लाछुड़ा में सेवारत हो। तुम्हें आदेश दिया गया, वह औपचारिकता थी। सहज विश्वास था कि स्थिति का आकलन कर तुम स्वयं सेवा के कार्य को संभालोगे। आसींद के भाइयों से ज्ञात हुआ कि तुमने वैसा ही किया। तुम्हारे जैसे साधुओं पर सात्त्विक गर्व होता है।

वहां की स्थिति पर तुम ध्यान दो। यदि आसींद जाने में चिकित्सा की सुविधा हो और जाने में कोई कठिनाई न हो तो तुम जा सकते हो, किंतु मुनि बालचन्दजी व मुनि देवराजजी को भी कैसे ले जाया जा सकेगा? इस पर ध्यान दे लो। आस-पास में साधुओं का कोई सिंघाड़ा नहीं है। इसलिए इधर भी लाने में कठिनाई है। तुम जिस गति से आ रहे थे, उसमें एक बार अवरोध आ गया है, किंतु संघीय आवश्यकता को ध्यान में रखकर अभी तुम्हें वहां रखना भी जरूरी है। मुनि संगीतकुमारजी अभी उदयपुर में है। उनकी स्थिति भी तुम ज्ञात कर लो। वे स्वस्थ होकर कब तक आ सकते हैं, इस विषय में और भी कोई चिन्तन हो, सुझाव हो तो हमें पता लग जाए।

03-1-1 - **आचार्य महाप्रज्ञ**

(श्री चांदमलजी चोरड़िया (आसींद) द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

मुनि शुभकरणजी! मुनि ताराचन्दजी के साथ परामर्श कर जो चिन्तन किया है, वह ठीक है। मुनि देवार्यजी तुम्हारे साथ रह जाएं और मुनि पदमकुमार को मुनि ताराचन्दजी के साथ भेज दिया जाए। मुनि पदमकुमारजी भद्र हैं। मुनि ताराचन्दजी के साथ रहकर अधिक योग्य बन जाएगा। इसलिए यह परिवर्तन हित में रहेगा। मुनि देवार्यजी तुम्हारे पास रहकर अध्ययन के साथ-साथ ध्यान में भी अधिक गति करें।

27.6.2001. चाड़वास। **आचार्य महाप्रज्ञ**

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी संघ के गौरव हैं। उनकी सहज साधना, मृदु व्यवहार और धर्मसंघ के प्रति नैसर्गिक समर्पण मन को आकर्षित करने वाला है। दीक्षा के दिन से लेकर अब तक वे मेरे बहुत निकट रहे हैं। मैने देखा–उन्होंने तेरापंथ के मूल आधार-अहंकार और ममकार का विसर्जन किया है। वे तिहत्तर वर्ष की जीवन यात्रा-संपन्न कर चोहत्तरवें वर्ष में प्रवेश कर रहे हैं। इस अवसर पर मैं उनके प्रति मंगलभावना करता हूं कि वे सर्वात्मना स्वस्थ रहकर अपनी साधना के साथ-साथ धर्मसंघ की सेवा करते रहें। मुनि सुमतिकुमारजी एवं देवार्यकुमारजी उनकी शासन-सेवा में सहभागी बने रहें।

24.1.2004. जलगांव। **आचार्य महाप्रज्ञ**

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी! तुम्हारा कार्य सम्यक् प्रकार से चल रहा है। मुनि सुमतिकुमारजी एवं देवार्यकुमारजी तुम्हारे सहयोगी हैं। श्रम, साधना रंग लाती है। यह प्रत्यक्ष देखने को मिल रहा है। श्रावक समाज की सम्यक् सम्भाल कर रहे हो। साथ-साथ दक्षिण भारत की परिस्थिति का अध्ययन भी करना है और समय आने पर सूचित भी करना है।

29.1.2004. जैनहिल्स (जलगांव) **आचार्य महाप्रज्ञ**

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी! तुम्हारी और तुम्हारे सहवर्ती साधुओं की साधना अविच्छिन्न रुप से चल रही है, वह चलती रहे। तुम स्वयं चक्षुष्मान् हो। इस बाह्य चक्षु का जो भी उपचार हो, उसमें अन्तर्चक्षु स्वयं सहयोगी बनें। ऑपरेशन के बाद और अधिक दृष्टि का विकास हो और दूसरों को दृष्टि संपन्न बनाने में सहयोगी बने।

7.7.2004. सिरियारी। **आचार्य महाप्रज्ञ**

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी, मुनि सुमतिकुमारजी एवं देवार्यकुमारजी! तुम्हारी यात्रा बहुत प्रभावी और उपयोगी हो रही है। मुनि ताराचन्दजी की अन्तर्मुखी वृत्ति, साधना और मृदु-मधुर व्यवहार का मेरे मन पर भी प्रभाव है तो दूसरों के मन पर उसका प्रभाव होना स्वाभाविक है। स्वास्थ्य का ध्यान रखते हुए खूब अच्छा कार्य करो और धर्मसंघ की प्रभावना करते रहो।

28.8.2005. अध्यात्म साधना केन्द्र, महरौली (दिल्ली) **आचार्य महाप्रज्ञ**

अर्हम्

शासन गौरव मुनि ताराचन्दजी! तुम अपनी साधना, संयम और विवेक के द्वारा सचमुच शासन का गौरव बढ़ा रहे हो। तुम्हारी वाणी का विवेक अनुत्तर है, फिर तुमने मौन क्यों किया? सहज ही यह प्रश्न होता है। पर जो किया, वह अधिक विकास के लिए हुआ है। अब मौन संपन्न हो रहा है। फिर से जनता को, श्रावक समाज को लाभ मिलेगा।

कार्तिक शुक्ला 2, विक्रम संवत्, 2062, अध्यात्म साधना केन्द्र, महरौली (नई दिल्ली) **आचार्य महाप्रज्ञ**

अर्हम्

पूज्य आचार्यप्रवर ने निर्देश प्रदान किया है कि शासन गौरव मुनिश्री ताराचन्दजी स्वामी मुमुक्षु आलोक मरोठी को मुनि दीक्षा और मुमुक्षु हंसराज मरोठी को समण दीक्षा से दीक्षित करें। दिनांक 2.5.2007, समय प्रातः 8:50 से 9:10 के बीच। स्थान : जैन विश्व भारती, लाडनूं।

9.4.2007. देसुरी। **युवाचार्य महाश्रमण**

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी,मुनि सुमतिकुमारजी एवं देवार्यकुमारजी !

शासन गौरव ताराचन्दजी को दीक्षा देने का निर्देश दिया गया, यह श्रेयस के लिए होगा।

अपने धर्मसंघ की परम्परा है कि कोई साधु-साध्वी आचार्य की आज्ञा के बिना किसी को दीक्षित नहीं कर सकता। काफी वर्षों की प्रतीक्षा के बाद पुत्र की मुनि दीक्षा और पिता की समण दीक्षा हो रही है। जै. वि. भा. लाडनूं और विश्वविद्यालय के लिए भी यह महत्त्वपूर्ण प्रसंग है।

मुनि ताराचन्दजी! तुम्हारा धर्मशासन के प्रति पूर्ण समर्पण है। दीक्षित होने वाले मुमुक्षु तुम्हारी सन्निधि पाकर जागरूक मुनि और समण बनेंगे। यह सुदृढ़ विश्वास है। इस पवित्र कार्य के लिए हमारी मंगलभावना और युवाचार्य महाश्रमण भी इस मंगलभावना में हमारे साथ हैं।

20.4.2007. रावलिया कलां। **आचार्य महाप्रज्ञ**

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

जैन विश्व भारती में जैन दीक्षा समारोह के अवसर पर प्रदत्त पूज्यप्रवरों का मंगल आशीर्वाद–

आचार्य महाप्रज्ञ–लाडनूं का अपना गौरव है, क्योंकि वह आचार्य तुलसी की जन्मभूमि है। जैन विश्व भारती का अपना गौरव है, क्योंकि वह आचार्य तुलसी के सपनों की कामधेनु है। विश्वविद्यालय का अपना गौरव है, क्योंकि वह विकास का सतत माध्यम है। उस प्रांगण में शासन गौरव मुनि ताराचन्दजी के द्वारा मुनि दीक्षा और समण दीक्षा का आयोजन हो रहा है। प्राय: दीक्षा हमारे पास होती है। अन्यत्र बहुत कम आदेश देते हैं। भिक्षु शासन की परम्परा है कि कोई भी साधु-साध्वी किसी को दीक्षित नहीं कर सकता, किंतु जब आचार्य का आदेश होता है तो आदेश के अनुसार वे दीक्षा का कार्यक्रम संपन्न करते हैं। आदेश अर्हता के आधार पर होता है।

मुनि ताराचन्दजी प्रारम्भ से विनम्र, साधक वृत्ति वाले, शासन भक्त,आचार्य भक्त साधु रहे हैं, आचारनिष्ठ साधु रहे हैं। ऐसे साधु के पास कोई दीक्षित होता है तो उसे भी संस्कारी बनने का मौका मिलता है। मुनि ताराचन्दजी के द्वारा मुमुक्षु आलोक की मुनि दीक्षा संपन्न की जा रही है, उसके साथ उसके पिता हंसराजजी की समण दीक्षा संपन्न की जा रही है। मंगलभावना दीक्षा देने वालों के प्रति, मंगलभावना दीक्षा लेने वालों के प्रति और मैं मंगलभावना करता हूं कि दीक्षित होने वाले मुनि ताराचन्दजी के पदचिन्हों पर चलकर उनकी विशेषताओं का अनुसरण करने का प्रयत्न कर जैन धर्म, तेरापंथ का गौरव बढ़ाएंगे और आचार्य परम्परा के प्रति, वर्तमान आचार्य के प्रति पूर्ण समर्पित रहकर अपनी जीवन-यात्रा को आनंदमय संपन्न करेंगे।

युवाचार्य महाश्रमण–आत्मा की अनन्त काल की यात्रा में मानव जन्म की प्राप्ति एक बहुत बड़ी उपलब्धि है और उसमें मुनित्व की प्राप्ति परम उपलब्धि है। जैन विश्व भारती, लाडनूं में दीक्षा समारोह निर्णीत है। आचार्यश्री का निर्देश है कि शासन गौरव मुनि ताराचन्दजी बालक आलोक मरोठी और उसके पिता हंसराजजी मरोठी को दीक्षित करें।

दोनों ही मुमुक्षु दीक्षित होकर बहुत अच्छी साधना करें और अपनी आत्मा का कल्याण करें और धर्मशासन की वृद्धि हो सके, ऐसा कार्य करें। हम दूर बैठे-बैठे दीक्षा को सामने रखकर यह मंगलकामना करते हैं कि यह दोनों ही दीक्षित होने वाले मुमुक्षु एक मुनि के रूप में और एक समण के रूप में अच्छी साधना करें और धर्मसंघ की प्रभावना का कार्य करें।

साध्वीप्रमुखा कनकप्रभा–जैन परम्परा में दीक्षा का विशेष महत्त्व है। यह आध्यात्मिक अनुष्ठान है। सांस्कृतिक अनुष्ठान है। सबको प्रेरणा देने वाला अनुष्ठान है। तेरापंथ की परम्परा के अनुसार दीक्षा देने का अधिकार एकमात्र धर्मसंघ के आचार्य को होता है। आचार्य की आज्ञा से साधु-साध्वी के सान्निध्य में भी दीक्षा का कार्यक्रम आयोजित हो सकता है। सवाल एक ही है कि व्यक्ति दीक्षा क्यों लेता है? आज के युग में भौतिक आकर्षण चरम सीमा तक बढ़े हुए हैं। संसारी प्राणी उस आकर्षण से बंधा हुआ है। लाखों-लाखों व्यक्तियों के बीच में कोई-कोई व्यक्ति विरक्त बनता है। विरक्त चेतना में कुछ जिज्ञासाएं उभरती हैं–मैं कौन हूं? मैं पिछले जन्म में क्या था? इस जन्म के बाद क्या बनूंगा? इन सब जिज्ञासाओं से प्रेरित होकर व्यक्ति अपने जीवन में कुछ विशिष्ट काम करना चाहता है। नया अभिकर्म करना चाहता है। ऐसा ही एक अभिकर्म है–दीक्षा का आयोजन।

आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के सान्निध्य में मेवाड़ के सेरा प्रान्त में सेमड़ गांव में दीक्षा का भव्य आयोजन संपन्न होने जा रहा है और उसी दिन आचार्यप्रवर की अनुज्ञा से जैन विश्व भारती, लाडनूं में पिता-पुत्र दीक्षित होने के लिए समुद्यत हो रहे हैं। आचार्यश्री की आज्ञा से शासन गौरव मुनिश्री ताराचन्दजी दीक्षा संस्कार संपन्न करेंगे। चतुर्विध धर्मसंघ की उपस्थिति रहेगी। शासन गौरव साध्वीश्री राजीमतीजी, साध्वीश्री रामकुमारीजी और साध्वीश्री कंचनप्रभाजी को भी सहज ही यह अवसर उपलब्ध होगा, तो चतुर्विध धर्मसंघ की उपस्थिति में शासन गौरव मुनिश्री ताराचन्दजी के द्वारा दीक्षा संस्कार संपन्न कराया जाएगा। यह जैन शासन की , तेरापंथ धर्मसंघ की प्रभावना का एक उपक्रम है।

जो पिता-पुत्र दीक्षार्थी हैं–एक की समण दीक्षा व एक की मुनि दीक्षा होने जा रही है। उन्हें यही लक्ष्य बनाना है कि तेरापंथ धर्मसंघ में दीक्षा का अनुष्ठान अपनी आत्मा के विकास के लिए, आध्यात्मिक अभ्युदय के लिए होता है। इसमें सबसे पहला उपक्रम है गुरु के प्रति सर्वात्मना समर्पण, धर्मसंघ के अनुशासन को बहुमान देना, अपनी साधना में सजग रहना, आध्यात्मिक विकास के लिए सतत जागरूक रहना और इसके लिए जिस गुणवत्ता की जरूरत है अध्यात्मनिष्ठा, संघनिष्ठा, गुरुनिष्ठा , अनुशासननिष्ठा और मर्यादानिष्ठा का एक कवच बनाकर जो साधक अपनी साधना में संलग्न रहता है, उसे किसी प्रकार का भय नहीं होता है। निर्भय होकर आगे बढता हैं और अपनी मंजिल तक पहुंचता हैं। जो लोग दीक्षा समारोह में साक्षी बन रहे हैं, उन लोगों का भी दायित्व है कि वे केवल इस दृश्य को देखकर-सुनकर ही संतुष्टि का अनुभव न करें, उन्हें भी इस महायज्ञ में कुछ संकल्प स्वीकार करके इसके साथ जुड़ने का लक्ष्य बनाना है। तेरापंथ शासन विजयी शासन है। आचार्य भिक्षु की दूरदर्शिता, हमारे उत्तरवर्ती आचार्यों की जागरूकता, उनके पुरूषार्थ से हमारे धर्मसंघ का बगीचा फल-फूल रहा है। नन्दनवन की उपमा इस धर्मसंघ को दी गई है तो हम इस धर्मसंघ में आनन्द के साथ, निश्चिन्तता के साथ अपनी साधना करते हुए वीतरागता के मार्ग पर अग्रसर हों। यही मंगलकामना है, ओम अर्हम्।

{ता. 2 मई, 2007 को मुनि दीक्षा तथा समण दीक्षा के अवसर पर आचार्यप्रवर ,युवाचार्यप्रवर एवं साध्वीप्रमुखाजी के सी.डी. द्वारा साक्षात् समुच्चारित प्रेरक सन्देश। (विक्रम संवत् 2064, वैशाख सुदी 15, बुधवार)}

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी हमारे धर्मसंघ में एक विशिष्ट पहचान बनाए हुए हैं। उन्होंने सहिष्णुता, विनम्रता, मृदुता और आत्मतोष की साधना की है। वह साधना व्यवहार में फलित हो रही है। उनका 78 वां जन्मदिन मंगलमय बने। वे अपनी व्यक्तिगत साधना और संघीय साधना का समन्वय करते रहे हैं। उन्होंने व्यक्तिगत व संघीय दोनों प्रकार की साधनाओं का समन्वय कर एक उदाहरण प्रस्तुत किया है। उनके परिपार्श्व में रहने वाले उनकी विशेषताओं का संयोजन करते रहें।

8.2.2008. आसींद। **आचार्य महाप्रज्ञ**

अर्हम्

संघ परामर्शक, शासन गौरव मुनि मधुकरजी का स्वर्गवास एक दुष्पूरणीय क्षति का एहसास करा रहा है। उनका सौम्य स्वभाव और सेवाभाव विशिष्ट था। उन्होंने पूज्य गुरुदेव तुलसी की लम्बे काल तक निष्ठापूर्ण सेवा की। अन्य संघीय कार्यों में भी उनका महत्त्वपूर्ण योगदान था। तेरापंथ युवक परिषद उनकी चिरऋणी है। सहवर्ती संतों ने सेवा का उदाहरण प्रस्तुत किया है। शासन गौरव मुनि ताराचन्दजी का सुन्दर योग मिल गया। उन्हें पुरानी प्रीत निभाने का दुर्लभ अवसर मिला है। मंगलम्।

1.10.2008. अणुविभा, जयपुर। **आचार्य महाप्रज्ञ, युवाचार्य महाश्रमण**

अर्हम्

शासन गौरव मुनि ताराचन्दजी! सहवर्ती मुनिगण!

तुम उदयपुर का सफल चतुर्मास कर आ रहे हो। सभी संतों ने मुनि मधुकरजी के समाधि मरण में अपना-अपना योगदान दिया। उसका इतिहास लेकर आ रहे हो। तेरापंथ की सेवा का एक उदाहरण प्रस्तुत हुआ।

लाडनूं से मुनि हीरालालजी को लाए हो। अतीत वर्तमान हो रहा है। बहुत लम्बे समय तक तुम लोग साथ रहे हो।

27.12.2008. सुजानगढ़। **आचार्य महाप्रज्ञ**

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी!

तुम्हारी साधना उत्कर्ष पर है, और आगे बढ़े।

❖ रहें भीतर, जीएं बाहर।

❖ सुभेणं परिणामेणं, सुभेणं अज्झवसाएणं, लेस्साए विसुज्झमाणीए।

❖ भाव क्रिया-अप्रमाद का सिंहद्वार।

❖ भाव विशुद्धि-अप्रमाद का सिंहद्वार।

❖ एगो मे सासओ अप्पा।

11.2.2009. बीदासर (राज.) **आचार्य महाप्रज्ञ**

अर्हम्

मुनि ताराचन्दजी एक मास की साधना का विशेष प्रयोग संपन्न कर आज पुन: जनता के बीच में आ रहे हैं। उनकी साधना से पूरे समाज को अध्यात्म की प्रेरणा मिले। उनके अनुभवों से नया आलोक मिले। मंगलभावना।

10-0 -1 8- **आचार्य महाप्रज्ञ**

(लक्ष्मीपत छाजेड (दिल्ली) द्वारा प्राप्त)

❖ आचार्यश्री महाश्रमणजी के पावन संदेश ❖

अर्हम्

मुनिश्री ताराचन्दजी स्वामी हमारे धर्मसंघ के उच्च कोटि के साधक संत हैं। ध्यान साधना के साथ-साथ संघीय गतिविधियों का समुचित संचालन, दोनों का योग अपने आप में महत्त्वपूर्ण है। हमने सुना है कि मुनिश्री का स्वास्थ्य ठीक नहीं है। स्वास्थ्य का ध्यान दें। साथ वाले संतों में भी समुचित अध्यात्म, विनय, अनुशासन, स्वाध्याय, अध्ययन आदि के संस्कार भरते रहें। यह अपेक्षा है। साथ वाले संत भी अपने समय का समुचित उपयोग करते हुए अपनी साधना, आराधना में आगे बढ़ें, यही श्रेयस्कर होगा।

5.11.1990. पाली। **महाश्रमण मुदित कुमार**

(समणी सुप्रज्ञाजी द्वारा प्राप्त)

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अर्हम्

मुनिश्री ताराचन्दजी! कुछ साधु-साध्वियों के नाम चुने गए हैं, जो आध्यात्मिक विशेष साधना कर सकते हैं। उनमें एक नाम आप का भी है। आध्यात्मिक साधना के अनेक विषय बन सकते हैं। विभिन्न लक्ष्यों से विभिन्न प्रयोग किये जा सकते हैं।

❖ अतीन्द्रिय ज्ञान-प्राप्ति के लिए प्रयोग। ❖ पूर्व जन्म के साक्षात्कार का प्रयोग ❖ कषाय संबंध के प्रयोग।

इस प्रकार और भी अनेक उद्देश्य हो सकते हैं। आपके सामने यात्रा का क्रम तो है, फिर भी हमें संभावना लगती है कि आप समय निकाल सकेंगे और प्रयोग कर सकेंगे। आप किस प्रकार के प्रयोग करने में रुचि लेंगे? किस दिशा में आगे बढ़ने का प्रयोग करेंगे? उसकी खोज करेंगे। उसकी अवगति चाहिए।

4-4-0887- **युवाचार्य महाश्रमण**

(चम्पालालजी कोटेचा(भुसावल)द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

ज्ञात हुआ कि मुनिश्री ताराचन्दजी को अन्य कार्य व्यवस्था के कारण विशेष प्रयोगों के लिए समय मिलना मुश्किल है। ठीक है, श्रावकों को संभालना भी हमारा काम है। व्यवस्था देखना भी अग्रणी का मुख्य काम है। दूर देश जाकर इन कार्यों को गौण करना भी ठीक नहीं है। इसलिए जैसा उनका चिन्तन है, कषाय-विजय की साधना बढ़िया है।

12-0 -0887- **युवाचार्य महाश्रमण**

(श्री पवनजी चोरड़िया (भुसावल)द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

शासन गौरव मुनिश्री ताराचन्दजी स्वामी के पाइल्स का ऑपरेशन हो गया। ऐसा संवाद मिला। स्वास्थ्य अच्छा रहे। राजसमन्द में खूब अच्छा काम करते रहें। दोनों सहवर्ती संत सेवा, स्वाध्याय, साधना में जागरूक बने रहें। मंगलकामना।

2.10.2001. बीदासर। **युवाचार्य महाश्रमण**

(समणी सुप्रज्ञाजी द्वारा प्राप्त)

अर्हम्

पूज्यवर ने फरमाया है–'मुनि देवार्यकुमारजी, जो अभी मुनि शुभकरणजी के साथ हैं, वे चतुर्मास के बाद वापस आपके साथ हो जाएं।' आप सूचना संबोधि भी पहुंचा देवें। (चरणरज-रतन दूगड़)

अर्हम्

शासन गौरव मुनिश्री ताराचन्दजी मेवाड़ से चले और कर्नाटक तक पहुंच गए। बीच में उन्हें गुरुवर के दर्शन व उपासना का भी लाभ मिल गया।

साध्वीश्री सुमनश्रीजी पहले से ही कर्नाटक में है। दोनों सिंघाड़ों का बेंगलुरू में मिलन हो रहा है। यह मिलन हमारे धर्मसंघ की गरिमा को प्रकट करने वाला और उसे बढ़ाने वाला बने।

दोनों सिंघाड़ों का चतुर्मास कर्नाटक में ही निर्दिष्ट है। जहां भी जाना, रहना हो वहां खूब अच्छा काम चले। धर्मशासन की खूब प्रभावना हो। मंगलकामना।

31.5.2003. वापी, गुजरात। **युवाचार्य महाश्रमण**

अर्हम्

शासन गौरव मुनिश्री ताराचन्दजी स्वामी! दक्षिण भारत के चतुर्मास घोषित हो चुके हैं। किस सिंघाड़े के लिए कौनसा चौखला ठीक रहे–इस विषय में आपका परामर्श हमें प्राप्त हो जाए। मुनिश्री कमलकुमारजी का चतुर्मास मण्डिया फरमाया है। शेष चतुर्मास आपको ज्ञात हो गए होंगे।

0 -1-1 3- **युवाचार्य महाश्रमण**

अर्हम्

शासन गौरव मुनिश्री ताराचन्दजी को आंख का इलाज कराने की अपेक्षा है। ऐसा ज्ञात हुआ। अच्छे ढ़ंग से चिकित्सा का कार्य संपन्न हो जाए। वे अच्छे साधक संत हैं। स्वयं विज्ञ हैं। उन्हें ज्यादा कहने की अपेक्षा नहीं। मुनि सुमतिकुमारजी और मुनि देवार्यकुमारजी खूब अच्छा काम करते रहें।

7.7.2004. सिरियारी। **युवाचार्य महाश्रमण**

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

अर्हम्

शासन गौरव मुनिश्री ताराचन्दजी स्वामी हमारे धर्मसंघ के साधना और व्यवहार-कौशल की दृष्टि से एक विशिष्ट संत हैं। गुरुदेव तुलसी की उन पर कृपा दृष्टि रही है। आचार्यश्री भी उनके लिए यदा-कदा आत्म-तोषपूर्ण शब्द फरमाते हैं। ऐसे संतों से धर्मसंघ की प्रभावना बढ़ती है।

मुनि सुमतिकुमारजी अच्छे संस्कारी संत हैं। उन्हें और अधिक विकास करना है। मुनि देवार्यजी शिक्षा, साधना और सेवा के द्वारा स्वयं को विकसित और भावित बनाते रहें।

श्री तेजराजजी पूनमिया संयोजक-आचार्यश्री महाप्रज्ञ व्यवस्था समिति, सिरियारी, निष्ठा के साथ यहां लगे हुए हैं। बीच–बीच में इसी कार्य की दृष्टि से यात्रा भी करते हैं। अच्छे श्रावक हैं। उनसे केन्द्र के सुख-संवाद भी प्राप्त कर सकेंगे।

23.8.2004. सिरियारी। **युवाचार्य महाश्रमण**

अर्हम्

शासन गौरव मुनिश्री ताराचन्दजी स्वामी!

आप का आंख का ऑपरेशन अच्छी तरह हो गया। आपके लिए आन्ध्रप्रदेश की ओर विहार का निर्देश दिया जा चुका है। यदि तमिलनाडु में कुछ क्षेत्रों का स्पर्श अपेक्षित हो तो वह किया जा सकता है। हमें आपके कार्यक्रम की जानकारी मिल जाए।

7.11.2004. सिरियारी। **युवाचार्य महाश्रमण**

अर्हम्

शासन गौरव मुनिश्री ताराचन्दजी स्वामी हमारे धर्मसंघ के एक विशिष्ट संत हैं। उनका व्यवहार उत्तम है। तमिलनाडु में खूब अच्छा काम कर रहे हैं। मुनि सुमतिकुमारजी का योग मुनिश्री ताराचन्दजी की साधना में सहायक बना रहे। मुनि देवार्यकुमारजी स्वाध्याय व ध्यान करते रहें।

1.3.2005. लाडनूं। **युवाचार्य महाश्रमण**

अर्हम्

शासन गौरव मुनिश्री ताराचन्दजी स्वामी हमारे धर्मसंघ के एक असाधारण संत हैं। उनकी साधना, संघनिष्ठा और व्यवहारकौशल ने धर्मसंघ के आचार्यों को भी आकृष्ट किया है।

ज्ञात हुआ कि मुनिश्री जीवन के छिहत्तरवें वर्ष में प्रवेश कर रहे हैं। वे प्रतिदिन-प्रतिपल आत्मस्थ रहते हुए चिरकाल तक धर्मसंघ और जनता की सेवा करते रहें। मंगलकामना।

30.1.2006. धूरी (पंजाब) **युवाचार्य महाश्रमण**

अर्हम्

शासन गौरव मुनिश्री ताराचन्दजी स्वामी और मुनि सुमतिकुमारजी आदि संत!

दिल्ली में खूब अच्छा काम करते रहें। बाल मुनि आदित्यकुमारजी का अध्ययन सुचारू रूप से चलता रहे।

1.3.2010. श्रीडूंगरगढ़। **युवाचार्य महाश्रमण**

अर्हम्

शासन गौरव मुनिश्री ताराचन्दजी स्वामी आदि सभी संतों को यथायोग्य वन्दना, सुखपृच्छा।

सब चित्त-समाधि में रहें, स्वास्थ्य का ध्यान रखें। हम सब साधना का विकास करने का प्रयत्न करें।

दीक्षार्थी तैयार करने का यथासंभव प्रयत्न करें। कोई तैयार हो तो उसकी सूचना यहां मिल जाए।

10.11.2011. केलवा। **आचार्य महाश्रमण**

अर्हम्

ज्ञात हुआ कि शासन गौरव मुनिश्री ताराचन्दजी स्वामी के खुजली की समस्या है। समस्या नहीं रहे, इसलिए समाधान खोज लेना चाहिए। उचित चिकित्सा करा ली जाए।

मुनि देवार्य ने अठाई की है-साधुवाद। मुनि आदित्यकुमारजी साधना, सेवा, स्वाध्याय का विकास करते रहें।

मुनि सुमतिजी क्षेत्र की अच्छी संभाल करते रहें। दीक्षार्थी निर्माण में क्या प्रगति हुई है? जानकारी चाहिए।

30.2.2012. जसोल। **आचार्य महाश्रमण**

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

❖ महाश्रमणी साध्वीप्रमुखाश्री कनकप्रभाजी का संदेश ❖

अर्हम्

मुनिश्री ताराचन्दजी स्वामी हमारे धर्मसंघ के एक समर्पित साधक युवा संत है। साधना की पहली कसौटी है–अपने प्रति, लक्ष्य के प्रति, गुरु के प्रति और लक्ष्य-प्राप्ति में सहयोगी साधनों के प्रति सर्वात्मना समर्पण।

मुनिश्री ताराचन्दजी इस कसौटी पर खरे उतरे हैं। अपने समर्पण भाव के बल पर आपने गुरु का अगाध विश्वास अर्जित किया हैं। समय-समय पर गुरुदेव के मुखारविंद से आपके विषय में महत्त्वपूर्ण शब्द सुनने को मिलते हैं। उस समय ऐसा प्रतीत होता है कि क्षेत्रीय दृष्टि से शिष्य कितना ही दूर चला जाए, आत्मीय संबंधों की सीमा में गुरु उसके अंतर्मन में विराजमान रहते हैं और गुरु के अन्त:करण में शिष्य का स्थान होता है।

मुनिश्री ताराचन्दजी अपने सहयोगी मुनि सुमतिकुमारजी के साथ सुदूर प्रदेशों में प्रभावी ढ़ंग से काम कर रहे हैं। गौहाटी में हुए आपके चातुर्मास्य और मर्यादा महोत्सव की समाज में अच्छी सुवास है। आप अपने स्वास्थ्य के प्रति जागरूक रहते हुए इसी तरह धर्मशासन की प्रभावना करते रहें।

गुरुदेव का आशीर्वाद और ऊर्जा आपके साथ है। सरदारशहर में गुरुदेव का यह प्रवास अनिर्वचनीय रहा। शब्दों में बांधकर उसके महत्त्व को सीमित क्यों किया जाए? उधर आने वाले श्रावक-श्राविकाएं आपको इस संबंध में विस्तार से बता सकेंगे।

26.4.1993. सरदारशहर। **कनकप्रभा**

(कोकिलादेवी कुंडलिया (नौगांव) द्वारा प्राप्त)

❖ ❖ ❖

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

तृतीय – परिशिष्ट

तप-तालिका तथा यात्रा किलोमीटर में

❖ विक्रम संवत् 2000 से 2073 तक की तप तालिका–

उपवास	–	415,
बेला	–	9,
तेला	–	10,
चोला	–	1,
पंचोला	-	1,
सात	-	1,
आठ	-	1,
दस पच्चक्खाण	–	5 ,
आयंबिल का तेला	–	1,

एकासन, छः विगय वर्जन भी हुए। पांच विगय वर्जन प्रतिवर्ष लगभग पांच मास।

❖ यात्रा-विक्रम संवत् 2000 से 2073 तक-लगभग 46 हजार 650 किलोमीटर।

❖ ज्ञातव्य-सन् 2014 , विक्रम संवत् 2071 से सह-अग्रणी से स्वतंत्र अग्रणी तथा व्यवस्थापक मुनि सुमतिकुमारजी हैं तथा इनके सहयोगी संत हैं–मुनि देवार्यकुमारजी, मुनि आदित्यकुमारजी।

❖ आचार्यश्री महाश्रमणजी के महनीय अनुग्रह से मैं अग्रगण्य के दायित्व से मुक्त हुआ। 13 अप्रैल, 2014 , विक्रम संवत् 2071, चैत्र शुक्ला तेरस, रविवार से अग्रणी मुनि सुमतिकुमारजी के व्यवस्थापकत्व में श्री समवसरण, सरदारशहर में एकान्त प्रवास तथा आत्मसाधना के विविध प्रयोग प्रारंभ किए, जो वर्तमान में भी गतिशील हैं।

❖ ❖ ❖

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

चातुर्मासिक स्थल

क्रमांक	विक्रम संवत्	सन्	चातुर्मासिक स्थल	सान्निध्य/सहयोगी	संत
1.	2000	1943	गंगाशहर	आचार्यश्री तुलसी	
2.	2001	1944	सुजानगढ़	आचार्यश्री तुलसी	
3.	2002	1945	श्रीडूंगरगढ़	आचार्यश्री तुलसी	
4.	2003	1946	राजगढ़	आचार्यश्री तुलसी	
5.	2004	1947	रतनगढ़	आचार्यश्री तुलसी	
6.	2005	1948	छापर	आचार्यश्री तुलसी	
7.	2006	1949	दिल्ली	सेवाभावी मुनिश्री चम्पालालजी (भाईजी महाराज)	9
8.	2007	1950	भिवानी	सेवाभावी मुनिश्री चम्पालालजी	
9.	2008	1951	दिल्ली	आचार्यश्री तुलसी	
10.	2009	1952	राजनगर	मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) (मुनिश्री सुमेरमलजी 'सुदर्शन', मुनि ताराचन्द)	3
11.	2010	1953	ध्रांगध्रा (सौराष्ट्र)	मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) (मुनिश्री सुमेरमलजी 'सुदर्शन', मुनि ताराचन्द)	3
12.	2011	1954	जामनगर	मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) (मुनिश्री सुमेरमलजी 'सुदर्शन', मुनि ताराचन्द)	3
13.	2012	1955	पूना	मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) (मुनिश्री सुमेरमलजी 'सुदर्शन', मुनि ताराचन्द)	3
14.	2013	1956	जोधपुर	मुनिश्री मीठालालजी (उदयपुर) (मुनिश्री सुमेरमलजी 'सुदर्शन', मुनि ताराचन्द)	3
15.	2014	1957	सुजानगढ़	आचार्यश्री तुलसी	
16.	2015	1958	छोटी खाटू	मुनिश्री शुभकरणजी (मुनि ताराचन्द, मुनि हर्षवर्धन)	3
17.	2016	1959	रासीसर	मुनिश्री शुभकरणजी (मुनि ताराचन्द)	2
18.	2017	1960	राजनगर	आचार्यश्री तुलसी (तेरापंथ द्विशताब्दी वर्ष का चातुर्मास)	
19.	2018	1961	गोगुन्दा	मुनिश्री मीठालालजी (मुनि ताराचन्द, मुनि विजयराज)	3
20.	2019	1962	उदयपुर	आचार्यश्री तुलसी	
21.	2020	1963	अहमदाबाद	मुनिश्री मीठालालजी (मुनि ताराचन्द, मुनि रवीन्द्रकुमार)	3
22.	2021	1964	अहमदाबाद (शाहीबाग)	मुनिश्री मीठालालजी (मुनि ताराचन्द, मुनि रवीन्द्रकुमार)	3
23.	2022	1965	राजनगर	मुनिश्री मीठालालजी (मुनि ताराचन्द, मुनि रवीन्द्रकुमार)	3

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

24.	2023	1966	सरदारशहर (दूगड़ गेस्ट हाउस)	मुनिश्री मीठालालजी (मुनि ताराचन्द, मुनि रवीन्द्रकुमार)	3
25.	2024	1967	चूरू	मुनिश्री मीठालालजी (संत पूर्ववत्) मुनिश्री दुलीचन्दजी (मुनिश्री चन्दनमलजी, मुनि चिदानन्दजी)	6
26.	2025	1968	रासीसर	मुनि ताराचन्द (मुनि रुघलालजी, मुनि चिदानन्दजी) (गुरुदेव के निर्देश से माताजी को सेवा कराने के लिए)	3
27.	2026	1969	सरदारशहर	मुनिश्री मीठालालजी, मुनिश्री दुलीचन्दजी (मुनि चन्दनमलजी, मुनि ताराचन्दजी, मुनि रवीन्द्रकुमारजी)	5
28.	2027	1970	सरदारशहर (दूगड़ गेस्ट हाउस)	मुनिश्री मीठालालजी, मुनिश्री मानमलजी (मुनि ताराचन्दजी, मुनि रवीन्द्रकुमारजी)	4
29.	2028	1971	सरदारशहर (दूगड़ गेस्ट हाउस)	मुनिश्री मीठालालजी (मुनि ताराचन्दजी, मुनि रवीन्द्रकुमारजी)	3
30.	2029	1972	सरदारशहर (दूगड़ गेस्ट हाउस)	मुनिश्री मीठालालजी (मुनि सुमेरमलजी 'सुदर्शन', मुनि ताराचन्दजी)	3
31.	2030	1973	हिसार	आचार्यश्री तुलसी	
32.	2031	1974	नई दिल्ली	आचार्यश्री तुलसी	
33.	2032	1975	जयपुर	आचार्यश्री तुलसी	
34.	2033	1976	सरदारशहर	आचार्यश्री तुलसी	
35.	2034	1977	जोधपुर	मुनि ताराचन्द (मुनि मिश्रीलालजी, मुनि विमलकुमारजी)	3
36.	2035	1978	अजमेर	मुनि ताराचन्द (मुनि मिश्रीलालजी, मुनि विमलकुमारजी)	3
37.	2036	1979	पेटलावद (म.प्र.)	मुनि ताराचन्द (मुनि मिश्रीलालजी, मुनि सुमतिकुमारजी)	3
38.	2037	1980	रतलाम	मुनि ताराचन्द (मुनि मिश्रीलालजी, मुनि सुमतिकुमारजी)	3
39.	2038	1981	भीनासर (बीकानेर)	मुनि ताराचन्द (वृद्ध संतों की सेवा में)	6
40.	2039	1982	लुधियाना (पंजाब)	मुनि ताराचन्द (मुनि मिश्रीलालजी, मुनि सुमतिकुमारजी)	3
41.	2040	1983	धूरी (पंजाब)	मुनि ताराचन्द (मुनि मिश्रीलालजी, मुनि सुमतिकुमारजी)	3
42.	2041	1984	अहमदगढ़ मंडी	मुनि ताराचन्द (मुनि मिश्रीलालजी, मुनि सुमतिकुमारजी)	3
43.	2042	1985	आसींद (मेवाड़)	मुनि ताराचन्द (मुनि मिश्रीलालजी, मुनि सुमतिकुमारजी)	3

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

44.	2043	1986	भुज (कच्छ-गुजरात)	मुनि ताराचन्द (मुनि मिश्रीलालजी, मुनि सुमतिकुमारजी)	3
45.	2044	1987	रापर (कच्छ-गुजरात)	मुनि ताराचन्द (मुनि मिश्रीलालजी, मुनि सुमतिकुमारजी)	3
46.	2045	1988	गांधीधाम (कच्छ-गुजरात)	मुनि ताराचन्द (मुनि मिश्रीलालजी, मुनि सुमतिकुमारजी)	3
47.	2046	1989	लाडनूं	आचार्यश्री तुलसी (योगक्षेम वर्ष)	
48.	2047	1990	गुलाबबाग (बिहार)	मुनि ताराचन्द (मुनि सुमतिकुमारजी, मुनि अर्हत्कुमारजी)	3
49.	2048	1991	बिलासीपाड़ा	मुनि ताराचन्द (मुनि सुमतिकुमारजी)	2
50.	2049	1992	गुवाहाटी	मुनि ताराचन्द (मुनि सुमतिकुमारजी)	2
51.	2050	1993	तेजपुर	मुनि ताराचन्द (मुनि सुमतिकुमारजी)	2
52.	2051	1994	नौगांव	मुनि ताराचन्द (मुनि सुमतिकुमारजी)	2
53.	2052	1995	विराटनगर (नेपाल)	मुनि ताराचन्द (मुनि सुमतिकुमारजी)	2
54.	2053	1996	जयपुर	मुनि ताराचन्द (मुनि सुमतिकुमारजी, मुनि रजनीशकुमारजी)	3
55.	2054	1997	गंगाशहर	आचार्यश्री महाप्रज्ञजी (गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी का महाप्रयाण)	
56.	2055	1998	धूलिया (महाराष्ट्र)	मुनि ताराचन्द (मुनि सुमतिकुमारजी, मुनि देवार्यकुमारजी)	3
57.	2056	1999	शहादा (महाराष्ट्र)	मुनि ताराचन्द (मुनि सुमतिकुमारजी, मुनि देवार्यकुमारजी)	3
58.	2057	2000	बीदासर	मुनि ताराचन्द (मुनि सुमतिकुमारजी, मुनि देवार्यकुमारजी)	3
59.	2058	2001	राजनगर (मेवाड़)	मुनि ताराचन्द (मुनि सुमतिकुमारजी, मुनि पदमकुमारजी) (गुरु आज्ञा से देवार्यमुनि चतुर्मास के लिए सम्बोधि गए।)	3
60.	2059	2002	गोगुंदा (मोटागांव)	मुनि ताराचन्द, मुनि सुमतिकुमारजी, मुनि दर्शनकुमारजी, (मुनि देवार्यकुमारजी)	4
61.	2060	2003	बेंगलुरू	मुनि ताराचन्द, मुनि सुमतिकुमारजी (मुनि देवार्यकुमारजी)	3
62.	2061	2004	चेन्नई	मुनि ताराचन्द, मुनि सुमतिकुमारजी (मुनि देवार्यकुमारजी)	3

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org

63.	2062	2005	पल्लावरम्	मुनि ताराचन्द, मुनि सुमतिकुमारजी (मुनि देवार्यकुमारजी)	3
64.	2063	2006	मुम्बई	मुनि ताराचन्द, मुनि सुमतिकुमारजी (मुनि देवार्यकुमारजी)	3
65.	2064	2007	लाडनूं (जै.वि.भा.) सेवाकेन्द्र	मुनि ताराचन्द, मुनि सुमतिकुमारजी (वृद्ध संत-4, मुनि देवार्यकुमारजी, मुनि आदित्यकुमारजी) (2 मई, 2007 को गुरु आज्ञा से मुमुक्षु आलोक– मुनि आदित्यकुमारजी को दीक्षा प्रदान की)	8
66.	2065	2008	उदयपुर	शासन गौरव मुनि ताराचन्द, मुनि सुमतिकुमारजी (सन्त-4 पूर्ववत्) 'शासन गौरव' मुनि मधुकरजी (सन्त-6)	10
67.	2066	2009	नई दिल्ली-शाहदरा	मुनि ताराचन्द, मुनि सुमतिकुमारजी (मुनि देवार्यकुमारजी, मुनि आदित्यकुमारजी)	4
68.	2067	2010	नई दिल्ली पीतमपुरा 2 मास शास्त्रीनगर 1 मास मानसरोवर गार्डन 1 मास	मुनि ताराचन्द, मुनि सुमतिकुमारजी (मुनि देवार्यकुमारजी, मुनि आदित्यकुमारजी)	4
69.	2068	2011	छापर (ताल) सेवाकेन्द्र	मुनि ताराचन्द, मुनि सुमतिकुमारजी (वृद्ध संत-4, मुनि देवार्यकुमारजी, मुनि आदित्यकुमारजी)	8
70.	2069	2012	कांकरोली (राजसमंद)	मुनि ताराचन्द, मुनि सुमतिकुमारजी (मुनि देवार्यकुमारजी, मुनि आदित्यकुमारजी)	4
71.	2070	2013	आमेट (मेवाड़)	मुनि ताराचन्द, मुनि सुमतिकुमारजी (मुनि देवार्यकुमारजी, मुनि आदित्यकुमारजी)	4
72.	2071	2014	सरदारशहर (श्री समवसरण)	मुनि ताराचन्द, मुनि सुमतिकुमारजी (मुनि देवार्यकुमारजी, मुनि आदित्यकुमारजी) (महावीर जयंती से एकांतवास प्रारंभ)	4
73.	2072	2015	सरदारशहर (तेरापंथ भवन)	मुनि ताराचन्द, मुनि सुमतिकुमारजी (मुनि देवार्यकुमारजी, मुनि आदित्यकुमारजी)	4
74.	2073	2016	सरदारशहर (तेरापंथ भवन)	मुनि ताराचन्द, मुनि सुमतिकुमारजी (मुनि देवार्यकुमारजी, मुनि आदित्यकुमारजी)	4

❖ ❖ ❖

Jain Vishva Bharati For Private & Personal Use Only https://books.jvbharati.org